स्वतंत्रता दिवस विशेषांक

ISSN-0971-8397

विकास को समर्पित मासिक

योजना

वर्ष : 50 • अंक : 5 अगस्त 2006 मूल्य : 15 रुपये

11वीं पंचवर्षीय योजना में कृषि नीति

कृषि का नवीकरण : एम.एस. स्वामीनाथन

भारतीय कृषि-समस्याएं और संभावनाएं : वाई.के. अलघ

प्रधानमंत्री का विदर्भ पैकेज़

क्या है मुद्रास्फिति?

कृषि

हमारे नये प्रकाशन

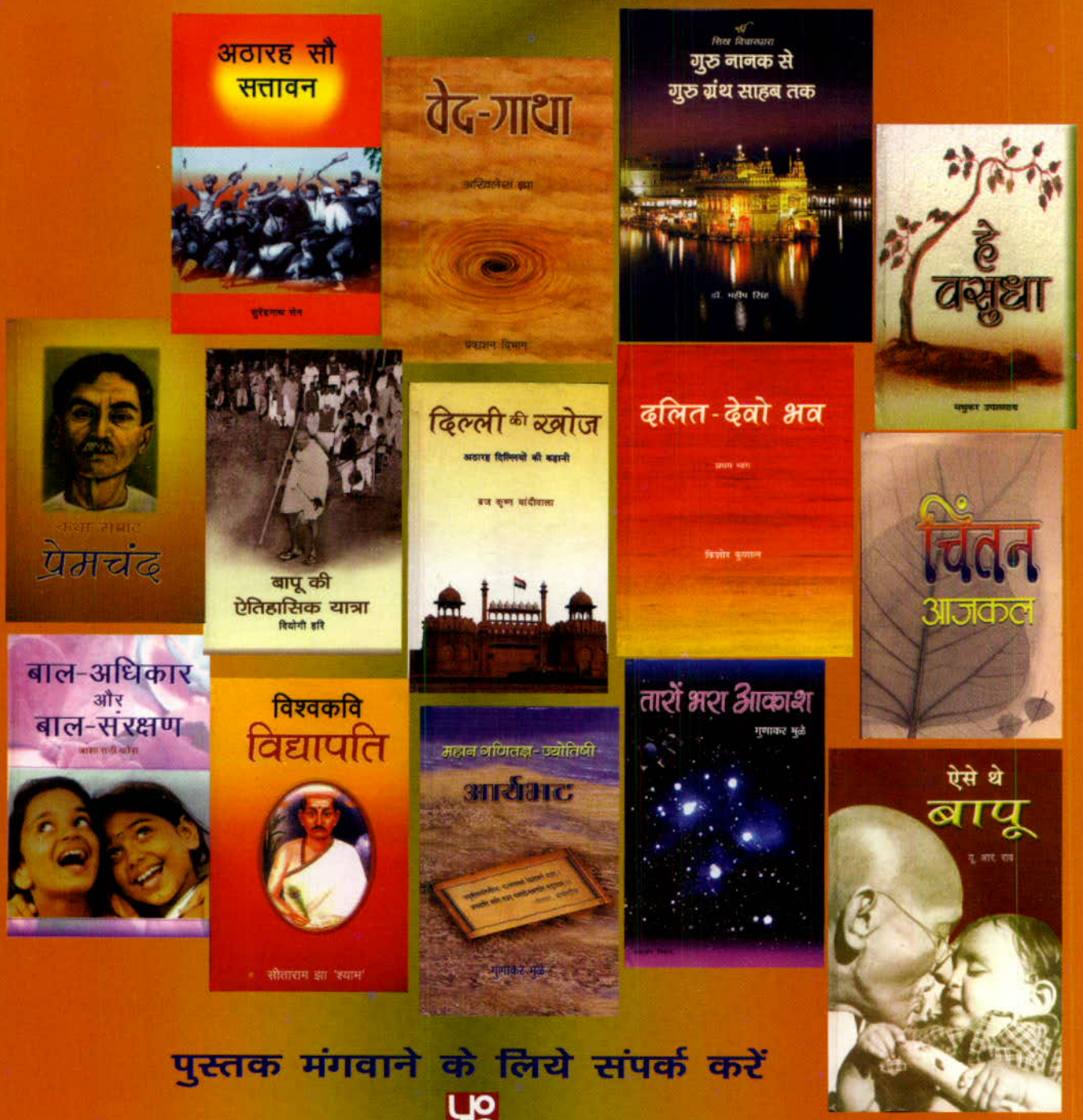

पुस्तक मंगवाने के लिये संपर्क करें

व्यापार व्यवस्थापक

प्रकाशन विभाग

सूचना भवन, सी.जी.ओ.काम्प्लेक्स, लोदी रोड, नई दिल्ली 110003

फोन:2436 7260

योजना

वर्ष : 50 अंक 5 अगस्त 2006 श्रावण-भाद्रपद, शक संवत 1928 कुल पृष्ठ : 84

प्रधान संपादक
अनुराग मिश्रा

सहायक संपादक
राकेशरेणु

उप संपादक
रेमी कुमारी

संपादकीय कार्यालय
कमरा नं. 538, योजना भवन, संसद मार्ग,
नयी दिल्ली-110 001
दूरभाष : 23096738, 23717910
23096666/2508, 2511
टेलीफैक्स : 23359578
ई-मेल : yojana@techpilgrim.com
www.publicationsdivision.nic.in
a) dpd@nic.in
b) dpd@hub.nic.in

संयुक्त निदेशक (उत्पादन)
एन.सी. मजूमदार

व्यापार व्यवस्थापक (प्रसार एवं विज्ञापन)
जगदीश प्रसाद
दूरभाष : 26100207, 26105590
फैक्स : 26175516

आवरण - **मंजुला पटेल**

इस अंक में

संपादकीय	-	3
11वीं योजना में कृषि संबंधी नीतियां	-	5
कृषि का नवीकरण और कृषि जनित समृद्धि	एम.एस. स्वामीनाथन	7
भारतीय कृषि : समस्याएं एवं संभावनाएं	योगेन्द्र के. अलघ	17
विदर्भ के लिये 3,750 करोड़ रुपये का राहत पैकेज़	सी.एस. राव	25
किसानों द्वारा आत्महत्या : कारण और निवारण	अक्किनेनी भवानी प्रसाद	27
लोक सामाजिक सुरक्षा कोष	-	32
मध्यावधि समीक्षा में कृषि संबंधी सिफ़ारिशें	-	33
आर्थिक सुधार एवं कृषि व्यापार नीति	बद्री बिशाल त्रिपाठी	35
कृषि उत्पादन बढ़ाने में सिंचाई का महत्व	सूरिन्दर सूद	39
सहकारी ऋण संस्थाओं को पुनर्जीवन	वाई.एस.पी. थोराट	43
आर्थिक सुधारों के दौर में कृषि	सुरेश चंद्र बाबू	47
कृषि क्षेत्र का संकट	नवीन पंत	53
ग्रामीण बुनियादी ढांचा : ग्रामीण विकास के रुझान वाले क्षेत्र	पवन कुमार	55
शुष्क खेती : मुद्दे एवं रणनीतियां	वाई.एस. रामकृष्णन बी. वेंकटेश्वरलू	59
दूसरी हरित क्रांति की पहल	विजय ढौंडियाल	63
ट्यूबवेलों के लिये मुफ़्त बिजली : एक चेतावनी	-	64
सूचना प्रौद्योगिकी : एक उदीयमान उद्योग	-	67
झरोख़ा जम्मू-कश्मीर का	-	69
क्या है मुद्रास्फीति	-	72
अनुकरणीय पहल : शांति के लिये प्रौद्योगिकी	अनिल पी. जोशी	73
फिर खुला नाथू-ला	सुरेश अवस्थी	75
ख़बरों में	-	78
नये प्रकाशन : इंसानियत के अस्तित्व की अमर कथा	अंशु गुप्ता	79

योजना हिन्दी के अतिरिक्त असमिया, बांग्ला, अंग्रेजी, गुजराती, कन्नड़, मलयालम, मराठी, तमिल, उड़िया, पंजाबी, तेलुगु तथा उर्दू भाषाओं में भी प्रकाशित की जाती है। पत्रिका मंगवाने हेतु, नयी सदस्यता, नवीकरण, पुराने अंकों की प्राप्ति एवं एजेंसी आदि के लिये मनीआर्डर/डिमांड ड्राफ्ट/पोस्टल आर्डर 'निदेशक, प्रकाशन विभाग' के नाम से बनवा कर निम्न पते पर भेजें :

व्यापार प्रबंधक (प्रसार एवं विज्ञापन), प्रकाशन विभाग, ईस्ट ब्लाक IV, लेवल VII, आर.के. पुरम, नयी दिल्ली-110 066 टेलीफोन : 26100207, 26105590

चंदे की दरें : वार्षिक : 70 रु. द्विवार्षिक : 135 रु.; त्रैवार्षिक : 190 रु.; विदेशों में वार्षिक दरें : पड़ोसी देश : 500 रु.; यूरोपीय एवं अन्य देश : 700 रु.

'योजना' में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। ज़रूरी नहीं कि ये लेखक भारत सरकार के जिन मंत्रालयों, विभागों अथवा संगठनों से संबद्ध हैं, उनका भी यही दृष्टिकोण हो। पत्रिका में प्रकाशित विज्ञापनों की विषयवस्तु के लिये 'योजना' उत्तरदायी नहीं है।

आपकी राय

जल संरक्षण पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता

योजना का जून 2006 का अंक पढ़ा। निकट भविष्य में भयानक जल संकट की आशंका मात्र से रोंगटे खड़े हो गए। यदि हम लोग जल संरक्षण के प्रति जागरूक नहीं हुए तो निकट भविष्य में इस समस्या से हमारा सामना होगा।

वर्ष 1901 में प्रतिव्यक्ति पानी की उपलब्धता 8,192 घनमीटर थी, जो 2001 में 1,869 घनमीटर पर आकर सीमित हो गई है। अनुमान लगाया गया है कि वर्ष 2050 में यह 1,235 घनमीटर प्रतिव्यक्ति के लिये बचेगा क्योंकि जनसंख्या को हम तीव्र गति से बढ़ा रहे हैं। 2001 में हमारी जनसंख्या 102.7 करोड़ है, जो 2050 तक 158.1 करोड़ तक पहुंचने का अनुमान है।

अत: जल संकट से निपटने के लिये भारत के केंद्र सरकार, राज्य सरकारों एवं नागरिकों को आवश्यक कदम उठाना चाहिए। बढ़ती जनसंख्या की वृद्धि दर को घटाकर, जल के अनावश्यक दुरुपयोग को रोककर तथा जल संरक्षण पर विशेष ध्यान देकर हम जल संकट से निपट सकते हैं।

जल संरक्षण बहुत ज़रूरी है, क्योंकि जल ही जीवन है।

अमित सिंह दानी, जमरावां, फतेहपुर, उ.प्र.

नियोजन प्रक्रिया में सुधार ज़रूरी

योजना का जून 06 अंक हस्तगत हुआ। आवरण पृष्ठ पर नेहरूजी का स्पष्ट तथा संतुलित कथन अकेले ही पूरे अंक का नेतृत्व कर रहा था। हर अंक को इसी तरह से नये-नये प्रयोगों द्वारा प्रभावी बनाए रखें।

सरकार की एक कमी स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है, वह यह कि जब सरकार किसी एक दिशा में विकास तथा पुनरुत्थान पर ज़ोर देती है तो वह प्रयास अधूरा ही रहता है अथवा दूसरे विषय पिछड़ जाते हैं। इस तरह से राष्ट्र का कभी भी संतुलित विकास नहीं हो सकता। अत: नियोजन में सुधार परमावश्यक है।

हेमंत सिंह, सेंट्रल हिंदू स्कूल, वाराणसी

वर्षा जल संरक्षण में भागीदार बनें

योजना का जून अंक पढ़ा। जल प्रबंधन की चुनौतियां और समाधान सारगर्भित है। बड़ी विचित्र बात है कि जिस जल के लिये हम हाहाकार मचाए हुए हैं और आगामी पीढ़ी के लिये हाय-तौबा मचा रहे हैं, वह मात्र वर्षा के जल को संरक्षित करके ही दूर किया जा सकता है। लेकिन न तो सरकार चेतती दिखती है न ही जनसामान्य की इसमें दिलचस्पी दिखती है। अफसोस वाली बात तो यह है कि यह उदासीनता कब भयावह रूप ले लेगी, लोगों को पता भी नहीं चल पाएगा।

बेल के गुणों से परिचित कराकर आपने परोपकार किया है। ग्रामीण क्षेत्रों में लोग अपेक्षाकृत रूप से बेल में उतनी दिलचस्पी नहीं लेते जितनी मात्रा में गुणों से लैस यह फल है।

मिथिलेश कुमार, भागलपुर, बिहार

आपदा प्रबंधन ज़रूरी

मई, 06 की *योजना* को 'आपदाप्रबंधन' पर केंद्रित करने के लिये *योजना* टीम को कोटि-कोटि धन्यवाद। वर्तमान समय में आपदाप्रबंधन बेहद ज़रूरी तथा विचारनीय विषय है। यह बिल्कुल स्पष्ट है कि मानवजनित तथा प्राकृतिक आपदाएं किस तरह से देश में तबाही मचाती हैं। विकसित देश तो अपनी मजबूत अर्थव्यवस्था तथा उपलब्ध संसाधनों के बल पर इससे उबर जाते हैं। पर, एक तो गरीब तथा विकाशसील देशों की अर्थव्यवस्था पहले से ही कमज़ोर होती है, दूसरे आपदाएं उसकी जड़ें हिला देती हैं। अत: आपदा विकास-पथ पर एक बड़ा रोड़ा है। इन सब विपरीत हालातों से बचने के लिये 'आपदा-प्रबंधन' पर ध्यान देना बेहद ज़रूरी है। इसका अन्य कोई विकल्प नहीं है।

शशिनाथ मिश्रा, वाराणसी

सावधान करता अंक

आपदा प्रबंधन को केंद्र में लाने के लिये *योजना* के मई 06, अंक द्वारा भारत में आपदा प्रबंधन की संरचना के बारे में कई नवीन जानकारियां उपलब्ध हुईं। 'कोबे से कच्छ तक' पढ़कर लगा कि विकासशील देश ही नहीं विकसित देश भी आपदा प्रबंधन में अभी मीलों पीछे हैं। वस्तुत: प्राकृतिक आपदाओं से बचने के लिये यह ज़रूरी है कि हम आरंभिक स्तर से ही इसके प्रति जागरूक रहें। निस्संदेह आपदा प्रबंधन को स्कूली पाठ्यक्रम में शामिल करने से उसके सकारात्मक नतीजे आएंगे। आवश्यकता इस बात की भी है कि बदलते हुए युग में हम भी आपदा प्रबंधन की अपनी सदियों पुरानी परंपरागत शैली में बदलाव लाएं तथा इसमें अत्याधुनिक तकनीक एवं व्यावसायिक दृष्टिकोण को पर्याप्त जगह दें। रोज़गार के घटते अवसरों को देखते हुए इसमें रोज़गार की भी अच्छी संभावनाएं दिख रही हैं।

बिहार के चीनी उद्योग पर आनंद किशोर का शोधपूर्ण आलेख पढ़कर ज्ञात हुआ कि आखिर बिहार दिन-प्रतिदिन और पीछे क्यों चला जा रहा है। वस्तुत: बिहार की राजनीति वहां के जातिगत दांव-पेंच में ही इतनी बुरी तरह उलझी हुई है कि सरकार निश्चिंत होकर विकास के बारे में सोच नहीं पाती। खैर वाहिदा, प्रिज्म को इतिहास रचने एवं *योजना* को एक अच्छे अंक के लिये बधाई।

बिंदु विकास ओझा, शिवकुटी, इलाहाबाद

संपादकीय

दसवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान कृषि की विकास दर 2 प्रतिशत से भी कम हो जाने का अनुमान है जबकि इस योजनाकाल में इसके 3.5 प्रतिशत की दर से बढ़ने की संभावना जताई गई थी। कृषि क्षेत्र के धीमे विकास के फलस्वरूप समूची अर्थव्यवस्था का विकास कम हो गया है। कृषि क्षेत्र को अन्य आर्थिक-व्यापारिक प्रकल्पों में होने वाली तीव्र प्रगति, विश्व व्यापार संगठन के विनियमों तथा ग्रामीण इलाकों में कम होती प्रतिव्यक्ति आय से चोट पहुंची है।

कृषि क्षेत्र पर नये सिरे से विचार करना अब नितांत ज़रूरी हो गया है। इस क्षेत्र के पुनर्गठन के बारे में सरकार के पास क्रमशः एम.एस. स्वामीनाथन तथा आर.ए. माशेलकर की दो रिपोर्टें हैं। प्रो. एम.एस. स्वामीनाथन की अध्यक्षता वाली राष्ट्रीय कृषक आयोग ने कृषि के सर्वांगीण विकास के लिये किसानों से संबंधित एक व्यापक राष्ट्रीय नीति की अनुशंसा की है जिसमें उन्हें सलाह, तकनीक, कृषि ऋण तथा विपणन सेवाएं देना शामिल हैं। आयोग ने इस तथ्य को रेखांकित किया है कि जोतों का औसत आकार छोटा हो गया है, जिससे लागत-जोखिम वापसी संरचना उल्टी हो गई है। इसने ग्रामीण भारत में भूमि-सुधार के 'अधूरे कार्यक्रम' को पूरा करने तथा व्यापक संपत्ति एवं कृषिगत सुधारों का आह्वान किया है।

एक अन्य महत्वपूर्ण क्षेत्र कृषि का विविधीकरण है। कृषि को अनाज उत्पादन तक ही सीमित रखने की बजाय इसका बागवानी, पुष्प उत्पादन, मवेशी पालन, मत्स्य पालन तथा मुर्गीपालन जैस अनाजों से इतर व्यवसायों में विविधीकरण आवश्यक है। चूंकि उपर्युक्त उत्पाद शीघ्र ख़राब होने वाले हैं, इसलिये इनके लिये संरक्षण-प्रौद्योगिकी और विपणन की ज़रूरत पड़ती है।

11वीं पंचवर्षीय योजना (2007-12) के दृष्टिकोण पत्र के प्रारूप में गिरते लाभांश, सिंचाई एवं वाटर-शेड विकास आदि में सार्वजनिक निवेश की दर बढ़ाने, किसानों को ऋण की अपर्याप्त उपलब्धता तथा सहकारी ऋण प्रणाली को पुनर्गठित करने की आवश्यकता पर बल दिया गया है।

1993 से 2003 के बीच दस सालों में भारत में एक लाख से भी अधिक किसानों ने आत्महत्या कर ली है। आत्महत्याएं आज भी अविराम गति से जारी हैं। इंदिरा गांधी विकास अनुसंधान संस्थान, मुंबई के एक दल ने विशेष रूप से महाराष्ट्र के किसानों के संकटों का विश्लेषण किया है। अब नये इलाकों और नये फसलों के लिये भी आत्महत्याएं की जा रही हैं। कपास के बाद अब महाराष्ट्र के धान एवं प्याज उत्पादक क्षेत्रों में भी आत्महत्या के मामले प्रकाश में आ रहे हैं। उक्त अध्ययन के अनुसार, राज्य में आत्महत्या से होने वाली मौतों की दर 1995 मे प्रति एक लाख व्यक्ति पर 17 थी जो 2004 में बढ़कर 53 हो गई है।

इस समस्या के निदान के लिये प्रस्तुत किसी भी पैकेज़ को द्विआयामी होना होगा। पहले, यह राहत पहुंचाए। लेकिन अधिक ज़रूरी दीर्घकालिक निदान है जिसके लिये संरचनात्मक परिवर्तन अपेक्षित होंगे। ऋण राहत, बकाये ब्याज की माफी तथा बेहतर ऋण उपलब्धता पर आधारित राहत पैकेज़ से कृषक समुदाय को तात्कालिक राहत मिलेगी। लेकिन मूल मुद्दा है इस समस्या को दोबारा सर उठाने से रोकना। अध्ययनों से पता चलता है कि किसानों द्वारा सही फसल का चुनाव नहीं किया जाता। वे उन फसलों की खेती करते हैं जो उनके खेतों के लिये पूर्णरूपेण उपयुक्त नहीं होते। जिन फसलों को अधिक पानी की दरकार होती है उनकी खेती अल्प जल उपलब्धता वाले इलाकों में की जाती है-जिस वजह से फसलों से जुड़ा जोखिम बढ़ जाता है। किसानों द्वारा आत्महत्या की प्रमुख वजह यही रही है। किसानों की आत्महत्या पर गठित योजना आयोग के पैनल ने सरकार को कहा है कि वह किसानों को असिंचित इलाकों में बीटी कॉटन की खेती न करने की सलाह दें। इस समस्या का दीर्घकालिक निदान ऐसी नीतियों में निहित है जिनसे किसानों को अधिक लाभदायी और कम जोखिम वाली फसलों की खेती के लिये प्रेरित कर सके। साथ ही, बेहतर सिंचाई, बुनियादी संरचना और विपणन सुविधाएं उपलब्ध कराई जाएं। इस पैनल ने संकटज़दा किसानों को घरेलू ज़रूरतों के लिये तत्काल ऋण उपलब्ध करा उन्हें संकट से उबारने के लिये एक जन सामाजिक सुरक्षा कोष बनाने का सुझाव भी दिया है।

ज़रूरत किसानों और कृषिकर्म के गौरव और विश्वास को फिर से बहाल करने की है। ❑

MAINS COURSE 2006 — IAS/IFS — FOUNDATION COURSE 2007

अनुज अग्रवाल और नीरज कुशवाहा के निर्देशन में

स्तत सफलता के सुनहरे दस वर्ष

"नई पहल से नेतृत्व तक"

10th Year

-Career Plus®-

EDUCATIONAL SOCIETY

कुशल विषय विशेषज्ञों द्वारा तैयार परिक्षोन्मुख सफल रणनीति

14 Results out of 50 in IFS 2005 and 42 Result in IAS 2005

TOPPER'S OF IAS-2005

Pali, Geo.	Physics, Maths	Socio. P. A.	Civil & Math	Sanskrit, Geo.	Sanskrit, Geo.	Sanskrit, Geo.
MANOJ JAIN	PURU GUPTA	AKSHAT GUPTA	ROOPESH THAKUR	SHARAD	Km. RUCHI	AJAY
Pali 'Litt'	INTERVIEW	INTERVIEW	Mathematics	Sanskrit, Geo.	Sanskrit, Geo.	Sanskrit
1st Rank in Hindi Med.	All India	G.S., Socio, P.A. (Postal Course)	All India	All India	All India	All India
All India 15th Rank	18th Rank	All India 35th Rank	44th Rank	46th Rank	67th Rank	90th Rank

In Total 42 Selection Confirmed so far

SUBJECTS AVAILABLE
सामान्य अध्ययन

अर्थशास्त्र | भूगोल | इतिहास
समाजशास्त्र | वाणिज्य | लोकप्रशासन
दर्शन शास्त्र | मनोविज्ञान | राजनीति विज्ञान
संस्कृत "साहित्य" | पालि साहित्य
वनस्पति विज्ञान | जन्तु विज्ञान | कृषि विज्ञान
भौतिक विज्ञान | रसायन विज्ञान | गणित

"अगर आप हमारे साथ नहीं तो सफलता के पास नहीं"

NORTH DELHI	H.O. 302/A-37,38,39 Ansal Building, Comm. Complex, Dr. Mukherjee Nagar, Delhi-9, Ph. : 011-27652829, 27654588
SOUTH DELHI	28/B/4, Jia Sarai, Near I.I.T. Main Gate, Hauz Khas, New Delhi-16, Ph. : 011--26563175, 09891086435
JAIPUR	C-15, Bajaj Nagar, Hutch Tower Building, Jaipur, Ph. #0141-2704855, 09414317088
LUCKNOW	B-941, Sec-A, MahaNagar, Gole Market Chauraha, Lucknow, Ph. 0522-5545335,09235638744
OTHER BRANCH	NOIDA CENTRE - 09811424443 ROHINI CENTRE - 09811651353
Centralized Enquiry 09811069629	For Postal Course & Other Details write with Rs. 50/- D.D. in favour of Career Plus Educational Society Visit us at : www.careerplusgroup.com • E-mail : careerplus@rediffmail.com

POSTAL COURSES
For IAS Prelims Rs. 2000/- Per Sub.
For IAS Mains Rs. 3000/- Per Sub.
For IFS Each Sub.Rs.3000/-
G.S. & English Rs. 2000/-

YH-8/6/08

11वीं योजना में कृषि संबंधी नीतियां

ग्यारहवीं योजना के दृष्टिकोण पत्र की संकल्पना के अनुरूप सकल घरेलू उत्पाद (सघउ) में चार प्रतिशत की वृद्धि आसान लक्ष्य नहीं है। वानिकी और मत्स्यपालन सहित दसवीं योजना के पहले तीन वर्षों के दौरान कृषिगत सघउ में वास्तविक वृद्धि महज 1 प्रतिशत थी और यदि वर्ष 2005-06 तथा 2006-07 के लिये बहुत ही गुलाबी तस्वीर पेश की जाए, तो भी पांच वर्ष की कुल अवधि के लिये यह अनुमान 2 प्रतिशत के भीतर ही रह जाएगा। इस तरह अगली योजना में प्रस्तुत की गई चुनौती दसवीं योजना के दौरान हासिल वृद्धिदर के दोगुने भी से अधिक है। इसे हासिल करने के लिये मांग तथा आपूर्ति, दोनों ही पक्षों पर काम करना आवश्यक हो जाएगा।

मांग पक्ष में हस्तक्षेप

मांग पक्ष में इस बात के प्रमाण हैं कि किसानों को विपरीत, अर्थात अल्प मांग वाली स्थितियों से दो-चार होना पड़ता है। पिछले दशक के दौरान न केवल कृषिगत वृद्धि दर कम रही है, बल्कि कृषि उपज के लिये मिलने वाली राशि भी न तो लागत के अनुरूप, न ही अन्य वस्तुओं के आम मूल्य स्तर के अनुरूप रही है। फलत: उनका लाभ कम हुआ है। अनेक आकलनों से जाहिर होता है कि जब तक सकल सघउ में वृद्धि 8 प्रतिशत के स्तर से भी काफी ऊपर न पहुंच जाए, तब तक कृषि क्षेत्र में 4 प्रतिशत की वृद्धि को बनाए रख पाना संभव नहीं होगा।

हाल ही में आरंभ किए गए राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गारंटी कार्यक्रम जैसे कदमों से 11वीं योजना के दौरान मांग पक्ष को मदद मिलेगी। सरकारी स्कूलों के स्तरोन्नयन तथा उनके साथ-साथ स्वास्थ्य सेवाओं तक निम्न आय वर्ग के लोगों की पहुंच बढ़ाने से इन मदों पर निजी व्यय को कम करने में भी मदद मिलेगी और इनसे हुई बचत का एक हिस्सा लोग कृषि के लिये मांग बढ़ाने वाली मदों पर खर्च कर सकेंगे। 'भारत निर्माण' की परिकल्पना के अनुरूप गांवों के बीच संपर्क बढ़ाने से भी एकीकृत राष्ट्रीय बाज़ार के विकास को गति मिलेगी और गांववासी एक दूसरे की मांगों की पूर्ति कर पाएंगे।

आपूर्ति पक्ष की रणनीति

कृषिगत विकास को दोगुना करने संबंधी आपूर्ति पक्ष की चुनौती भी काफी कठिन है। इसकी वजह यह है कि आज हरित क्रांति जैसा नाटकीय परिणाम दे सकने वाली स्थितियां मौजूद नहीं हैं। हम मौजूदा प्रौद्योगिकी में निहित संभावनाओं का भी उपयोग नहीं कर रहे। वस्तुत: अनाजों, दालों तथा तिलहनों में अपेक्षित वृद्धि वर्तमान में कम उत्पादन देने वाले इलाकों की उपज बढ़ाकर ही संभव है। साथ ही, कम उपज के लिये उत्तरदायी रुकावटों और नीतियों के विरूपण की पहचान भी ज़रूरी है।

राष्ट्रीय कृषक आयोग के अनुसार किसानों की अज्ञानता के कारण कृषि उत्पादकता में कमी आती है। इससे निज़ात पाने के लिये विश्वविद्यालयों तथा अनुकरणीय पहलों के साथ किसानों के संपर्क को बेहतर बनाना होगा। संपर्क स्थापित करने का एक माध्यम बेहतर विस्तार प्रणाली हो सकती है, किंतु दुर्भाग्यवश अधिकांश राज्यों में विस्तार प्रणाली प्राय: धराशायी हो चुकी है। इसका हासिल यह हुआ कि देश के बड़े भूभाग में अपनाए जाने वाले खेती के तरीके आदर्श नहीं रह गए हैं। भूमि की पोषण आवश्यकताओं के ठीक-ठीक आकलन के लिये भू-परीक्षण शायद ही कराया जाता हो। परिणामस्वरूप, उर्वरकों का काफी असंतुलित रूप से इस्तेमाल किया जाता है। प्राय: नाइट्रोजनयुक्त उर्वरकों का जरूरत से अधिक प्रयोग किया जाता है जिसका दीर्घकाल में भूमि की उत्पादकता पर उल्टा प्रभाव पड़ता है। किसान प्राय: इस तथ्य से अवगत नहीं होते। कुछ सीमा तक इस तरह के असंतुलन की वजह उर्वरकों पर दी जाने वाली सब्सिडी है जो अपने आप में न केवल अतार्किक है, बल्कि उससे नाइट्रोजनयुक्त उर्वरकों के अधिकाधिक इस्तेमाल को बल मिलता है।

देश के एक बड़े हिस्से में तर्कसंगत दरों पर ऋण की अनुपलब्धता लगातार बनी हुई है। सहकारी ऋण प्रणाली की असफलता से यह समस्या और घनीभूत हुई है। ऋण उपलब्ध कराने में संगठित ऋण प्रणाली की असफलता से अनौपचारिक ऋण स्रोतों पर निर्भरता काफी बढ़ी है। इन स्रोतों की ब्याजदर आमतौर पर काफी ऊंची होती है। यह किसानों के संकट की जड़ है जो अत्यधिक ऋणग्रस्तता के रूप में परिलक्षित होती है।

कृषि वृद्धि की गति और तेज़ करने के लिये बागवानी तथा पुष्प उत्पादन की दिशा में

इसका विविधीकरण ज़रूरी है। इसके लिये कृषि तथा गैर-कृषि कर्म में संरचनात्मक परिवर्तन अपेक्षित हो जाएगा। विविधीकरण के लिये प्रभावशाली विपणन तथा आधुनिक बाज़ार व्यवहार भी ज़रूरी होंगे।

विविधीकरण के लिये विभिन्न प्रकार के बाज़ारों की विशिष्ट अपेक्षाओं पर खरा उतरना भी ज़रूरी होता है। ये अपेक्षाएं घरेलू उपयोग, कृषि संसाधन तथा निर्यात के लिये अलग-अलग होती हैं। कांट्रैक्ट कृषि के द्वारा कॉरपोरेट निवेशकों को आकर्षित कर बाज़ार के साथ संपर्क बढ़ाने तथा कृषकों को कृषि विधि, विस्तार तथा अन्य सलाह देने के लिये कहा जा सकता है।

नवीन और अपरीक्षित प्रौद्योगिकी इस्तेमाल करने के क्रम में किसानों के जोख़िम भी बढ़ जाते हैं। इन जोख़िमों को नये बीज और प्रौद्योगिकी की ज़रूरतों की जानकारी न होने के कारण प्राय: वे ठीक तरह से समझ नहीं पाते। सभी किसान घाटे का जोख़िम बर्दाश्त करने में सक्षम नहीं होते। इस तरह हमारे सामने नवीन बीजों के असफल हो जाने, उनसे अपेक्षित उपज न मिलने, अथवा नलकूपों के नाकाम हो जाने के अलावा बाज़ार मूल्य गिरने के कारण किसानों द्वारा आत्महत्या करने के मामले आने लगते हैं। ज़रूरी कदम उठाकर किसानों को इस तरह के जोख़िमों से सुरक्षा दिए जाने की ज़रूरत है। इसकी एक विधि बीमा है, लेकिन मौजूदा एवं प्रस्तावित फसल बीमा कार्यक्रमों की वित्तीय लागत काफी ज्यादा और बार-बार घटित होने वाली है। इसलिये ये योजनागत कार्यक्रम के लिये उपयुक्त उपाय नहीं हैं। 11वीं योजना में इनसे और जोख़िम प्रबंधन से जुड़े मुद्दों का समाधान करना आवश्यक है।

11वीं योजना की कृषिगत रणनीति विभिन्न कृषि-जलवायु क्षेत्रों की पहचान पर आधृत होनी चाहिए। तकनीकी अवरोधों तथा फसल विकास संभावनाओं की प्रकृति में विभिन्न क्षेत्रों के बीच काफी अंतर होता है। इसलिये प्रत्येक क्षेत्र की विविधता को ध्यान में रखते हुए उसके लिये उपयुक्त नीतिगत पैकेज़ तैयार करना होगा। इसे भावी योजनागत कार्यक्रमों के प्रारूप में शामिल करना होगा तथा क्षेत्र-आधारित लाभों को बढ़ाने के लिये योजना क्रियान्वयन एवं प्रशासनिक संरचना में आवश्यकतानुसार सुधार करते रहना होगा। ये रणनीतियां केंद्र एवं राज्य सरकारों के आपसी परामर्श से बनाई जा सकती हैं लेकिन इनको अमली जामा पहनाने की जिम्मेदारी लगभग पूरी तरह राज्य सरकारों की ही होगी।

कृषिगत शोध

दीर्घकाल में कृषि उत्पादकता में वृद्धि को सतत प्रौद्योगिकीय प्रगति के द्वारा ही जारी रखा जा सकता है। इसके लिये बुनियादी शोध को वरीयता देने की नीति अपनानी होगी। दुर्लभ प्राकृतिक संसाधनों, जलवायु परिवर्तन तथा अंतरराष्ट्रीय सार्वजनिक अनुसंधान के लाभों की उपलब्धता निरंतर कम होते जाने के मद्देनज़र यह अब काफी आवश्यक हो गया है। 11वीं योजना को बुनियादी शोध पर ध्यान देना और रणनीतिक शोध की दिशाओं की पहचान करना होगा। देश की व्यापक कृषि अनुसंधान प्रणाली को क्रमश: डॉ. स्वामीनाथन तथा डॉ. आर. ए. माशेलकर की अध्यक्षता वाली उच्चस्तरीय समितियों के परामर्शों के अनुरूप संशोधित एवं पुनर्गठित करना होगा।

जल प्रबंधन एवं सिंचाई

कृषि का एक महत्वपूर्ण आदान जल होता है। जहां कहीं संभव हो, सिंचाई का विस्तार करने तथा जहां सिंचाई संभव न हो उन इलाकों में बेहतर जल प्रबंधन करने की आवश्यकता है। स्पष्टत: इस क्षेत्र में पूर्व के प्रयास अपर्याप्त रहे हैं। सिंचाई विस्तार के क्षेत्र में निष्पादन काफी शोचनीय रहा है क्योंकि हमारे संसाधन थोड़ा-थोड़ा अनेक परियोजनाओं पर बंटे होते हैं जिसके फलस्वरूप बड़ी संख्या में सिंचाई परियोजनाएं वर्षों से निर्माणाधीन ही हैं।

वर्ष 2005-09 की चार वर्ष की अवधि में भारत निर्माण कार्यक्रम के तहत एक करोड़ हेक्टेयर अतिरिक्त क्षेत्र को सिंचित करने की योजना है। यह लक्ष्य हासिल करने के लिये सिंचाई सुविधा निर्माण की मौजूदा 1.42 लाख हेक्टेयर प्रतिवर्ष की गति को बढ़ाकर 2.5 लाख हेक्टेयर प्रतिवर्ष करना होगा।

बड़ी तथा मध्यम सिंचाई परियोजनाओं के लिये राज्य सरकारों को बड़ी मात्रा में संसाधन लगाने होंगे जिन्हें केंद्रीय सहायता का समर्थन भी प्राप्त होगा। साथ ही इन परियोजनाओं का राज्यों द्वारा क्रियान्वयन भी महत्वपूर्ण है।

कृषि सुविधाओं के विस्तार के साथ-साथ जल का समान वितरण तथा कुशल उपयोग भी सुनिश्चित किया जाना चाहिए। इसके लिये भागीदारी आधार पर सिंचाई प्रबंधन किया जाए जिसमें जनतांत्रिक रूप से गठित जलप्रयोक्ता संघों को जलकर निर्धारित करने, वसूलने तथा क्षेत्रीय जल प्रणालियों के रख-रखाव तथा सिंचाई क्षेत्रों के विस्तार के लिये उसका एक बड़ा हिस्सा अपने पास रखने का अधिकार दिया जाना चाहिए। ये संघ जल का एक समान वितरण करें तथा अंतिम प्रयोक्ता को भी पानी का उसका न्यायोचित हिस्सा दें। अनुभव बताते हैं कि इस तरह भागीदारी प्रबंधन वाले प्रयास काफी प्रभावी साबित होते हैं। 11वीं योजना को ऐसे संघों पर बड़े पैमाने पर अपनी विश्वसनीयता बढ़ानी होगी।

60 प्रतिशत से भी अधिक कृषियोग्य भूमि पूर्णतया असिंचित तथा वर्षा जल पर निर्भर है। इस बड़े भूभाग के लिये सिंचाई की व्यवस्था काफी महत्वपूर्ण है। इस क्षेत्र के लिये 11वीं योजना में भूजल प्रबंधन पर काफी ध्यान देना होगा।

जल को हमें दुर्लभ संसाधन के रूप में स्वीकार करना होगा तथा इसकी प्रत्येक बूंद का कुशल उपयोग करना होगा। इस संदर्भ में यह भी स्वीकरणीय है कि राज्य सरकारों द्वारा क्रियान्वित की जा रही मौजूदा कुछ नीतियां समस्या को बढ़ाने वाली ही साबित हुई हैं। कुछ राज्यों में जल आज भी नि:शुल्क दिया जाता है जबकि बाकी सभी राज्यों में इस पर काफी ज्यादा सब्सिडी दी जाती है। इसके फलस्वरूप भूजल के अतार्किक दोहन के कारण भूमि में मौजूद जलस्तर की स्थिति गंभीर से गंभीरतर होती जा रही है। देश के 29 प्रतिशत प्रखंड पहले भी गंभीर रूप से भूजल दोहित क्षेत्र की परिधि में आ चुके हैं।

वर्षा जल पर निर्भर क्षेत्रों में वाटर शेड प्रबंधन, वर्षा जल संग्रहण तथा भूजल भराव के द्वारा जलस्तर को बढ़ाया जा सकता है। इस वर्ष गठित किए जा रहे राष्ट्रीय वर्षा जल क्षेत्र प्राधिकरण के द्वारा राज्य सरकारों के साथ मिलकर वर्षा जल क्षेत्रों के लिये समर्पित कार्ययोजना बनाई जा सकेगी।

अनुमानित रूप से 8 करोड़ हेक्टेयर कृषि भूमि को उपचार की जरूरत है। इसमें से प्रति हेक्टेयर भूमि के उपचार पर करीब 10,000 रुपये खर्च होंगे। इस तरह, कुल भूमि के उपचार के लिये लगभग 80,000 करोड़ रुपये की आवश्यकता होगी। 11वीं योजना अवधि के दौरान इस बड़े पैमाने पर धन की आवश्यकता की पूर्ति के लिये भूमि के नमी संरक्षण तथा भूजल भराव के स्थानीय कार्यक्रम को रोज़गार गारंटी कार्यक्रम के साथ जोड़ना नितांत आवश्यक है। ❑

(11वीं पंचवर्षीय योजना (2007-12) के दृष्टिकोण पत्र के अंशों के आधार पर योजना संपादकीय मंडल द्वारा संकलित। दृष्टिकोण पत्र योजना आयोग की वेबसाइट www.planningcommission.gov.in पर उपलब्ध है।

कृषि का नवीकरण और कृषि जनित समृद्धि

○ एम. एस. स्वामीनाथन

हमें कृषि के पतन पर मूक दर्शक नहीं बने रहना चाहिए। मानव सुरक्षा और राष्ट्रीय प्रभुसत्ता, दोनों ही दांव पर लगे हैं। समग्र आर्थिक विकास का तब तक कोई अर्थ नहीं है, जब तक हम अपनी जनसंख्या के 60 प्रतिशत लोगों के आर्थिक स्वास्थ्य और उत्तरजीविता पर ध्यान नहीं देते

भारत में हरित क्रांति का प्रारंभ 1968 से हुआ जिसके फलस्वरूप गेहूं और चावल की उत्पादकता और उत्पादन में जबरदस्त वृद्धि हुई। पिछले 10 वर्षों में हरित क्रांति को विराम-सा लग गया प्रतीत होता है। खाद्यान्न उत्पादन की दर जनसंख्या वृद्धि की दर से काफी नीचे चली गई है। इसप्रकार, सबके लिये भोजन के हमारे स्वप्न को साकार करने के प्रयास से, खाने वालों की संख्या ज्यादा तेज़ी से बढ़ रही है। इस पर तुर्रा यह कि गृहस्थ स्तर पर क्रय शक्ति की अपर्याप्तता के चलते उपभोग में भी वृद्धि नहीं हो पा रही है। ग्रामों में गैर-कृषि और कृषि से इतर रोज़गार के अवसरों की दयनीय स्थिति के कारण जीविका के अभाव से घरेलू स्तर पर अकाल जैसी स्थिति आ गई है। योजना आयोग के अनुसार, हम लोग 2015 तक भूखे लोगों की संख्या को आधा कम करने के सहस्राब्दि विकास लक्ष्य को प्राप्त करने के मार्ग से भटक गए हैं। इसके अलावा, हम शिशु और मातृ मृत्युदर को कम करने तथा सभी बच्चों को प्राथमिक शिक्षा प्रदान करने के मार्ग से दूर छिटक गए हैं।

प्रधानमंत्री ने अगले दस वर्षों में, अर्थात 2015 तक मौजूदा खाद्यान्न उत्पादन को 21 करोड़ टन से दोगुना बढ़ाकर 42 करोड़ टन करने पर ज़ोर दिया है, जो उचित ही है। वर्ष 2015 को संयुक्त राष्ट्र के सहस्राब्दि विकास लक्ष्य (यूएनएमडीजी) को हासिल करने को कसौटी का वर्ष भी निर्धारित किया गया है। इसके लिये 4 करोड़ हेक्टेयर से कम से कम 16 करोड़ टन चावल और ढाई करोड़ हेक्टेयर भूमि से 10 करोड़ टन गेहूं पैदा करने की आवश्यकता होगी। दालों, तिलहनों, मक्का, ज्वार और बाजरे का उत्पादन भी कम से कम 16 करोड़ टन तक पहुंचाना होगा। इसके साथ ही, फलों और सब्जियों के उत्पादन का हमारा राष्ट्रीय लक्ष्य भी वर्ष 2015 तक बढ़ाकर 30 करोड़ टन तक ले जाना है। चूंकि कृषि योग्य भूमि का क्षेत्र लगातार घटता जा रहा है, इसलिये इन सभी लक्ष्यों को हासिल करने का एक ही तरीका है कि हम कृषि योग्य भूमि और सिंचाई जल की प्रत्येक इकाई की उत्पादकता को बढ़ाएं। यदि उत्पादन लागत को तार्किक बनाना है और हमारे कृषि उपज को विश्व में मुकाबला करना है तो हमें प्रति हेक्टेयर उत्पादकता में दूनी वृद्धि करनी होगी। कृषि क्षेत्र का औसत आकार घटता जा रहा है और लगभग 80 प्रतिशत कृषक परिवार सीमांत और लघु कृषक वर्गों से हैं। सौभाग्यवश पशुधन का स्वामित्व कुछ अधिक समतावादी है। फसल और पशुधन समेकित उत्पादन प्रणालियों के जरिये छोटे जोतों की उत्पादकता बढ़ाना और उनकी आमदनी में वृद्धि करना तथा कृषि प्रसंस्करण और जैव कचरे के उपयोग से जीविका के साधनों में वृद्धि करना और खाद्यान्न उत्पादन के लक्ष्य और ग़रीबी, भूख तथा ग्रामीण बेरोज़गारी को हटाने के लिये अनिवार्य हैं। इन लक्ष्यों को पूरा करने वाले कार्यक्रमों को तैयार करना ज़रूरी है, क्योंकि कृषि में अकाल की स्थिति में वृद्धि के साथ ग़रीबी और कुपोषण भी बढ़ रहा है। दुर्भाग्य से एचआईवी/एड्स का प्रकोप भी बढ़ रहा है।

2005 का वर्ष न केवल देश के लिये बल्कि किसानों और मछुआरों के परिवारों के लिये भी कठिन रहा है। 26 दिसंबर, 2004 को आए भयानक सुनामी से लेकर कश्मीर के विनाशकारी भूकंप और तमिलनाडु की बाढ़ जैसी आपदाओं से हमारे किसान और मछुआरे परिवारों पर सूखे, बेमौसम और भारी बरसात (महाराष्ट्र में प्याज की फसल को चौपट करने वाली पिछले वर्ष जैसी बारिश) का प्राकृतिक कहर टूटता रहा है। छोटे किसानों को मिलने वाला संस्थागत समर्थन बहुत कमज़ोर है। यही बात फसल के बाद के बुनियादी ढांचे पर भी लागू होती है। उदाहरणार्थ, अभी भी बहुत से

स्थानों पर धान को ज़मीन पर ही सुखाया जाता है। इस तरह से नष्ट होने वाली फसलों का ह्रास, फलों और सब्जियों के मामले में 30 प्रतिशत तक जा सकता है। अनुसंधान, विस्तार, ऋण और आदान आपूर्ति जैसी संस्थाएं, जिनसे किसानों को मदद करने की उम्मीद की जाती है, आमतौर पर गरीबों और महिलाओं की हितैषी नहीं पाई जातीं। ख़तरों और जोख़िम के शमन की व्यवस्था न के बराबर है। मुश्किल से 10 प्रतिशत किसानों की फसलों का बीमा होता है। किसान परिवारों के स्वास्थ्य का बीमा भी नहीं होता। कोई कृषि जोख़िम कोष भी हमारे यहां नहीं है। जोख़िम-शमन और मूल्य स्थिरता, दोनों को ही उचित नीतिगत समर्थन नहीं प्राप्त है। डीज़ल और अन्य आदानों (इनपुट्स) की लगातार बढ़ती कीमतों के कारण न्यूनतम समर्थन मूल्य से उत्पादन लागत ज्यादातर अधिक ही रहती है। पिछले दो दशक में कृषि निवेश में गिरावट आई है। सकल घरेलू उत्पाद के संदर्भ में कृषि और अन्य संबंधित क्षेत्रों के लिये पूंजी की व्यवस्था करने में पिछले दो दशकों से समस्याएं आ रही हैं; उनमें 1980 के दशक से ही गिरावट देखी जा रही है हाल ही में इसे सुधारने की कोशिश शुरू हुई है। इससे सिंचाई और ग्रामीण बुनियादी ढांचा विकास पर विपरीत प्रभाव पड़ा है। छोटे किसान परिवारों द्वारा अनुभव की जा रही तमाम मुसीबतों का नतीजा किसानों द्वारा आत्महत्या की संख्या में निरंतर हो रही वृद्धि के रूप में दिखाई दे रहा है। महाराष्ट्र के विदर्भ क्षेत्र के कई भागों में स्थिति कुछ ज्यादा ही भयावह है। हमारे लिये यह शर्म की बात है कि आत्महत्याओं के प्रमुख घटना स्थलों में वर्धा जिला भी शामिल है, जहां महात्मा गांधी ने अपने जीवन का एक लंबा अरसा बिताया था। उन्होंने वर्धा में रहकर औपनिवेशिक शासन के खिलाफ़ लंबी लड़ाई लड़ी ताकि देश भूख, ग़रीबी और महिलाओं के प्रति अन्याय से मुक्ति पा सके।

कृषि का लागत-जोख़िम-लाभ ढांचा अब उल्टा होता जा रहा है। नतीज़तन, ग्रामीण परिवारों में ऋणग्रस्तता बढ़ती जा रही है। अखिल भारतीय स्तर पर किसान परिवार के सदस्यों की औसत संख्या 5.5 है। कम आय वाले समूहों में औसत आकार 6.9 तक पाया जाता है। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन (एनएसएसओ) के 59वें दौर के सर्वेक्षण के अनुसार वर्ष में देशभर के किसानों के घरों का मासिक खपत व्यय प्रतिव्यक्ति 503 रुपये प्रतिमाह था। भूख जैसी पुरानी बीमारी और उससे उत्पन्न कुपोषण, भूमि और पशुधन जैसी संपत्तियों से रहित लोगों तथा सिंचाई सुविधा से वंचित छोटे जोत वाले किसानों, दोनों में ही काफी ज्यादा पाई जाती है। इसलिये कृषि के नीतिगत सुधारों में छोटे किसानों, महिलाओं और भूमिहीन खेतिहर मजदूरों के हितों का ध्यान रखना ज़रूरी है। यदि हमने छोटे किसानों और भूमिहीन खेतिहर मज़दूरों की समस्याओं पर प्रतिबद्धता के साथ तुरंत ध्यान नहीं दिया तो एक ओर विशाल प्रौद्योगिकीय क्षमता और उद्यमिता तथा दूसरी तरफ व्यापक कुपोषण, ग़रीबी और अभाव की स्थिति वाली विषम भारतीय पहेली न केवल बनी रहेगी, बल्कि इससे सामाजिक विग्रह, हिंसा और मानवीय असुरक्षा की भावना में भी वृद्धि होगी। बिना शांति और सुरक्षा के दीर्घकालीन आर्थिक प्रगति संभव नहीं होगी। इसलिये राष्ट्रीय कृषक आयोग सिफ़ारिश करता है कि कृषि वर्ष 2006-07 को कृषि नवीकरण वर्ष का नाम दिया जाए।

इस वर्ष देश के सभी भागों में कृषि उत्पादकता और लाभदेयता में वृद्धि हेतु, विभिन्न उपायों का एकीकृत पैकेज़ शुरू किया जाना चाहिए। ये उपाय ऐसे होने चाहिए जिनसे पारिस्थितिकी पर कोई विपरीत प्रभाव न पड़े। ये कार्यक्रम हमारे सभी प्रमुख कृषि-पारिस्थिकीय क्षेत्रों, शुष्क, अर्द्धशुष्क (जैसे सूखी खेती), पहाड़ी, तटीय और नम (सिंचित अथवा अति वर्षा वाले) क्षेत्रों में लागू हों। वर्तमान कृषि संकट को तब न केवल अवसर में बदला जा सकेगा, बल्कि सभी प्रकार की कृषि प्रणालियों में परस्पर लागू होने वाली प्रौद्योगिकी, सेवाओं और सार्वजनिक नीतियों के पैकेज़ के जरिये संभावित और वास्तविक उत्पादन के अंतर को पाटा जा सकेगा। वर्ष 2006-07 के कृषि नवीकरण वर्ष में केंद्र व राज्य सरकारों, पंचायती राज संस्थाओं, कृषि, पशु चिकित्सा, ग्रामीण और महिला विश्वविद्यालयों और आईआईटी, सार्वजनिक और निजी क्षेत्र के उद्योगों, नागरिक संगठनों और जनसंचार माध्यमों को अपने कार्यक्रम इस प्रकार तैयार करने होंगे जो देश के सभी 6 लाख गांवों में उत्पादकता, गुणवत्ता, धारणीयता, लाभदेयता और रोज़गार क्रांति को बढ़ावा दे सकें। इससे हमारे गांवों में काम के अवसर बढ़ेंगे और आर्थिक विकास को बढ़ावा मिलेगा।

कृषि नवीकरण वर्ष की कार्ययोजना के मुख्य अवयव निम्नानुसार होने चाहिए। इन सभी पर एक साथ और समेकित रूप से ध्यान देने की आवश्यकता है।

मिट्टी की उर्वरा में सुधार

कृषि विश्वविद्यालयों, आईसीएआर और सीएसआईआर संस्थाओं, कृषि विज्ञान केंद्रों, उर्वरक कंपनियों, राज्य सरकारों के कृषि विभागों, किसान संगठनों और पंचायती राज संस्थाओं को वर्ष 2006-07 को मृदा स्वास्थ्य सुधार वर्ष के रूप में मनाना चाहिए। हैदराबाद स्थित अर्द्धशुष्क क्षेत्रों हेतु अंतरराष्ट्रीय फसल अनुसंधान संस्थान (इक्रीसैट) का सक्रिय सहयोग इस कार्य में लिया जाना चाहिए। इक्रीसैट के पास शुष्क कृषि वाले क्षेत्रों में मिट्टी की बनावट के बारे में अत्यंत मूल्यवान सूचनाएं हैं। इक्रीसैट, जोधपुर स्थित सीआरआईडीए, सीएजेडआरआई और राष्ट्रीय मृदा सर्वेक्षण ब्यूरो (नेशनल ब्यूरो ऑफ सॉयल सर्वे) और आईसीएआर की भूमि उपभोग योजना इस कार्य में तकनीकी सहयोग प्रदान कर सकती है तथा निगरानी में भी मदद कर सकती है। इसके लिये निम्नलिखित कदम उठाने की आवश्यकता होगी :

(i) मिट्टी का परीक्षण करने वाली सभी प्रयोगशालाओं को पुन: पूर्णरूप से सुसज्जित करना होगा, ताकि प्रत्येक कृषि परिवार को मिट्टी का उर्वरा कार्ड दिया जा सके। इस कार्ड में मिट्टी की

भौतिकी (मिट्टी की बनावट, मिट्टी की निचली सतह में बनने वाली सख़्त पर्तें आदि), रासायनिकी (मिट्टी के जैविक पदार्थ तथा वृहद एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों की स्थिति) और सूक्ष्म विज्ञान (केंचुओं की उपस्थिति, मिट्टी की सूक्ष्म जैविकता) के बारे में समेकित सूचना समाहित होगी। मृदा स्वास्थ्य कार्डों को सूक्ष्म पोषक तत्वों की कसर को पूरा करने सहित उर्वरकों के संतुलित उपयोग को भी प्रोत्साहित करना चाहिए।

(ii) प्रचार अभियानों और प्रदर्शनों के जरिये चारा/फलियों में लगने वाले अनाज की फसलों की बारी-बारी अदला-बदली के साथ हरी खाद वाली फसलों को बढ़ावा देने की ज़रूरत है।

(iii) कृषि कार्य से संबंधित समस्त अवशेषों और कचरों की कंपोस्ट खाद बनाना, सूक्ष्म जैविक उर्वरकों एवं खेत वाले घरों की खाद के उपयोग को जहां तक संभव हो, प्रोत्साहित करना।

(iv) मिट्टी की उर्वरा को सुधारने के लिये समेकित पोषक तत्वों की आपूर्ति करना होगा। इनके उपयोग के लिये किसानों को तैयार करने में भी मदद की जानी चाहिए।

(v) मृदा परीक्षण प्रयोगशालाओं में काम कर रहे स्टाफ को फिर से प्रशिक्षण देना होगा।

(vi) एकीकृत परती भूमि विकास और बायो ईंधन कार्यक्रमों को प्रोत्साहन देना होगा।

(vii) कृषि दवाखाना (एग्री क्लीनिक) कार्यक्रम के पुनर्गठन और पुनर्जीवन की आवश्यकता है। कृषि स्नातकों को ग्रामीण सेवा क्षेत्र में स्वरोज़गार का कैरियर अपनाने के लिये प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

(viii) समस्या वाली मिट्टी और परती भूमि के स्थान पर उच्च उत्पादकता के लिये प्रजनक मिट्टी (ब्रीडिंग) का काम हाथ में लेना चाहिए।

(ix) परती भूमि विकास कार्यक्रम को बायोईंधन और औद्योगिक कच्चे माल (कागज़, दफ्ती, रेयान, पैकेज़िंग सामग्री आदि के उत्पादन हेतु) के साथ-साथ चारा और जलाऊ लकड़ी आदि के साथ जोड़ा जाना चाहिए।

(x) पंचायतें सामुदायिक भूमि देख-रेख आंदोलन शुरू कर सकती हैं।

मिट्टी की उर्वरा के सुधार में ही बीज और पानी जैसे आदानों के निवेश से होने वाले लाभ की कुंजी छिपी हुई है। सूक्ष्म और वृहद पोषण की कमी को दूर करने की दृष्टि से शुष्क कृषि वाले क्षेत्रों पर ज्यादा ध्यान देने की जरूरत है। जैसा कि प्रधानमंत्री ने भी ज़ोर दिया है, दूसरी हरित क्रांति की शुरुआत शुष्क कृषि क्षेत्रों से ही होनी है।

सिंचाई जल : आपूर्ति वर्धन और मांग प्रबंधन

पानी एक सार्वजनिक वस्तु है और एक सामाजिक संसाधन। यह कोई निजी संपत्ति नहीं है। पानी की आपूर्ति का निजीकरण ख़तरों से भरा है और इससे स्थानीय समुदायों में जल के लिये युद्ध भी हो सकता है। वर्षा जल संचय और कुओं-बावड़ियों की रिचार्जिंग के जरिये पानी की आपूर्ति को अनिवार्य बना देना चाहिए। इसके अलावा, भारत निर्माण कार्यक्रम के तहत एक करोड़ हेक्टेयर के नये सिंचाई सुविधा के विस्तार की राष्ट्रीय रणनीति को विकसित करना होगा। आंध्र प्रदेश में गोदावरी नदी पर बनने वाली पोलावरम परियोजना इसी का उदाहरण है। विभिन्न दृष्टिकोणों पर केवल बातचीत और आम सहमति से ही सामंजस्य बिठाया जा सकता है। सभी मौजूदा कुओं और तालाबों का नवीकरण होना चाहिए। स्प्रिंकलर और ड्रिप सिंचाई प्रणालियों जैसी उन्नत सिंचाई पद्धतियों के जरिये मांग प्रबंधन को सर्वोच्च प्राथमिकता देनी होगी। एक जल साक्षरता आंदोलन शुरू किए जाने की आवश्यकता है और भूजल के दीर्घकालिक उपयोग के लिये नियम-कानून बनाए जाने चाहिए। मैनग्रोव, सैलिकॉर्निया, कैसुअरिना और उपयुक्त हैलोफाइटिक जैसे पौधों के उत्पादन पर जोर देते हुए तटीय क्षेत्रों में सागर जल का उपयोग कर कृषि को बढ़ावा देना चाहिए। वर्षा जल, नदी, भूजल, समुद्र और उपचारित मल-जल को एक-दूसरे से जोड़कर उपलब्ध जल संसाधनों का प्रभावी उपयोग किया जाना चाहिए। पानी की कमी वाले क्षेत्रों में दलहन और तिलहनों जैसी कम पानी की दरकार वाली परंतु बढ़िया दाम देने वाली फसलों के उत्पादन पर जोर देकर भूमि का बेहतर उपयोग करने की आवश्यकता है। जिन क्षेत्रों में सभी किसान वर्षा जल संचय के लिये मिलकर काम करते हैं और पानी का उपयोग समान रूप से करते हैं, उन गांवों को दलहन और तिलहन गांवों के रूप में प्रोत्साहित किया जा सकता है। संकर अरहर (पीजन पी) गांवों के प्रोत्साहन से दलहन क्रांति की शुरुआत हो सकती है। धान और गन्ना के मामले में, चावल सघनीकरण प्रणाली में निहित पानी की बचत करने वाली खेती को और पूर्णता प्रदान कर लोकप्रिय बनाया जाना चाहिए। पानी की प्रत्येक बूंद से अधिकतम उपज महज एक नारा भर ही नहीं रह जाना चाहिए। भूमि उपयोग के निर्णय जल उपयोग के निर्णय भी होते हैं। अत: फसल प्रणाली का चयन वर्षा जल सहित सिंचाई जल की उपलब्धता पर निर्भर होना चाहिए। जैसा कि राष्ट्रीय कृषक आयोग की पिछली रिपोर्टों में बताया गया है, पनढाल (वाटरशेड) प्रबंधन को विभिन्न प्रौद्योगिकी मिशनों से जोड़ा जाना चाहिए जिससे उपलब्ध जल और बीजों जैसे अन्य आदानों का सिंचाई के जल से अधिकतम लाभ सुनिश्चित किया जा सके। जिन क्षेत्रों में वाष्पीकरण वर्ष के अधिकांश महीनों में होता रहता है, उनमें कम लागत वाले ग्रीन हाउसों को बढ़ावा दिया जा सकता है। जल साक्षरता और जल गुणवत्ता प्रबंधन कार्यक्रमों को शुरू करने में पंचायतों की सहायता की जा सकती है।

ऋण एवं बीमा

ऋण सुधारों में निम्नलिखित उपाय शामिल होने चाहिए :

- **कृषि ऋण पर ब्याज की दर**

अंतरराष्ट्रीय मानक के अनुसार भारत में जमादर और ऋणदर के बीच काफी बड़ा फासला है। कारोबार लागत और जोख़िम लागत, दोनों को नियंत्रित कर वित्तीय प्रणाली की दक्षता और कुशलता में सुधार लाने की आवश्यकता है। जहां तक सरकार का प्रश्न है, फसल बीमा के साथ-साथ जिस गति और तरीके से ऋण की वसूली और बंदोबस्ती की कार्यवाही चलती है उसमें पर्याप्त सुधार की ज़रूरत है। इन सुधारों को मध्यम अवधि से दीर्घावधि में अंजाम दिया जा सकता है। अधिक ब्याजदर का अर्थ है कि आय का अधिकांश हिस्सा ब्याज के भुगतान पर खर्च करना होगा। कृषि की लाभदेयता में गिरावट और किसानों की बढ़ती मुसीबतों और भारी कर्ज़ को देखते हुए सरकार इस कृषि नवीकरण वर्ष में फसल ऋण पर ब्याज की दर 4 प्रतिशत तक घटाकर किसानों को बैंक प्रणाली का समर्थन देने पर विचार कर सकती है। बारंबार सूखे से प्रभावित होने वाले क्षेत्रों में ऋण चक्र (किस्त अदायगी की अवधि) वार्षिक न होकर 4 या 5 वर्षों की किस्त का होना चाहिए।

- **बकाया राशि पर ब्याज-दर-ब्याज (चक्रवृद्धि)**

बकाया ऋण राशि पर सूद दर सूद को बढ़ाना केवल उन्हीं कर्ज़दारों पर लागू होना चाहिए जो भुगतान करने की क्षमता के बावजूद बकाये का भुगतान नहीं करते। जिन किसानों की आय में कमी हो रही है, या बाज़ार की असफलता के कारण जिन किसानों की भुगतान क्षमता में गिरावट आ गई है, उन पर चक्रवृद्धि ब्याज नहीं लगाया जाना चाहिए।

- **सूक्ष्म वित्त पोषण की बजाय जीविका वित्त पोषण**

सूक्ष्म वित्त पोषण के स्थान पर जीवनयापन वित्त पोषण, गरीबों की जीविका को दीर्घकालिक तौर पर समर्थन देने का व्यापक दृष्टिकोण है। क्योंकि अकेले सूक्ष्म वित्त पोषण से किसानों की ग़रीबी नहीं दूर होने वाली। इसमें ये वित्तीय सेवाएं (जीवन, स्वास्थ्य, फसल और पशुधन बीमा; सड़कों, बिजली, बाज़ार, दूरसंचार आदि के लिये ढांचागत वित्तीय सहायता और मानव विकास में निवेश सहित), कृषि और व्यापार विकास सेवाएं (उत्पादकता में वृद्धि, स्थानीय मूल्य योग, वैकल्पिक बाज़ार सुविधा आदि सहित) और संस्थागत विकास सेवाएं (विभिन्न उत्पादकों के संगठनों का गठन और सुदृढ़ीकरण, जैसे जल उपभोक्ता संगठनों, वन संरक्षण समितियों, ऋण और जिन्स सहकारिताओं, क्षमता विकास और ज्ञान केंद्रों के जरिये पंचायतों का सशक्तीकरण आदि) शामिल हैं।

- **निर्धनताग्रस्त आदिवासी क्षेत्रों में संस्थागत ऋण की सुविधा**

उड़ीसा के कालाहांडी, झारखंड के पलामू, छत्तीसगढ़, मध्यप्रदेश, आंध्र प्रदेश और महाराष्ट्र के विदर्भ क्षेत्र के शुष्क भूमि वाले कृषि क्षेत्रों में निर्धनता से ग्रस्त आदिवासी इलाकों तक संस्थागत ऋण सुविधाओं के विस्तार के लिये विशेष प्रयासों की आवश्यकता है।

- **कृषि जोख़िम कोष**

हमारे देश में अनेक ऐसे क्षेत्र हैं जहां बार-बार या लगातार बाढ़ या सूखे का प्रकोप होता है जो किसानों की आय को खा जाता है। ये किसान बैंकों के कर्ज़े का भुगतान नहीं कर पाते और उन्हें ऋण प्रणाली से बाहर कर दिया जाता है। एक के बाद एक आने वाली प्राकृतिक आपदाओं के मद्देनज़र केवल उनसे कर्ज़ वसूली चक्र के पुनर्निर्धारण और पुनर्गठन से काम नहीं चलेगा। भारत सरकार को कृषि जोख़िम कोष के गठन के बारे में सोचना होगा जो बार-बार के सूखे आदि की स्थिति में किसानों को राहत (पूर्ण माफी/कर्ज़ और ब्याज की आंशिक माफी) पहुंचा सके। साथ ही, सूखे, बाढ़, टिड्डी दल अथवा अन्य प्रकार के दैवी प्रकोप से बचाने के लिये भी किसानों के कर्ज़ पर ब्याज में राहत दे सके। इस कोष के गठन में केंद्र सरकार, राज्य सरकारों और बैंकों को एक पूर्ण निर्धारित फार्मूले के अनुसार योगदान देना चाहिए।

- **विपत्तिग्रस्त गांवों में कर्ज़ वसूली पर रोक**

अति विपत्तिग्रस्त गांवों में गैर संस्थागत साधनों से लिये गए ऋणों सहित सभी प्रकार के कर्ज़ों की वसूली पर पूरी तरह रोक लगाने की जरूरत है। खासकर जब तक कृषि कार्यों में युक्तिसंगत लाभ न होने लगे। कर्ज़ को सरल किश्तों में बांटकर उसकी वसूली को थोड़े समय के लिये रोका जा सकता है। इसके लिये क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों/सहकारी बैंकों आदि जैसे स्थानीय बैंकों को तरलता समर्थन (नकद राशि का प्रवाह) बना रहना चाहिए।

- **कम लागत की धारणीय कृषि हेतु ऋण**

कम लागत वाली धारणीय कृषि और मत्स्य पालन आदि के लिये विशेष प्रकार की परियोजनाएं बनाए जाने की जरूरत है। पारंपरिक नस्ल के मवेशियों की देखभाल सहित व्यावहारिक रूप से संभव कृषि कार्यों के लिये संस्थागत ऋण की व्यवस्था होनी चाहिए।

- **महिला कृषकों को किसान क्रेडिट कार्ड देना**

कृषि ऋण के क्षेत्र में किसान क्रेडिट एक सर्वथा नया विचार है किंतु बैंकों द्वारा करीब साढ़े चार करोड़ कार्ड जारी किए जाने के बावजूद, महिला किसानों को दिए गए कार्ड नहीं के बराबर हैं। सच तो यह है कि इस बारे में अलग से कोई आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं। इस तथ्य

को देखते हुए कि देश में महिला प्रधान कृषक परिवारों की संख्या काफी ज्यादा है, खासकर पहाड़ी और पूर्वोत्तर क्षेत्र में, इन किसानों को किसान क्रेडिट कार्ड जारी करने के लिये विशेष प्रयास की आवश्यकता है। जिन स्थानों में ऐसे पुरुषों के नाम ज़मीन है जो ग्रामीण क्षेत्रों में नहीं रहते, या शहरी/सेना आदि में नौकरी के चलते बाहर रहते हैं, उनके घरों की महिलाओं को क्रेडिट कार्ड जारी करने के लिये बैंकों को प्रलेख आदि के लिये समुचित प्रबंध करना चाहिए।

- **संकटकाल में विक्रय-शपथ ऋण**

छोटे और सीमांत किसानों द्वारा अपने कर्जों को चुकाने के लिये अथवा फसल के तुरंत बाद अपने घरेलू खर्च आदि के लिये, जल्दबाजी में अपनी उपज की बिक्री करना एक सामान्य बात है। कृषि विपणन सुधारों पर अंतरमंत्रालयीय कार्यबल की रिपोर्ट के अनुसार सूक्ष्म स्तर पर किए गए अध्ययनों से पता चलता है कि छोटे और सीमांत किसानों की लगभग 50 प्रतिशत बाज़ार में बिकने योग्य अतिरिक्त उपज यूं ही संकटकालीन बिक्री के रूप में ही निकल जाती है। मौके पर ही भुगतान पाने के लिये किसानों को 10-15 प्रतिशत की रियायत देना सामान्य बात है। इस तरह की समस्या से पार पाने के लिये किसानों को शपथ ऋण की व्यवस्था को उदार बनाने और प्रोत्साहित करने की जरूरत है।

- **विपणन के बुनियादी ढांचे में उधार व्यापार की संभावना**

बाज़ारों, शीत भंडारण सुविधाओं सहित भंडारण सुविधाओं, ग्राम आधारित परिवहन परिचालकों आदि की व्यवस्था में सुधार और आधुनिकीकरण की वित्तीय परियोजनाओं के लिये बैंकिंग प्रणाली में उधार व्यापार संभावनाओं के विकास की आवश्यकता है।

- **समझौता योग्य भंडारगृह रसीद**

कृषि उपज के गौण बाज़ारों पर आधारित प्रपत्रों को प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है। भंडारगृह रसीदों की लिखा-पढ़ी के काम में आने वाली दिक्कतों को दूर करने की जरूरत है।

- **परिवार बीमा पॉलिसी**

ग्रामीण निर्धन परिवारों की सहायता के लिये सरकार को एक ऐसी समेकित सूक्ष्म बीमा पॉलिसी जारी करनी चाहिए जिसमें विभिन्न प्रकार के जोख़िमों को कवर किया जा सके। इन जोख़िमों में, पति-पत्नी और आश्रितों की बीमारी, प्राकृतिक मृत्यु, दुर्घटना मृत्यु, पूर्ण स्थायी या स्थायी आंशिक अपंगता और निवास के नष्ट होने/नुकसान पहुंचने आदि को शामिल किया जाना चाहिए। इस तरह के अनेक ग्राहकों तक सेवा पहुंचाने के लिये पंचायतों/गैर-सरकारी संगठनों/स्व सहायता समूहों की सहायता ली जा सकती है। गरीबों के जीवन सुरक्षा कवच के तौर पर सरकार इनके प्रीमियम का आंशिक भुगतान अपनी ओर से कर सकती है।

- **ग्रामीण बीमा विकास कोष**

ग्रामीण बीमा के विस्तार के लिये विकास कार्य हाथ में लेने के लिये ग्रामीण बीमा विकास कोष की स्थापना की जा सकती है।

- **फसल बीमा**

करीब 14 प्रतिशत किसानों को फसल बीमा के अधीन कवर किया जा रहा है। आवश्यकता एक समयबद्ध कार्यक्रम के अनुसार सभी किसानों और सभी फसलों को इसमें शामिल करने की है।

- ऋण परामर्श केंद्रों की स्थापना की जानी चाहिए जहां भारी कर्ज़ में डूबे किसानों को ऋण के जाल से बचाने के लिये ऋण राहत पैकेज़ की सूचना दी जाए, ताकि वे कोई आत्मघाती कदम न उठा सकें।
- प्रत्येक विकास खंड में एक-एक स्वसहायता समूह, क्षमता विकास और सलाह केंद्र की स्थापना की जाए जो स्वसहायता समूह के सदस्यों और प्रबंधकों को प्रबंधन, विपणन और लेखाकार्य की विशेषताओं से भलीभांति परिचित करा सके। किसान कॉल सेंटरों के उपयोग को लोकप्रिय बनाए जाने की आवश्यकता है।
- एक समेकित ऋण-सह-फसल-पशुधन-मानव स्वास्थ्य बीमा पैकेज़ का विकास कर लागू किया जाना चाहिए।
- प्रत्येक गांव में 'ज्ञान केंद्र' नाम से एक आंदोलन शुरू किया जाना चाहिए जिसके माध्यम से ऋण और बीमा के बारे में जागरूकता फैलाई जाए। इसके लिये इंटरनेट/सेल फोन से जुड़े सामुदायिक रेडियो के व्यापक उपयोग के लिये नीतियां क्रियान्वित की जानी चाहिए।

प्रौद्योगिकी

प्रौद्योगिकी परिवर्तन का प्रमुख वाहक है। प्रौद्योगिकी थकान और प्रौद्योगिकी अंतर दोनों से बचा जाना चाहिए। इसके लिये अनुसंधान, शिक्षा और विस्तार को पुनर्जीवित करने की जरूरत होगी। सुझाव है कि आईसीएआर की सभी संस्थाएं और सभी कृषि विश्वविद्यालय वर्ष 2006-07 को कृषि प्रौद्योगिकी वर्ष के रूप में मनाया जाए। इस वर्ष का प्रमुख उद्देश्य कृषक परिवारों के साथ अनुसंधान और ज्ञान प्रबंधन में भागीदारी को सुदृढ़ बनाया जाना होगा। इसके अलावा फसलोपरांत प्रौद्योगिकी और प्राथमिक उत्पादों के मूल्य संवर्धन के क्षेत्र में 60 हजार 'प्रयोगशाला से खेतों' तक कार्यक्रमों का आयोजन किया जाना भी कृषि प्रौद्योगिकी वर्ष का उद्देश्य होगा। कृषि विद्यालयों की स्थापना प्रगतिशील किसानों के खेतों में होनी चाहिए, जिससे नयी प्रौद्योगिकी का विस्तार किसानों के माध्यम से ही किसानों तक पहुंच सके।

- कृषि वैज्ञानिकों को नयी प्रजातियों और प्रौद्योगिकियों के बारे में समझाते समय इस बारे भी ज़ोर देना चाहिए कि इससे प्रति हेक्टेयर आय कितनी होगी। उन्हें केवल उत्पादन की जानकारी देना ही पर्याप्त नहीं है। प्रौद्योगिक परिवर्तन का उद्देश्य पर्यावरणीय धारणीयता के आधार पर प्रति हेक्टेयर आय में वृद्धि होना चाहिए।
- उत्पादन और फसलोपरांत प्रौद्योगिकी के बीच समुचित मुकाबला होना चाहिए, और प्रत्येक कृषि विज्ञान केंद्र में एक फसलोपरांत प्रौद्योगिकी शाखा खोली जानी चाहिए। हमारी स्वतंत्रता के 60 वर्ष पूरे होने के उपलक्ष्य में वर्ष 2006-07 में फसलोपरांत सार-संभाल, प्रसंस्करण और मूल्य संवर्धन के क्षेत्र में 60 हजार प्रयोगशाला से खेतों तक कार्यक्रमों का प्रदर्शन आयोजित किया जा सकता है। इनमें से अधिकांश का आयोजन सूखी कृषि वाले इलाकों में किया जाना चाहिए, जहां ज्वार, बाजरा, दलहनों, तिलहनों और कपास का उत्पादन होता है। सीएसआईआर और केंद्रीय खाद्य प्रौद्योगिकी अनुसंधान संस्थान, मैसूर के अनुसंधान और अनुभव का लाभ 'प्रयोगशाला से खेत' तक कार्यक्रम तैयार करते समय उठाना चाहिए। प्रदर्शन कार्यक्रम इस तरह तैयार किए जाएं कि वे प्रशिक्षण देने के काम भी आ सकें।
- भूमिहीन खेतिहर मजदूरों को कुशल मजदूरों में बदलना हमारा उद्देश्य होना चाहिए ताकि वे अपने समय और श्रम का अधिक आर्थिक लाभ उठा सकें। प्रशिक्षण उन कौशलों में दिया जाना चाहिए, जो बाज़ार की मांग के अनुसार उद्यम को संगठित कर सकें। प्रशिक्षण का तरीका खुद करके अनुभव प्राप्त करने वाला होना चाहिए- करो और सीखो।
- ऐसी प्रबंधन क्रियाओं को लोकप्रिय बनाया जाना चाहिए जो छोटे और सीमांत किसान परिवारों को सामाजिक और आर्थिक शक्ति प्रदान कर सकें। उनके व्यवसाय के नाम में कुछ दम हो। जैसे वे नाम रख सकते हैं- छोटे जोत वालों की कपास और बागवानी संपदा या इसी तरह का अन्य कोई नाम। इस तरह की संपदाओ में जैव कचरे के उत्पादन और उपयोग पर साथ-साथ ध्यान दिया जा सकता है। खेतों के आकार तेजी से छोटे होते जा रहे हैं और ऐसे में कपास, बागवानी, मत्स्य पालन और अन्य संपदाओं जैसी संयुक्त प्रबंधन इकाइयों वाले कृषकों को स्वसहायता समूहों की सख़्त जरूरत है। स्वसहायता समूह आंदोलन में उत्पादन और फसल कटने के बाद के कृषि के दोनों चरणों को शामिल किया जाना चाहिए।
- जैव कचरे के मूल्य संवर्धन से कौशल वाले रोज़गार के अवसरों के सृजन में मदद मिलेगी। देश में चावल का क्षेत्र सबसे बड़ा है और चावल जैव उद्यान जैसे उद्यम स्थापित कर रोज़गार और आय के अधिक अवसर पैदा किए जा सकते हैं। इसी प्रकार कपास के डंठलों से ईको-बोर्ड (गत्ता) तैयार किया जा सकता है।
- प्रौद्योगिकी के विकास और प्रसार में प्रकृति, गरीबों और महिलाओं के हितों का ध्यान रखा जाना चाहिए, इन्हें उनके विपरीत नहीं होना चाहिए। जैविक खेती और बाहरी साधनों का कम उपयोग करने वाली धारणीय कृषि तकनीक को एकीकृत प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन और एकीकृत कीट प्रबंधन तकनीकों के साथ-साथ बढ़ावा दिया जाना चाहिए। पर्यावरण की मांग के अनुसार कृषि कार्यों की सफलता में किसान के तौर पर और खेतिहर मजदूर, दोनों रूपों में महिलाओं की भूमिका महत्वपूर्ण है। प्रौद्योगिकियों को अपनाने के लिये जो भी कार्यक्रम बनाए जाएं, उनमें महिलाओं की भूमिका का ध्यान रखा जाना चाहिए। लिंग के आधार पर भेदभाव नहीं होना चाहिए।
- कृषि और ग्रामीण विश्वविद्यालयों, गृहविज्ञान महाविद्यालयों और शोध संस्थाओं को कृषक महिलाओं और पुरुषों की भागीदारी में अनुसंधान और ज्ञान प्रबंधन प्रणालियों को बढ़ावा देना चाहिए। उन्हें ऐसे किसान परिवारों का पता लगाना चाहिए जिनसे अन्य किसान खेत से खेत तक पहुंचने वाली प्रौद्योगिकी सीख सकें। जैसा कि एनसीएफ ने अपनी पहली रिपोर्ट में सिफ़ारिश की है, इसी प्रकार के प्रगतिशील किसानों के खेतों में ही कृषि विद्यालय खोले जाने चाहिए।
- जैव प्रौद्योगिकी अनुकूल होती नयी प्रौद्योगिकियों के सूचना संचार प्रौद्योगिकी को सरल बनाया जाना चाहिए। प्रत्येक पंचायत/ स्थानीय निकाय से दो-दो महिलाओं और पुरुषों को प्रशिक्षण देकर ग्रामीण कृषि विज्ञान प्रबंधकों का एक काडर तैयार किया जाना चाहिए। इन लोगों को बीटी कपास के खेतों में आश्रयों की स्थापना और केंद्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर द्वारा विकसित बीटी परीक्षण किट के इस्तेमाल से नकली बीजों का पता लगाने जैसी नयी प्रविधियों के प्रबंधन का प्रशिक्षण दिया जा सकता है। 73वें संविधान संशोधन के तहत पंचायतों के उत्तरदायित्व में कृषि और कृषि विस्तार (शिक्षा) भी शामिल है। इसलिये वैज्ञानिक-पंचायत के बीच सीधा संपर्क समय की आवश्यकता है। ग्रामीण विद्यालयों और कृषि विज्ञान केंद्रों में जीनोम क्लबों का गठन आनुवंशिक साक्षरता के विस्तार के लिये किया जा सकता है। बीटी कपास जैसी जेनेटिक

इंजीनियरिंग विधि से विकसित प्रजातियों को अवैध रूप से जारी करने से रोका जाना चाहिए। नकली बीज उपयोगी प्रौद्योगिकियों के विस्तार को चौपट कर देंगे।

- उत्पादन के लिये आदानों की आवश्यकता होती है। अत: उचित आदान, सही समय और सही कीमत पर उपलब्ध होना चाहिए। आदान आपूर्ति प्रणाली किसानों की हितैषी होनी चाहिए और जहां तक संभव हो, इसका नियंत्रण कृषक स्वसहायता समूह के हाथ में होना चाहिए। गुणवत्ता मानकों को सख्ती से अपनाया जाना चाहिए। प्रौद्योगिकी पैकेज़ को प्रभावी होने के लिये उसके साथ-साथ विस्तार और आदान आपूर्ति क्षेत्रों में उपयुक्त पैकेज़ के साथ ही आजमाना चाहिए।
- ऊर्जा एक महत्वपूर्ण आदान है। कृषक परिवारों को ऊर्जा स्रोत, बिजली और डीजल दोनों ही उचित मूल्यों पर विश्वसनीय ढंग से मिलना चाहिए। इसके साथ ही जहां आर्थिक रूप से यह कम खर्चीली हो, वहां सौर ऊर्जा का भी दोहन किया जाना चाहिए। पंचायत के नेतृत्व में एक समेकित ऊर्जा उत्पादन एवं प्रबंधन आंदोलन की ज़रूरत है।
- सूचना संचार प्रौद्योगिकी का प्रभावी ढंग से उपयोग होना चाहिए जिससे ग्रामीण स्त्री-पुरुषों को कृषि प्रणाली और मौसम के अनुकूल जानकारी 'प्रत्येक गांव ज्ञान केंद्र' आंदोलन के जरिये दी जा सके।

बाज़ार

जीवन पद्धति और आजीविका दोनों ही रूपों में कृषि की आर्थिक संभाव्यता का निर्णय अंतत: उसके सुनिश्चित और लाभकारी विपणन के अवसरों पर ही निर्भर करेगा। बाज़ार सुधार का कार्य उत्पादन की योजना के साथ शुरू होना चाहिए, ताकि उत्पादन-उपयोग-व्यापार श्रृंखला की हरेक कड़ी पर पूरा और समय पर ध्यान दिया जा सके।

मौजूदा राज्य भूमि उपयोग मंडल किसानों को भूमि उपयोग नियोजन के बारे में स्वयं आगे आकर सलाह देने के लिये उपयुक्त नहीं है। एक राष्ट्रीय भूमि उपयोग सलाहकार सेवा की अति आवश्यकता है जो राज्य और प्रखंड स्तर की भूमि उपयोग सलाहकार सेवाओं से सायकिल के 'हब और स्पोक्स' के मानिंद जुड़ा हो। यही वे वास्तविक संगठन हो सकते हैं, जो पारिस्थितिकी, मौसम विज्ञान और विपणन के आधार पर भूमि उपयोग के निर्णयों को स्थान और मौसम विशेष से जोड़ने की क्षमता रखते हों। राष्ट्रीय भूमि उपयोग सलाहकार सेवा को प्रस्तावित भारतीय व्यापार संगठन से जोड़ा जा सकता है। इसे भारतीय मौसम विभाग, इसरो, कृषि विश्वविद्यालय और विभागों, कमोडिटी एक्सचेंजेस एंड फ्यूचर्स मार्केटस, कृषि उपज निर्यात एवं विकास एजेंसी, सामग्री बोर्डों और राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय बाज़ारों के बारे में सभी विश्वसनीय राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय सूचना स्रोतों से निरंतर संपर्क रखना चाहिए। भूमि उपयोग सलाहकार सेवा में फसल और पशु पालन, बागवानी, अंतर्देशीय मत्स्यपालन, वानिकी और कृषि-वानिकी शामिल होना चाहिए। इसमें यह भी क्षमता होनी चाहिए कि वह आवश्यक वस्तुओं के आधिक्य और अभावों के बारे में स्वयं आगे आकर आकलन कर सके। राज्य और प्रखंड स्तर के भूमि उपयोग सलाहकार सेवा संगठनों को राज्य और स्थानीय स्तर पर आंकड़ा प्रदाताओं से उपयुक्त संपर्क रखना चाहिए। प्रखंड स्तर की सलाहकार सेवा को इसरो समर्पित ग्राम संसाधन केंद्रों में स्थापित किया जा सकता है। ये केंद्र मिशन 2007- प्रत्येक गांव में एक ज्ञान केंद्र आंदोलन के तहत प्रस्तावित है।

भूमि उपयोग सलाह उपलब्ध सिंचाई जल और तापमान पर आधारित होनी चाहिए। राष्ट्रीय और राज्य-स्तरीय भूमि उपयोग सलाहकार सेवाओं को फसलों की स्थिति पर भी नज़र रखनी चाहिए तथा होने वाली अधिकता और अभावों के बारे में समय पर चेतावनी जारी करनी चाहिए। यदि ऐसा किया गया तो हाल ही में हुए प्याज के अभाव जैसे संकट से बचा जा सकता है। भूमि और जल के उपयोग के बारे में आर्थिक और पारिस्थितिकीय दृष्टिकोण से ठोस और क्रियात्मक सलाह के अभाव में किसानों को अपने बूते ही यह निर्णय लेना होगा कि वे अपने खेतों में क्या पैदा करें। कृषि के वैश्वीकरण को देखते हुए किसानों की आर्थिक दशा के लिये यह घातक हो सकता है।

अधिनियमों/वैधानिक दस्तावेजों में संशोधन

आधुनिक कृषि की आवश्यकताओं को पूरा करने और इस क्षेत्र में निजी पूंजी को आकर्षित करने के लिये कृषि उपज के विपणन, भंडारण और प्रसंस्करण से संबंधित राज्य कृषि उपज विपणन समिति अधिनियमों और आवश्यक सामग्री अधिनियमों सहित अन्य कानूनों की समीक्षा की जानी चाहिए। प्रसन्नता की बात है कि केंद्रीय कृषि मंत्रालय ने पहले से ही इस दिशा में कार्य शुरू कर दिया है।

मियादी ग्रामीण बाज़ार

मियादी ग्रामीण बाज़ारों को सुधारने के लिये गंभीरता से ध्यान देने की ज़रूरत है। किसानों से संपर्क करने के ये ही प्राथमिक स्थान हैं। नियमित बाज़ारों में भी ढांचागत सुविधाओं को सुधारने की दरकार है।

कृषि उपज विपणन समितियां राज्य कृषि विपणन मंडल कृषि उपज विपणन समितियों और राज्य कृषि विपणन मंडलों की भूमिका में परिवर्तन की आवश्यकता है। नियमित विषयों के अलावा ग्रेडिंग, ब्रांडिंग, पैकेजिंग और स्थानीय उपज हेतु दूरस्थ तथा अंतरराष्ट्रीय बाज़ारों के विकास पर इन संस्थाओं को अधिक ध्यान देना होगा।

सामग्री आधारित कृषक संगठन

किसान और उपभोक्ता के बीच सीधा संपर्क स्थापित करने हेतु सामग्री आधारित कृषकों

के संगठनों को प्रोत्साहित करना चाहिए।

सुदीर्घ आपूर्ति शृंखला-कृषकों के संगठन-सीधी बिक्री

आपूर्ति शृंखला लंबी होती है और बिचौलिये अपना हिस्सा बिना किसी मूल्य संवर्धन के या मामूली मूल्य संवर्धन के भी इसमें जोड़ देते हैं, जिससे अंतिम उपभोक्ता तक पहुंचते-पहुंचते दामों में काफी वृद्धि हो जाती है। इसमें उत्पादक का कोई हिस्सा नहीं होता। किसानों के संगठनों और किसानों द्वारा सीधे उपभोक्ता को माल बेचने को बढ़ावा दिया जाना चाहिए।

फसल कटाई के बाद वाले कार्य

फसल कटाई, गहाई, खलिहान, बोरों में भराई तथा परिवहन में अनाज का काफी नुकसान होता है जिससे किसानों के साथ देश की भी काफी हानि होती है। विस्तार कर्मचारियों/पीआरआइज़ को फसल कटाई के बाद की बेहतर प्रबंधन प्रक्रियाओं को अपनाने के लिये किसानों को शिक्षित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभानी होगी। जैसा पहले कहा जा चुका है, प्रत्येक कृषि विज्ञान केंद्रों में फसलोपरांत प्रौद्योगिकी शाखा शुरू करने की आवश्यकता है।

न्यूनतम समर्थन मूल्य पर क्रियान्वयन

सभी क्षेत्रों में न्यूनतम समर्थन मूल्य प्रणाली पर अमल में पर्याप्त सुधार की आवश्यकता है। धान और गेहूं के अलावा अन्य अनेक महत्वपूर्ण फसलों के लिये भी न्यूनतम समर्थन मूल्य प्रणाली लागू किया जाना चाहिए। इनमें ज्वार-बाजरा रहित मोटे अनाज भी शामिल हैं। बिना न्यूनतम समर्थन मूल्य के सहारे के किसानों को फसलों के विविधीकरण की सलाह घातक नतीजे भी दे सकती है।

एमआईएस

केंद्र सरकार की बाज़ार हस्तक्षेप योजना के तहत संवेदशनशील (आवश्यक) वस्तुओं की मूल्य स्थिति पर आवश्यकतानुसार हस्तक्षेप करने के लिये करीब से नज़र रखने की आवश्यकता है; खासकर उस समय जब बाज़ार में उन वस्तुओं की भरमार हो।

तटकर

संसाधनों की दृष्टि से कमज़ोर उत्पादों पर तटकर पर भी सावधानी पूर्वक नज़र रखने की जरूरत है। इसे ऐसे स्तर पर बनाए रखना होना जिससे शुष्क कृषि क्षेत्र के किसानों को पर्याप्त प्रोत्साहन मिले।

उत्पादन-पूर्व विक्रय समझौता

किसानों और कारपोरेट घरानों/प्रसंस्करण कंपनियों/अन्य के बीच उत्पादन के पूर्व ही बिक्री के लिये किए गए समझौतों का उपयोग अनेक प्रकार की सब्जियों और फलों/औषधीय पौधों आदि के मामले में तेज़ी से बढ़ रहा है। इस तरह के कृषि-व्यापार को कुछ लोग संविदा कृषि अथवा ठेके पर खेती का नाम देने लगे हैं। हालांकि इसमें से अधिकांश मामलों में किसानों और संभावित क्रेता के बीच कोई औपचारिक समझौता या संविदा नहीं होती। इस तरह की व्यवस्था कृषि व्यापार करने वाले संगठनों के पक्ष में अधिक झुकी हो सकती है। परंतु यह व्यवस्था पर्याप्त/सामयिक ऋण, बढ़िया किस्म के कृषि आदान, नयी प्रौद्योगिकी, रोज़गार के अवसरों, नयी फसलों से परिचय, उत्पादन और विपणन जोख़िमों का पृथक्करण और बेहतर कृषि कार्य व्यवहार आदि जैसे मामलों में किसानों के लिये भी फायदेमंद साबित हुई है। आवश्यकता इस बात की है कि एक ऐसा आदर्श किसानोन्मुखी समझौता तैयार किया जाए जो स्पष्ट, समानधर्मी और व्यापक संदर्भों वाला हो और जिसको किसानों के खिलाफ इस्तेमाल नहीं किया जा सके। गुणवत्ता मानकों, समझौते से बाहर आने की शर्तों, मूल्य निर्धारण मानकों; भुगतान व्यवस्था, ईश्वरीय विधान अैर मध्यस्थता व्यवस्था से संबंधित धाराओं के बारे में विशेष सावधानी रखने की जरूरत है। जब तक इस तरह की आचार संहिता लागू नहीं होती और समूहों/सहकारिताओं के गठन से किसान जब तक व्यापारियों से व्यवहार करने के लिये शक्तिसंपन्न नहीं हो जाते तब तक इन व्यवस्थाओं के बारे में सावधान रहने की आवश्यकता है।

इसप्रकार, राष्ट्रीय कृषि नवीकरण वर्ष कार्यक्रम, 2006-07 के दौरान मिट्टी की स्वास्थ्य गुणवत्ता में सुधार, सिंचाई वाले क्षेत्र के विस्तार के साथ-साथ पानी के उपयोग में दक्षता, कुशलता और समानता, ऋण एवं बीमा सुधार, प्रौद्योगिकी उन्नयन और प्रसार तथा कृषक केंद्रित विपणन पर एक साथ ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है। कृषि नवीकरण कार्यक्रम का उद्देश्य कृषि योग्य भूमि और सिंचाई जल की प्रत्येक इकाई की उत्पादकता में वृद्धि, उच्च लाभदेयता, खेतों में और खेतों के बाहर रोज़गार के अवसरों में वृद्धि और दीर्घकालिक पर्यावरणीय धारणीयता बनाए रखना है। संकट वाले स्थलों की ओर प्राथमिकता आधार पर ध्यान दिए जाने की ज़रूरत है।

वैश्विक अर्थव्यवस्था में हमें अपने गांवों में रहने वाले और अपनी आजीविका के लिये कृषि, पशुपालन, अंतर्देशीय और सागरीय मत्स्यपालन, वानिकी और कृषि वानिकी और कृषि प्रसंस्करण पर निर्भर करने वाले 70 प्रतिशत लोगों के श्रम और आय की सुरक्षा के लिये उपयुक्त संस्थागत व्यवस्था और नीतियां विकसित करनी होंगी। जोख़िम को नियंत्रित और मूल्यों को स्थिर रखने वाले विशेष प्रकार के कोषों की आवश्यकता होगी। सभी प्रौद्योगिकी मिशनों और लघु कृषकों के कृषि व्यवसायों के संगठन का पुनर्गठन सक्षम पेशेवर प्रबंधन के तहत किया जाना चाहिए। सभी मिशनों को एक ऐसा समयबद्ध लक्ष्य दिया जाना चाहिए जिनकी माप-तौल की जा सके। मिशन के निदेशक पद पर किसी प्रतिष्ठित पेशेवर व्यक्ति को नियुक्त किया जाना चाहिए और उसे कम से कम पांच वर्ष तक अपने पद पर बने रहना चाहिए।

किसानों को कृषि के क्षेत्र में अपनी स्पर्धात्मक क्षमता बढ़ाने के लिये उपयुक्त संस्थागत समर्थन की आवश्यकता है। छोटे जोतों की उत्पादकता और लाभदेयता में वृद्धि हेतु छोटे किसान परिवारों को समुचित शक्ति

और आर्थिक स्वतंत्रता देने के लिये संस्थागत समर्थन आवश्यक है। संसाधन विहीन कृषक परिवारों की आर्थिक सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिये जीविका कमाने के अन्य अवसर भी उपलब्ध होने चाहिए। मिश्रित कृषि और सुधरी हुई फसलोपरांत प्रौद्योगिकी से प्राथमिक उपज का मूल्य संवर्धन होगा और इसी से किसानों की आय बढ़ाने का लक्ष्य भी पूरा होगा।

केंद्रीय वाणिज्य और उद्योग मंत्री और केंद्र सरकार ने हांगकांग में हाल ही में हुई डब्ल्यूटीओ वार्ता में हमारे कृषक भाई-बहनों के हितों की रक्षा की दिशा में सराहनीय कार्य किया है। उन्होंने सभी प्रभावित देशों का एक व्यापार आधार वाला गठबंधन तैयार किया है। परंतु कृषि वार्ताओं को स्थगित करने के समझौते से 1994 में मराकेश में हुए असमान व्यापार सौदे की अवधि और बढ़ जाएगी। राष्ट्रीय स्व-सशक्तीकरण उपाय के रूप में हमें भी भारतीय व्यापार संगठन के गठन के बारे में विचार करना चाहिए और डब्ल्यूटीओ की तर्ज़ पर हमें भी घरेलू कृषि के समर्थन के लिये नीले, हरे और पीले रंग के डिब्बे रखने चाहिए। पशुधन सहित हमारे वार्षिक कृषि उत्पादन का मूल्य 2002-03 में 56 खरब 5 अरब 16 करोड़ रुपये थी। इसी वर्ष में हमारी कृषि सामग्री का निर्यात मूल्य तीन खरब 46 अरब 54 करोड़ रुपये का था जो कुल कृषि उत्पादन का मात्र 6.18 प्रतिशत था। इस प्रकार स्पष्ट है कि हमारी कुल कृषि सामग्री का मामूली हिस्सा ही विश्व बाज़ार में पहुंच पाता है। असल में, एक अरब की आबादी वाले हमारे देश में ही घरेलू बाज़ार काफी बड़ा है। अत: हम किसानों को जो थोड़ा-बहुत समर्थन देते हैं, उसे दो समूहों में अलग-अलग कर दिया जाना चाहिए। इसमें से एक समूह वह होगा जो छोटे किसानों के जीवन और आजीविका को बचाने के लिये दिया जाता है और दूसरा वह होगा जिसे विश्व बाज़ार में व्यापार में घाटे की स्थिति में दिया जाता है। भारतीय व्यापार संगठन डब्ल्यूटीओ मामलों में विशेषज्ञता रखने वाला वास्तविक संगठन हो सकता है। जानकारी भरे और महत्वपूर्ण निर्णय लेने की स्थिति में यह सरकार के लिये बुद्धि और सूचना के बैंक के तौर पर काम कर सकेगा। यह कृषि व्यापार पर नज़र रखते हुए प्रमुख कृषि जनित सामग्रियों के बाज़ार में आधिक्य और अभाव की संभावनाओं के बारे में सामयिक सलाह दे सकता है। भारतीय व्यापार संगठन को छोटे किसान परिवारों के लिये मित्र और पथ- प्रदर्शक का काम करना चाहिए। भूमि उपयोग और फसल योजना के बारे में त्वरित निर्णय लेने में इसे गरीब किसान परिवारों की मदद क लिये इसे आगे आना चाहिए। इसे आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन वाले देशों के सब्सिडी, प्रौद्योगिकी और पूंजी प्रभावित कृषि व्यापार प्रतिमानों के भीषण आक्रमण से संसाधन विहीन कृषक परिवारों को बचाने में मदद करनी चाहिए। इसके लिये प्रस्तावित राष्ट्रीय भूमि उपयोग सलाहकार सेवा, भारतीय व्यापार संगठन के एक हाथ के रूप में काम कर सकता है। इसके अलावा इस संगठन को ग्राम ज्ञान केंद्रों के राष्ट्रीय नेटवर्क के जरिये व्यापार और गुणवत्ता के बारे में साक्षरता फैलाने का काम भी करना चाहिए। इसे स्वास्थ्य तथा स्वच्छता संबंधी उपायों की व्यवस्था पर नज़र रखनी चाहिए और खाद्य सुरक्षा के अंतरराष्ट्रीय मानकों के पालन को सुनिश्चित करने पर ध्यान देना चाहिए। भारतीय व्यापार संगठन घरेलू और विदेश व्यापार के संबंध में दीर्घकालीन स्मरण प्रणाली विकसित करने में मदद करेगा जो विश्व व्यापार की विपरीत प्रवृत्तियों से बचाने के लिये हमें सामयिक राष्ट्रीय कार्रवाई के लिये प्रेरित करेगा।

ग्रामीण भारत में जीवन और जीविकाओं की सुरक्षा के लिये प्रस्तावित संरचनाओं की योजना संबंधी रूपरेखा निम्नानुसार है :

बिना उपयुक्त संस्थागत संरचनाओं के समर्थन के कृषक परिवारों की मुसीबतों का सामना करना पड़ेगा। यहां यह ज़ोर देना उचित होगा कि प्रस्तावित भारतीय व्यापार संगठन जनसाधारण द्वारा उत्पादन श्रेणी की खेती की विशिष्ट समस्याओं को प्राथमिकता देगा। अपनी आजीविका के लिये खेती करने वाले किसान भाई-बहनों और विशाल कृषि व्यापार संगठनों दोनों को नीतिगत समर्थन चाहिए। परंतु दोनों की मांगें एक-दूसरे के विपरीत हैं। संगठन को इन विपरीत नीतिगत समर्थनों पर लगातार ज़ोर देते रहना होगा।

प्रस्तावित राष्ट्रीय और राज्य स्तरीय भूमि उपयोग सलाहकार सेवाएं संगठन के एक भाग के रूप में काम कर सकती है, क्योंकि यह ये सुनिश्चित करने में मदद कर सकता है कि भूमि और जल उपयोग के बारे में दी गई ज़रूरी सलाह घरेलू और विदेश व्यापार अवसरों के सर्वोत्तम उपलब्ध आकलन पर आधारित है।

और अंत में हमें लगातार हो रहे कृषि के पतन पर मूक दर्शक नहीं बने रहना चाहिए। मानव सुरक्षा और राष्ट्रीय प्रभुसत्ता, दोनों ही दांव पर लगे हैं। समग्र आर्थिक विकास का तब तक कोई अर्थ नहीं है, जब तक हम अपनी जनसंख्या के 60 प्रतिशत लोगों के आर्थिक स्वास्थ्य और उत्तरजीविता पर ध्यान नहीं देते। यदि कृषि नवीकरण वर्ष के कार्यक्रम पर तेज़ी से और समर्पण की भावना से काम किया गया तो बिना सामाजिक और पर्यावरणीय हानि के यह हमारे खेतों की उत्पादकता और लाभदेयता में निरंतर सुधार लाकर देश को एक सदाबहार हरित क्रांति के पथ पर ले जाने में मदद कर सकेगा। छोटे जोतों की उत्पादकता में सुधार का एक अकेला कदम ही देश से भूख और ग़रीबी मिटाने में सबसे बड़ा योगदान होगा। इसी के साथ, फसलोपरांत प्रौद्योगिकी और कृषि प्रसंस्करण में प्रस्तावित आईसीएआर -सीएसआईआर के 60 हजार प्रयोगशाला से खेतों तक प्रदर्शन कार्यक्रमों के जरिये गैर-कृषिगत रोज़गार के अनेक अवसरों के साधन से ही देश भारत निर्माण के पूर्व लाभों को हासिल कर सकेगा। ❑

(लेखक राष्ट्रीय कृषक आयोग के अध्यक्ष हैं)

हिन्दी माध्यम में **दर्शनशास्त्र** को समर्पित संस्थान -

K.K EXCELLENCE I.A.S. ACADEMY

के.के. सर के मार्ग-दर्शन में विगत 5 वर्षों से कई विद्यार्थी दर्शनशास्त्र में 350 से अधिक अंक ला कर सफलता प्राप्त कर चुके हैं। आप भी "Target 2006" में शामिल होकर विषय का सहज ज्ञान प्राप्त कर सकतें है। हमारा मानना है कि सफलता का मूल आधार विषय का प्रामाणिक ज्ञान और उसके सशक्त प्रस्तुतीकरण पर निर्भर करता है।

नामाकंन प्रारम्भ - केवल 40 सीट

विशेष :-

संस्थान मुख्य परीक्षा-2006 को ध्यान में रखते हुए दर्शनशास्त्र का टेस्ट शुरू करने जा रहा है। यह टेस्ट यू.पी.एस.सी. मुख्य परीक्षा की तर्ज पर 3 घंटे का होगा। अगले तीन दिन टेस्ट में पूछे गए प्रश्नों पर विस्तृत चर्चा होगी और प्रत्येक विद्यार्थी को व्यक्तिगत स्तर पर यह बताया जायेगा कि वह कहाँ गलती कर रहा है और उसे कैसे ठीक कर एकता है।

English Compulsory by B.N. Mishra

After Pre Result

203, भंडारी हाऊस (पोस्ट ऑफिस के ऊपर), मुखर्जी नगर, दिल्ली-9 फो. 9868330380

YH-8/6/07

भारतीय कृषि : समस्याएं एवं संभावनाएं

○ योगेन्द्र के. अलघ

नब्बे के दशक में कृषि का विकास पिछड़ गया, अर्थव्यवस्था में ग्रामीण-शहरी हिस्से के रूप में संरचनात्मक परिवर्तन धीमा हो गया और ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों में असमानता बढ़ गई। मैं पिछले कुछ अरसे से यह कहता आ रहा था और योजना की मध्यावधि समीक्षा (योजना आयोग, 2005) के साथ ही अब यह अधिकृत बयान बन गया है। ख़बर है कि वित्तमंत्री ने एक समझदारीभरा बयान दिया है कि "अर्थव्यवस्था ठीक-ठाक है, परंतु हमें नहीं पता कि कृषि का क्या करें"। कृषि में प्रगति के बिना समग्र विकास एक मृगतृष्णा बन कर रह गई है।

कृषि क्षेत्र की बीमारी की पहचान तो भली-भांति हो गई है, परंतु उत्तर देना वास्तव में बड़ा मुश्किल है। घिसी-पिटी बातों को बार-बार दोहराने से उस पर कोई विश्वास नहीं करेगा, क्योंकि वे असफल रही हैं। नये समाधान ठीक तरह से तैयार नहीं किए गए हैं वे विवादास्पद भी हैं और उनके विकल्प भी अप्रिय हैं। क्या हम कम से कम, सही सवाल पूछ सकते हैं? निम्नांकित स्वत: स्पष्ट प्रस्ताव हम बिना प्रमाण के विचारार्थ पेश करते हैं:

व्यापक और दीर्घकालिक आधार पर होने वाला कृषि विकास ग्रामीण विकास की पूर्व शर्त है। बाज़ार आधारित और दिनोंदिन मुक्त होती जा रही अर्थव्यवस्था में ऐसा तभी संभव हो सकेगा जब सुधार प्रक्रिया में फसल उत्पादन को लाभदायक बनाने का प्रयास किया जाएगा और यह बात केवल मुक्त अर्थव्यवस्था में ही नहीं बल्कि अति विकृत वैश्विक और राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था पर भी लागू होती है। इन नीतियों को विश्व व्यापार संगठन की नीतियों के अनुकूल ही होना चाहिए और यदि वे किसी रणनीति के आधार पर बनाई गई हैं तो बाज़ार अर्थव्यवस्था के अनुकूल भी होना चाहिए (प्रत्येक फसल के लिये वसूली मूल्यों और सरकारी खरीद तथा व्यापारिक एजेंसियों की सुझाव देने वाली नीति, समय की बर्बादीभर है)।

- गैर-फसल आधारित कृषि भी महत्वपूर्ण है। दीर्घकालिक विकास के लिये यदि व्यावसायिक दृष्टिकोण से काम किया जाए तो पशुपालन के साथ, पेड़ों के जरिये भी उच्च विकास दर प्राप्त की जा सकती है। (आदिवासियों को आदिम निर्धनता में ही रहना चाहिए और वनों को छूना भी नहीं चाहिए, ऐसे विचार बॉलीवुड (मुंबइया फिल्मों) के लिये ही छोड़ देना चाहिए।
- भूमि एवं जल विकास नीतियां व्यापक आधार वाले कृषि विकास की पूर्व शर्तें हैं। इस उद्देश्य के लिये लाभार्थी आधारित संगठन बनाना ज़रूरी है और इनको बनाए रखने के लिये वित्तीय नियम भी बनाने होंगे (सरकारी बोर्डों द्वारा पंचायतों को अनुदान देने की नीति अव्यावहारिक है, कोई भी पंचायत को उधार नहीं देगा)।
- प्रौद्योगिकीय छलांग लगाने की प्रक्रिया को सक्रियता से आगे बढ़ाने की आवश्यकता है (बीटी कॉटन, संकर धान और नये गेहूं के प्रति ब्राह्मणवादी नापसंदगी को उसी प्रकार की घृणा के साथ नकार देना चाहिए क्योंकि उच्च जातियों के पूर्वाग्रह मैदानी कामयाबियों के खिलाफ़ होते हैं)।
- बाज़ार से आहत होने वाले लोगों की देखभाल के लिये भी नीतियां बनानी ज़रूरी है। वैश्विक अर्थव्यवस्था की अति विकृत स्थिति में ऐसे आहतों की संख्या काफी अधिक हो सकती है। जहां तक संभव हो, विशेष रोज़गार नीतियों का एकीकरण व्यापक आधार वाले कृषि विकास प्रतिमानों से किया जाना चाहिए।

इन उपदेशों की कोई आवश्यकता नहीं होती, यदि वे उन प्रभावशाली समूहों द्वारा विवादग्रस्त न बना दी गई होतीं, जो या तो यह तर्क देते हैं कि रणनीतिक हस्तक्षेप अनावश्यक है क्योंकि विश्व अर्थव्यवस्था के साथ अपनी अर्थव्यवस्था को जोड़ देना ही पर्याप्त है। उनके मुताबिक निर्धनों के लिये नीतियां सिर्फ एक बार के लिये ही होनी चाहिए, क्योंकि उनका सबके साथ एकीकरण अन्यायपूर्ण है या कि अपनी युवावस्था में सम्मानित नीति-निर्धारकों द्वारा विकसित पुरानी स्थैतिक नीतियों की ओर लौटना ही उचित होगा।

भयावह सच्चाई

अस्सी के दशक में प्रभावी प्रदर्शन के बाद खाद्य और कृषिजनित अर्थव्यवस्था नब्बे के दशक में धीमी पड़ गई। अनुकूल मौसम के बावजूद अनाज से तिलहन, कपास और अन्य नकदी फसलों का विविधीकरण रुक गया। प्रमुख राज्यों में कृषि का विकास मंद पड़ गया और कुछ निर्धन राज्यों में तो प्रतिव्यक्ति आय ऋणात्मक रही।

कृषि के विकास में बाधक तत्व

1980 के दशक के शुरू से ही सिंचाई पर सार्वजनिक निवेश कम होता गया। आर्थिक

सुधारों के बाद से शुरू हुए दशक से कृषिजनित मुनाफे में 14.2 प्रतिशत की गिरावट आई है। इससे पूर्व, निजी क्षेत्र में कृषि की निश्चित पूंजी का आकार लगातार बढ़ रहा था, हालांकि सार्वजनिक क्षेत्र में यह लड़खड़ा गया था। परंतु पिछले कुछ वर्षों में कृषि में निजी क्षेत्र का निवेश गिर गया, हालांकि सार्वजनिक क्षेत्र में कुछ सुधार देखा गया। मुनाफे में कमी के साथ-साथ, नयी लाभप्रद प्रविधियों की उच्च लागत और कुछ हद तक उनकी अनिश्चितता का परिणाम यह रहा कि लाभप्रद खेती के लिये किसान को भारी जोखिम उठाना पड़ता था। इस सच्चाई को समझने में और उसे दूर करने में सरकार की असफलता के कारण किसानों को असुरक्षा, कंगाली और गंभीर दारिद्य का सामना करना पड़ा। अनेक किसानों के लिये तो आत्महत्या की नौबत आ गई। आदाय के विकास में गिरावट आ गई। नब्बे के दशक का पूर्वार्द्ध कृषि व्यवसाय के विस्फोटक विकास का युग था। निर्यात की तुलना में आयात में अधिक वृद्धि हुई। उत्तरार्द्ध में, आयात में वृद्धि तो बनी रही, निर्यात चरमरा गया।

नब्बे के दशक में जब भारत ने मराकेश समझौते पर हस्ताक्षर किए, तब एक ज़ोरदार झुकाव इस ओर था कि कृषि व्यापार में होने वाले लाभ को हासिल करने के लिये कोई नीतिगत रणनीतिक ढांचा नहीं बनाया जाना चाहिए। अस्सी के दशक के सुधार के विपरीत व्यापार सुधार के बारे में भारत की कोई राय नहीं थी। विश्व उन बड़े देशों के साथ ठीक से पेश नहीं आता जो अपना गृहकार्य ठीक से नहीं करते। भारत को इससे नुकसान हुआ (वास्तव में, एशियाई देशों को भी नुकसान उठाना पड़ा। अलघ ने संयुक्त राष्ट्र के लिये वियतनाम के बारे में अध्ययन करते हुए इस बात का उल्लेख किया है। इस अध्ययन में बताया गया है कि यह बीमारी कोरिया, थाईलैंड, चीन, जापान और इंडोनेशिया में भी व्याप्त थी)। बाज़ार आधारित अर्थव्यवस्था में लाभप्रदता से संसाधन आवंटन के तगड़े संकेत प्राप्त होते हैं, अल्प अवधि के लिये और निवेश के लिये भी। संसाधन के उपयोग की लाभप्रदता महत्वपूर्ण है, केवल भूमि की उत्पादकता नहीं।

अल्पावधि कठिनाइयां, भूमि और जल संसाधनों के अभाव से विकास पर थोपी गई बुनियादी चुनौतियों की सीमाओं में ही विश्राम पाती हैं। प्रतिव्यक्ति कृषि योग्य भूमि जो 1979-81 के दौरान 0.24 हेक्टेयर थी, वह 1997-99 में घट कर 0.10 हेक्टेयर रह गई। प्रतिव्यक्ति कृषि योग्य भूमि लगभग उतनी ही है जितनी चीन में। 'पूर्व एशियाई समाजों में दशकों से चले आ रहे भूमि के अभाव से काफी चिंता है। इस बात पर ध्यान नहीं दिया जा रहा है कि विकास पूर्णतया उत्पादकता में सुधार अथवा फसल-सघनता में वृद्धि पर ही निर्भर करता है। लेकिन भारत पर यह नहीं लागू होता। इसके स्थान पर, नदियों के परस्पर जुड़ाव, रैयत प्रणाली के बदले बहुराष्ट्रीय कंपनियों के नेतृत्व में होने वाली संविदा खेती, फलों का निर्यात और इसी तरह के अन्य कल्पना लोकों में विचरण करने की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है।

नयी व्यवस्था

विश्व व्यापार संगठन से प्रभावित नयी व्यापार आधारित कृषि के लिये नये प्रभावी उपायों की आवश्यकता है। न केवल पुरानी विश्वसनीय लागत-मूल्य गठबंधन वाली नीतियों पर निर्भरता की ज़रूरत है, बल्कि तटकरों, ऋण नीतियों, सार्वजनिक निवेश, पूरक सामुदायिक प्रयासों और वृहद तथा बाज़ार ढांचे जैसे बाज़ार के साधनों की भी आवश्यकता होगी, जिससे नयी चुनौतियों का सामना किया जा सके। इसके वास्तविक नीतिगत विकल्प हैं- बाज़ार का निर्माण, उपलब्ध आर्थिक अवसरों की सूचना प्रणाली का विकास और संचार, प्रसंस्करण, मानकीकरण, गुणवत्ता उन्नयन और व्यापार के लिये काम करने और आर्थिक सहायता देने वाले महत्वपूर्ण संगठनात्मक ढांचों तथा वित्तीय संस्थानों की रूपरेखा तैयार करना। किसानों को उत्पादकता में सुधार और विविधीकरण के लिये बेहतर ऊर्जा और जल आपूर्ति की आवश्यकता है। कृषि के लिये आवश्यक सामग्रियों के आदाय तथा सेवाओं के साथ-साथ भूमि विकास संबंधी प्रविधियां किसानों को सरलता से उपलब्ध होनी चाहिए।

दिनोंदिन यह बात स्वीकार की जाने लगी है कि विश्व बाज़ार की दक्षता और स्थानीय संरचनाओं को ध्वस्त करने पर उपदेश देने तथा बैठे-बैठे रामराज्य की प्रतीक्षा करने से वैश्विक अवसर नहीं हाथ आएंगे। पूरी तरह से अपूर्ण और अविकसित विश्व व्यवस्था में इस तरह के प्रयास अपर्याप्त रहेंगे। अशोक गुलाटी जैसे विशेषज्ञों ने काफी लंबे समय तक इसी तरह की मन:स्थितियों की तरफदारी की और यह मानते रहे कि मुख्य समस्या एएमएस के नकारात्मक होने की है। उन्होंने अब अपनी स्थिति को सुधारा है और स्थानीय विद्वानों के विचारों के समीप आ गए हैं (देखें अलघ, 2003 और ए. सेन तथा एम.एस. भाटिया, 2004)। मई 2005 में जारी एक अध्ययन में यह कहा गया है कि:

"पहले के अध्ययन की तुलना में हम नब्बे के दशक में भारतीय कृषि के प्रति हम कम असरंक्षण देखते हैं।" (देखें के. मल्लेन डी. ऑरडेन और ए. गुलाटी, आईएफएफपी आरआई, 2005)

यह संदर्भ भारत के लिये कठिन होगा। इस बात को स्वीकार करना होगा कि:

1. भारत कृषि के साथ उतना भेदभाव नहीं करता जैसा पहले किया करता था।
2. चावल और गेहूं के मामले में अब नये अवसर उपलब्ध हैं।
3. भारत कृषि को बड़े पैमाने पर सब्सिडी देता है। भारतीय अनुदानों पर आगे चर्चा की जाएगी। सुधार प्रक्रिया को विश्व व्यापार संगठन के अनुकूल होना पड़ेगा।

हमें प्रमुख फसलों की ऐसी रूपरेखा तैयार

करनी होगी जो ऐतिहासिक लागतों पर नहीं बल्कि अवसरगत लागातों पर आधारित होगी, ताकि प्रौद्योगिकी प्रगति के साथ भारत के अनुकूल मौसम और सस्ते श्रम जैसे स्पर्धात्मक कारणों को खोलने का मुक्त अवसर मिल सके। किसान को मूल्य तय करने और मूल्य तय नहीं करने, दोनों प्रकार के प्रोत्साहन देने चाहिए जिससे वह सुपरिभाषित और सीमित अवधि में संक्रमण की लागत को आत्मसात कर सके। समर्थन की उच्चस्तरीय नीतियों पर अमल करना ज़रूरी है ताकि तीन से पांच वर्ष की अवधि में स्पर्धात्मक कृषि की लागत का खर्च निकाला जा सके।

वर्ष 2002-03 में आयातित खाद्य तेल का अनुपात घरेलू उत्पादन की तुलना में 95 प्रतिशत था। उदाहरणार्थ, गन्ने की फसल के मामले में 18 महीने के प्राकृतिक चक्र को, नब्बे के दशक के उत्तरार्ध में चीनी के आयात ने विकृत कर दिया था। कपास की मांग के छठे अथवा पांचवें हिस्से का आयात भी समस्या का कोई उचित समाधान नहीं है।

हमने अन्यत्र एक 'इफिशियेन्सी शिफ्टर' की अवधारणा का उल्लेख किया है जो अत्यंत मामूली उपज देने वाली भारतीय कृषि को गतिशील स्पर्धात्मक क्षेत्र की ओर ले जा सकती है। इसके लिये वह किसानों की पारंपरिक सहनशक्ति और परिश्रमी स्वभाव तथा वास्तविक संपदा से संपन्न राष्ट्र के संसाधनों का लाभ उठा सकती है। कृषि को स्पर्धात्मक रूप देने के लिये किसान को बढ़िया खेती के लिये उत्पादन लागत के मद में समर्थन देना होगा। ये लागत मौजूदा कार्यपद्धतियों को मुद्रा के रूप में बदल देते हैं, अपनाने और सीखने का तात्कालिक खर्च वहन करते हैं और कभी-कभी आवश्यक नयी सामग्री के मूल्य में निहित होते हैं। इनमें से कई की तो तुरंत ही जरूरत होती है जिनके आरंभिक समर्थन और झुकाव के बाद किसान स्वयं ही स्पर्धा में उतर आएगा। इस तरह की अर्थव्यवस्था की पूंजी लागत, न्यूनतम आधार पर ऐतिहासिक लागतों से अधिक ही होगी। परंतु मौजूदा उत्पादन लागत प्रति इकाई उत्पादन के हिसाब से कम ही रहेगी।

निम्नांकित रेखाचित्र में इन लागतों से अधिक और कम वाली कृषि श्रेणियों को दर्शाया गया है। इन आंकड़ों में दर्शाई गई वक्र रेखाओं में पीली रेखा उस औसत को बताती है जो सीएसीपी ने समर्थन मूल्य की गणना का उदाहरण देने के लिये इस्तेमाल की हैं। समस्या अब कृषि अर्थव्यवस्था के परिवर्तन की दिशा को नीले से मेजेंटा की वक्र रेखाओं की ओर मोड़ने की है।

हमने जानबूझ कर धान का उदाहरण दिया है, क्योंकि भारतीय कृषि के संदर्भ में अनाज की अनदेखी करना एक रिवाज़ है। गैर-अनाज की खेती और अनाज की खेती की उत्पादकता में सुधार एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। अधिक फूल उत्पादन के पैरोकार यह नहीं समझ पा रहे हैं कि एक की अनदेखी से दूसरे को भी हानि पहुंचेगी। कांग्रेस अध्यक्ष श्रीमती सोनिया गांधी ने जब मुझसे नवंबर 2002 में माउंट आबू में आयोजित अपनी पार्टी के मुख्य मंत्रियों के सम्मेलन में कृषि और ग्रामीण विकास पर अपने विचार रखने के लिये कहा तो मैंने कहा कि "खाद्यान्न के क्षेत्र में निर्मित शक्ति की अनदेखी करना एक भूल होगी"। इससे पूर्व पंजाब और हरियाणा को विश्व व्यापार संगठन के अनुरूप सामंजस्य बिठाने की सलाह देते समय हमने कहा कि भारत को

रेखाचित्र 4.2 : उपज बनाम मशीनरी एवं भूमि किराया लागत

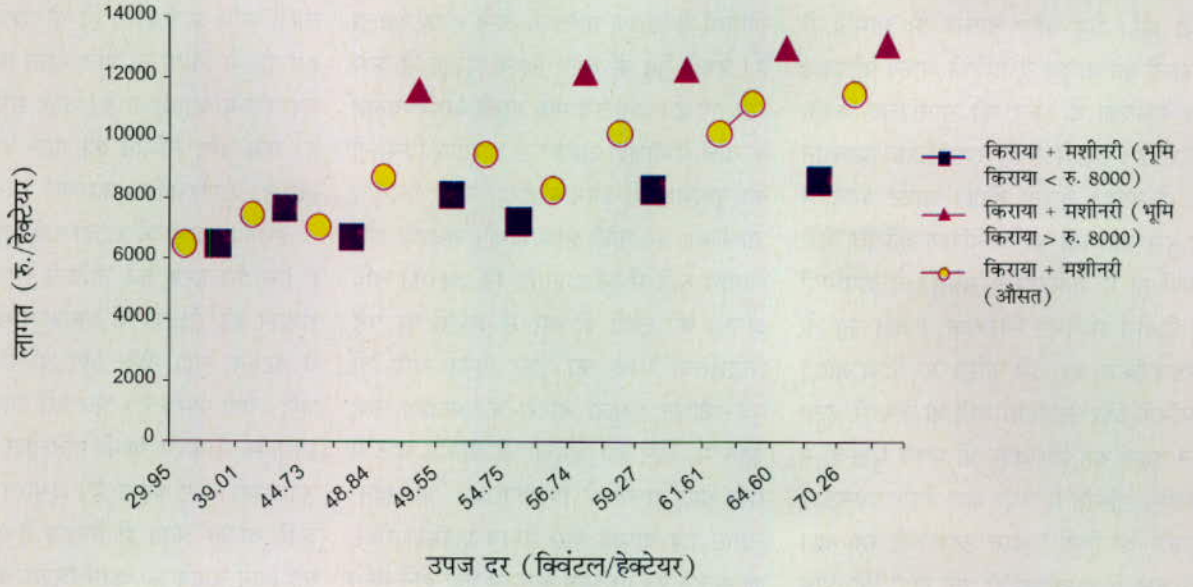

वैश्विक अन्न-मूल्यन चक्र से बाहर निकलना होगा और देश को अपनी ताकत इस क्षेत्र के तकनीकी समर्थन के लिये लगानी चाहिए। संकर बीजों सहित नयी प्रविधियों को अनुसंधान के चरण से आगे बढ़कर सफलता दिखानी होगी। यदि मूल्य नीति ने उचित प्रोत्साहन दिया तो गेहूं की विशेष किस्मों और मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़ और पूर्वी राज्यों की चावल अर्थव्यवस्था को पुनर्जीवन मिल सकेगा। कम समय में पकने वाली फसलें, तिलहनों, दालों, फलों और सब्जियों के लिये रास्ता साफ हो सकेगा। बदले में, मुझे लगता है कि पंजाब को एनडीए सरकार से गैर-अन्न की खेती को अपनाने के लिये अर्जन मूल्य तय करने की मांग करने की सलाह देना गलत था। सरकार ने उस पर ध्यान ही नहीं दिया।

मैंने समझाने की कोशिश की कि न केवल भारतीय खाद्य निगम की सोच, बल्कि बाज़ार और उनका विकास तथा प्रसंस्करण मुख्य भूमिका निभाएंगे। हम कुशलतापूर्वक व्यापार करना कब सीखेंगे? कभी देश बड़ी मात्रा में गेहूं का निर्यात करता है, तो कभी उससे ज्यादा आयात। 1987-88, 1991-92, 1995-96 और 1996-97 के वर्षों में घरेलू उत्पादन का करीब आधा निर्यात किया गया, जबकि इन वर्षों के ठीक बाद के वर्षों में आयात में बेतहाशा वृद्धि हुई। गेहूं और चावल के मामले में किसानों को बाज़ार सुधारों के जरिये परिवहन और गुणवत्ता में अंतर को सुनिश्चित करना ज़रूरी है। इसके लिये रणनीतिक गठबंधन को प्रोत्साहित करना होगा। माउंट आबू में मैंने इस बात की बड़ी कोशिश की कि मेरी अध्यक्षता में सहकारिता समिति ने कंपनियों का द्वितीय संशोधन विधेयक, 2004 का जो प्रस्ताव किया था, उसे पारित कर दिया जाए। कंपनियों और उत्पादक संघों के नाम से जाना जाने वाला यह विधेयक श्री प्रणव मुखर्जी ने संसदीय समिति में मंजूर करा लिया। एनडीए सरकार के लिये 'भारत उदय' हो रहा था। मुझे बाद में अख़बारों से पता लगा कि आबू में रखे गए मेरे इन विचारों ने विवाद खड़ा कर दिया था। मुझे राजीव गांधी फाउंडेशन के एक प्रकाशन में अपने भाषण के साथ अग्रलेख लिखने का अवसर मिला जिसका विषय था, 'पंचायतों को ग्रामीण क्षेत्रों के कार्यकलाप के केंद्र में रूपांतरित करना'। यह विचार मणिशंकर अय्यर का था। परंतु यह विचार भी अनाज और विविधीकरण की रणनीति के आसपास कहीं नहीं था।

ख़बरों के अनुसार वसूली का काम देख रहे अफसरों ने उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री को इस बात के लिये राजी करा लिया कि गेहूं के ऊंचे बाज़ार मूल्य घातक सिद्ध होंगे अत: इससे बचना चाहिए। ज़रूरी हो तो इसके लिये सख़्ती भी बरती जाए ताकि अन्य राज्य भी इसे अपने यहां लागू नहीं कर सकें, चाहे वह बढ़िया किस्म का गेहूं हो या संकर बीज हो। राज्यों को इस बात के लिये हतोत्साहित करना होगा कि वे व्यापार के अंतर को अनुमति न दें अथवा गोदावरी डेल्टा या अलेप्पी के धान के खेतों को मिश्रित मछली-धान संस्कृति में बदले जाने का अवसर दें। जैसा कि कुछ लोगों ने तर्क दिया है इसका हल सरकार द्वारा प्रायोजित कोई अन्य भारतीय व्यापार संगठन गठित करना नहीं है।

पिछले पंद्रह वर्षों में अपनाई गई गलत नीतियों के कारण भारत के अन्न भंडार खाली हैं। हमारे गेहूं के मूल्य विश्व मूल्यों से कम रखे गए हैं। इसलिये एक खुली अर्थव्यवस्था के ढांचे में मौजूदा आयात से भारतीय किसानों का नुकसान ही अधिक होगा, न ही भारतीय उपभोक्ता को कोई लाभ होगा। राजस्व और वित्तीय घाटे में वृद्धि होगी, सो अलग। यदि अनाज की खेती के बारे में आंखों पर पड़े सैद्धांतिक परदे को हटा दिया जाए तो पूर्व-घोषित वसूली बोनस के अलावा नयी नीति में, धान की वसूली के कारण घाटे में रहने वाले राज्यों के किसानों को 'परिवहन' लागत की वापसी जैसे उपाय शामिल किए जा सकते हैं। विभिन्न क्षेत्रों में पैदा होने वाले विशेष किस्म के चावलों, जैसे- असम जापोनिका, केरल विशेष प्रजातियों आदि के लिये 'क्वालिटी' अंतर को पाटने के लिये सहायता दी जा सकती है। ये उपाय बाज़ार के मौजूदा अंतरों को उजागर करेंगे, बाज़ारोन्मुखी नीतियां अपनाएंगे और व्यापार का उचित मार्गदर्शन करेंगे और यदि भलीभांति लागू किए गए तो राजस्व-उदासीन भी होंगे। मेरी अध्यक्षता में बनी कृषि मूल्य सुधार समिति ने प्रत्येक फसल के लिये जो रूपरेखा तैयार की थी, उसमें और कुछ नहीं, व्यापार मूल्यों पर किसान को तरज़ीह दी गई थी। इस समिति की सिफ़ारिशों की घोषणा वित्तमंत्री ने पिछले वर्ष बजट में की थी। हमने गेहूं और धान के लिये बाज़ार के अनुकूल नीतियों के लिये अंक दिए थे। परंतु हक़ीक़त में भारतीय मूल्य विश्व मूल्यों से बहुत कम हैं। केवल सजावटी फूलों को ही तट कर नीतियों में शामिल किया गया था। इस अव्यवस्था का इलाज करना होगा। किसी भी विविधीकरण रणनीति में मौजूदा किसानों में से अधिकांश लोगों के लिये संक्रमण का सुपरिभाषित रास्ता होना ही चाहिए।

सुश्री मेरी व्हेलान की अध्यक्षता में होने वाली विश्व व्यापार संगठन की समीक्षा बैठकों में हमें बताया जाता था कि अनाज का आयात सरल बनाया जाना चाहिए। व्यापार के प्रभुत्व वाली कृषि के तेजी से हो रहे वैश्वीकरण के इस दौर में विश्व के प्रति भारत का नज़रिया एक रहस्य बना हुआ है। उत्तर सभी को पता है। एक और समिति का गठन इसका उत्तर नहीं है। सुपरिभाषित कार्रवाई आवश्यक है।

हमने आंकड़ों के उदाहरण देते हुए दिखाया है कि इस तरह की नीतियां विश्व व्यापार संगठन की नीतियों के अनुकूल होंगी, बशर्ते वे तटकर, मुद्रा नीति और प्रविधि के रास्ते चलें। यही समय है। अब हमें शेष विश्व के साथ स्पर्धा करने वाली गतिशील व्यापारिक कृषि की ओर बढ़ना है। दुर्भाग्यवश विश्व कृषि बाज़ार बहुत ही विकृत है और सुधारों को आगे बढ़ाने का काम विश्व बाज़ार में हो

रहे बदलावों के अनुसार ही होना चाहिए। कानकुन दौर की वार्ता के बाद भारत ने प्रमुख भूमिका अपना ली है। यही तटकर के स्तरों की मात्रा और उनको लागू किए जाने के बारे में फैसला करेगा। परंतु भारतीय कृषि की स्पर्धात्मकता को बढ़ाने की नीतियों पर अमल करना अति आवश्यक है। इन विपरीत तथ्यों ने दिखाया है कि तटकरों, करों, प्रभावी घटी हुई ब्याज दरों और बेहतर विपणन समर्थन को मूल्य निर्धारित करने वाली सिफारिशों के साथ जोड़ा जा सकता है। अधिकतम समर्थन मूल्यों में वृद्धि के साथ वे विकल्प का काम करेंगी। यही सही प्रक्रिया होनी चाहिए। यह एकीकरण बाज़ार के अनुकूल होगा और इस अर्थ में विश्व व्यापार संगठन के भी अनुकूल होगा कि यह एएमएस गणनाओं में दिखाई नहीं देगा और नीति का काम करेगा। उदाहरणार्थ, देश के विभिन्न भागों में वस्तु केंद्र स्थापित किए जाएंगे तथा 'सूचनाओं के विश्लेषण के लिये एनसीडीईएक्स और अन्य नेटवर्क नयी नीति का ही अंग होंगे।

वृक्ष

अन्यत्र यह दर्शाया गया है कि जहां देश में वनोत्पाद की मांग तेजी से बढ़ रही है, वहीं स्वदेशी आपूर्ति में कमी आई है। इस समय हम विश्व में सबसे बड़े वनोत्पाद आयातक देश हैं (एम. कुमार, उमा लेले, एन.सी. सक्सेना और वाई.के. अलघ, 2001 और अलघ 2005 क)। वानिकी का सकल घरेलू उत्पाद पिछले वर्षों की शृंखलाओं में स्थिर रहा करता था, परंतु अब संशोधित शृंखलाओं में प्रतिवर्ष 2 प्रतिशत से भी कम दर से बढ़ रहा है। इस क्षेत्र में ग्रामीण विकास की अगुवाई करने की संभावना है और यह 7 प्रतिशत वार्षिक की दर से आगे बढ़ने की क्षमता रखता है। पशुपालन की तरह यह क्षेत्र भी आय और रोज़गार में वृद्धि का प्रमुख क्षेत्र बनने का सामर्थ्य रखता है। कुछ भ्रांतियों को हटाने की ज़रूरत है, जैसे- दस करोड़ लोग वनों पर आश्रित नहीं हैं। ग्रामीण क्षेत्रों के 7 में से एक व्यक्ति भी पेड़ों से जीविका नहीं कमाता। यह एक बहुत बड़ी बेवकूफी है। वस्तुत: सावधानी से किए गए अध्ययन से पता चलता है कि वनों से बाहर रहने वाले करीब 80 लाख लोग अपनी जीविका के लिये वनों पर निर्भर हैं। इनमें से मुख्य कामगार बीस लाख से अधिक नहीं होंगे और बाकी लोगों के लिये तो यह व्यवसाय का गौण स्रोत है। इन लोगों और क्षेत्र (वन) के लिये दीर्घकालिक नीति संभव है बशर्ते व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाया जाए। पेड़ों की सुरक्षा अति आवश्यक है। जैसा कि कई देशों में देखा गया है, वनों से पैसे कमाने के अनेक रास्ते और तरीके हैं। सर्वप्रथम, वनों की संगठनात्मक प्रणाली पर मौजूदा भ्रम को दूर करना होगा। संयुक्त वन प्रबंधन इस समय संकट में है और उसको पुनर्जीवित किया जाना है। तटकर, मुद्रा और कर नीति की उपयुक्त प्रणाली तैयार करनी होगी। कुछ अपवादों को छोड़ दिया जाए तो हमने ऐसे वनोत्पादों और पेड़ों को विकसित नहीं किया है जिनकी खाद्य पदार्थों जैसे- करी पत्ता, सहजन फली, मसाले आदि, औषधीय गुणों वाले पौधों और जैविक पदार्थों के रूप में भारी मांग है। पिछले 6 महीनों में मैंने पाया है कि स्टीविया की खेती के लिये विभिन्न क्षेत्रों से कर्ज़ मिल सकता है। एक दिलचस्प मामला 'जस्ट चेंज' नाम के समूह का है जिसने रतन ट्रस्ट के अनुदान से कुर्ग में एक प्रोड्यूसर्स कंपनी खोली है। यह समूह वनवासियों को समुदाय के नेतृत्व में निर्यात बाज़ारों से जोड़ने के प्रयास में लगा है। इसकी शाखाएं के.बी. के. जिलों सहित अन्य स्थानों में भी फैल रही हैं। आमतौर पर देखा जाए तो वन की समृद्धि के लिये न तो कोई संगठनात्मक ढांचा खड़ा किया गया है और न ही आर्थिक वातावरण तैयार किया गया है।

भूमि एवं जल विकास नीतियां

इस तर्क से सभी परिचित हैं कि प्रत्येक कृषि-जलवायु क्षेत्र के अपने-अपने समाधान हैं, इसलिये मैं इसको नहीं दोहराऊंगा। इतना कहना पर्याप्त होगा कि लक्ष्यों, सर्वोत्तम अभ्यास प्रकरणों, नीतियों और अपेक्षित धमकियोंभरी योजना का खाक़ा तैयार तो है, परंतु दुख है कि वह केवल कागज़ों पर ही है। इसकी गतिविधियों की पेशेवराना तौर पर समीक्षा की गई है। हमें हमेशा ही शिकायत रहा करती थी, परंतु एक अति अनुभवी व्यक्ति ने नब्बे के दशक को पनढाल (वाटरशेड) विकास और संयुक्त वन प्रबंधन के मामले में 'स्वर्णिम दशक' बताया है। इसलिये सहभागिता के आधार पर प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन पर काम करने वाले लोग जब भागीदारी दृष्टिकोण को सुदृढ़ बनाने और उसे आगे बढ़ाने की बात कर रहे थे, 2002-07 में दसवीं योजना की तैयारी के समय उन्हें उस समय गहरा धक्का लगा जब 'स्वर्णिम दशक की मुरझाती चमक' नाम के आलेख में उसकी आलोचना की गई। इस आलेख को केवल एक व्यथित का विलाप कहा जा सकता है। जब यह शोधपत्र डा. एम.एस. स्वामीनाथन और प्रोफेसर वाई.के. अलघ को भेंट किया गया तो उन्होंने डीएससी से इस पर राष्ट्रीय स्तर की चर्चा कराने के लिये प्रोत्साहित किया ताकि भागीदारी दृष्टिकोण को सरल बनाने और प्राय: उसको पलटने के प्रति चिंता व्यक्त की जा सके। इसके साथ ही, उन सिद्धांतों को पेश किया जा सके जो केंद्र, राज्यों अथवा दान दाताओं द्वारा एनआरएम की योजनाओं की तैयारी और संशोधन का मार्गदर्शन कर सकें (अनिल शाह, बोपल 2005)।

बोपल घोषणा इसलिये प्रकाश में आई क्योंकि हिस्सेदारों की भागीदारी को पनढाल विकास और संयुक्त वन प्रबंधन, दोनों में हल्का कर दिया गया था - पनढाल विकास को हरियाली दिशानिर्देशन में और वन प्रबंधन को विभागीय निर्देशों में (देखें बोपल घोषणा, 2005)। इसमें 8 सिद्धांत और उनकी रूपरेखा शामिल हैं। ये हैं-

सिद्धांत- 1. समुदाय आधारित संगठनों (सीबीओ) का केंद्रीय स्थान में होना: ग्राम

पंचायत को भागीदारी संगठनों के साथ जोड़ा जाना चाहिये जिससे स्थानीय संसाधनों के विकास के लिये आवश्यक समर्थन हासिल किया जा सके। सीबीओ प्राथमिक भागीदारों के निहित समूह का प्रतिनिधित्व करेंगे और उन्हें ग्राम पंचायत के साथ नहीं रखा जाएगा। ग्राम पंचायत इन निहित समूहों को समर्थन दिलाने का काम करेंगे, उनको हटाएंगे नहीं।

सिद्धांत 2. निष्पक्षता

रूपरेखा तैयार होने के स्तर पर ही कार्यक्रम को नुकसान उठाने वालों और लाभ कमाने वालों से जुड़ना होगा और उनके प्रति जवाब-देह होना होगा।

सिद्धांत 3. विकेंद्रीकरण

जिला स्तर पर व्यापक आधार वाले संगठन द्वारा विकेंद्रीकृत प्रक्रिया के जरिये विभिन्न प्रकार की स्थितियों में तकनीकी, सामाजिक और वित्तीय सिद्धांतों का मेल बिठाने के लिये लचीलापन अपनाना चाहिए। जिलास्तर के संगठन का नेतृत्व किसी सीईओ को करना चाहिए और उसका चयन प्रतियोगी आधार पर, कार्य निष्पादन की शर्त पर, निश्चित अवधि के लिये किया जाना चाहिए। उसे संगठन के चार्टर के तहत परिणाम देने के लिये पूर्ण स्वायत्तता देनी होगी। इसके अलावा एक प्रबंध मंडल भी होना चाहिये जिसमें भागीदारों और उच्च क्षमता वाले बहुविधायी पेशेवरों का मजबूत प्रतिनिधित्व रहेगा जो निर्णय लेने की प्रभावी प्रक्रिया को समर्थन दे सकें।

सिद्धांत 4. सुविधा एजेंसी का महत्व

पनढाल कार्यक्रमों के अलावा वानिकी और सिंचाई जैसे अन्य एनआरएम कार्यक्रमों के लिये कोई स्पष्ट भूमिका इन एजेंसियों के लिये नहीं रखी गई है। इन परिस्थितियों में सीबीओ अपनी भूमिका और दायित्व सार्वजनिक एजेंसियों को समर्पित कर देते हैं।

सिद्धांत 5. निगरानी और मूल्यांकन

जब कार्यक्रमों की मानीटरिंग सही समय पर होती है तो फीडबैक को क्षेत्रीय गतिविधि को सुधारने के लिये किया जाता है। प्रमुख कार्यकर्ताओं को अपनी त्रुटियां स्वीकार करने हेतु प्रोत्साहित किया जाता है और असफलताओं को सीख के अवसरों में बदलने के लिये प्रेरित किया जाता है।

सिद्धांत 6. प्रशिक्षण एवं सॉफ्टवेयर आदाय

सिद्धांत 7. विकास की धारणीय गति

परियोजना अवधि और उसके बाद में भी, उत्पादकता विकास और मूल्य संवर्धन शुरू किया जाना चाहिए जिससे एनआरएम कार्यक्रम अपनी पूरी क्षमता के अनुसार काम कर सके। इससे ग्रामीण समुदाय की आय और समृद्धि में वृद्धि होगी।

सिद्धांत 8. संगठनात्मक पुनर्रचना

राष्ट्रीय क्षेत्रीय जिला और स्थानीय स्तरों पर इन संगठनों को काम करने की ज्यादा स्वायत्तता के साथ-साथ अपने कार्य के लिये निवेशकों के प्रति उत्तरदायित्व दिए जाने की ज़रूरत है। लक्षित लाभार्थियों को सेवा प्रदान करने की जिम्मेदारी भी होगी। इंगलैंड, कनाडा और मलेशिया सहित अनेक देशों में सरकारी सेवा प्रदान करने वाले संगठनों को ज्यादा स्वायत्तता के साथ-साथ अधिक उत्तरदायित्व देने से आमतौर पर शानदार नतीजे मिले हैं। भारत में एनडीडीबी (नेशनल डेयरी डेवलपमेंट बोर्ड) इसी प्रकार का दूसरा उदाहरण पेश करता है। इसके अतिरिक्त, 1991 में उदारीकरण के गति पकड़ने के बाद भारत सरकार की स्वामित्व वाले करीब 240 उद्यमों को अधिक स्वायत्तता, पेशेवराना माहौल और जिम्मेदारी दी गई और उनकी कुल बिक्री चार गुना बढ़ गई जबकि उनका शुद्ध कुल लाभ दस गुना तक बढ़ गया। इसके विपरीत, राज्यों के लगभग 750 उद्यम जिनके मुखिया या तो राजनीतिज्ञ हैं या सरकारी अफसर, अपने कुल घाटे में प्रतिवर्ष करीब 17 प्रतिशत की बढ़ोतरी करते जा रहे हैं।

सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों के वैश्विक अनुभवों से स्पष्ट है कि उत्कृष्टता के लिये स्वायत्तता और उत्तरदायित्व की अनेक व्यवस्थाओं को संस्थागत रूप देने की आवश्यकता है। इनमें संगठन का ऐसा चार्टर शामिल है, जिसमें उसके मिशन (लक्ष्य), जनादेश, शक्तियां, उत्तरदायित्व और स्वायत्तता की स्पष्ट घोषणा के साथ ही प्रतियोगिता से चुने गए सीईओ की संविदा नियुक्ति और कार्यकारी स्वायत्तता का भी उल्लेख होगा। इसके साथ ही संगठन के भागीदारों और संबंधित पेशेवर लोगों का मजबूत प्रतिनिधित्व करने वाले संचालक मंडल का उल्लेख भी चार्टर में होगा। चार्टर में निम्नलिखित बातें भी साफ तौर पर दर्शाई जाएंगी:

- संगठन से अपेक्षित प्रदर्शन के बारे में वार्षिक समझौता और जिस संस्था को संगठन रिपोर्ट करेगा उससे समर्थन की अपेक्षा। एक एमआईएसओ समय-समय पर भागीदारों और नियंत्रक संस्था को प्रगति की तुलना में प्रदर्शन के लक्ष्यों तथा अन्य घटनाक्रमों पर रिपोर्ट दिया करेगा;
- उन सेवाओं का ब्यौरा जिनकी अपेक्षा भागीदारों को संगठन से है और किसी शिकायत के उठने पर उसके समाधान की व्यवस्था;
- पारदर्शी, योग्यतोन्मुखी मानवसंसाधन प्रबंधन नीतियां (नौकरी पर रखने, वेतन-भत्ते, पदोन्नति आदि के संबंध में), प्रदर्शन से जुड़े पुरस्कार। प्रदत्त सेवाओं के लिये 'पैसा वसूल' आधार पर बाज़ार परीक्षण आदि।

मध्यावधि समीक्षा ने इसके लिये उचित माहौल बनाया है और प्रधानमंत्री ने स्वतंत्रता दिवस के अपने भाषण में वर्षा पर निर्भर क्षेत्रों के लिये एक प्राधिकरण का प्रस्ताव रखा। स्व. इंदिरा गांधी ने 1975 में लालकिले से खाद्यान्न में आत्मनिर्भरता के प्रयास की शुरुआत की। राजीव गांधी कृषि-जलवायु नियोजन के अग्रदूत थे। दूसरी हरित क्रांति के इस स्रोत की खोज भी 1986 में उसी स्थान से शुरू हुई। इसलिये बोपल घोषणा

के प्रर्वतक भी बेहतरी की कामना कर रहे हैं। यदि नये प्राधिकरण का गठन सही संकल्प के साथ किया जाता है, तो आधी लड़ाई जीत ली गई, समझिये। पनढाल कार्यक्रमों पर एस.पार्थसारथी रिपोर्ट ने इसका ख़ाका पेश किया है (भारत सरकार, 2006), परंतु समझा जाता है कि हमेशा की तरह कुछ शक्तिशाली समूहों ने इसको नकारने के लिये अपना खेल शुरू कर दिया है।

प्रौद्योगिकी और दो पैरों पर चलना

1989 में जब बीजों के चुनिंदा आयात की नीति घोषित की गई, तब डा. आर.एस. परोदा प्रधानमंत्री राजीव गांधी से यह आश्वासन पाने में कामयाब रहे कि चुनिंदा फसलों में भारतीय कृषि वैज्ञानिकों को मिशनोन्मुखी परियोजनाओं के लिये समर्थन मिलेगा। डा. सिद्दीकी के समूह द्वारा संकर धान का सफल विकास इसी का नतीज़ा था। खेतों में नतीज़ा दूसरा ही मुद्दा है और प्रगति बहुत ही ख़राब है। ठीक उसी प्रकार जैसे संकर धान का प्रसार या बीटी कपास का लफड़ा और ग्रामीण आईटी. आवेदनों में कुछ धारणीय प्रकार के उदाहरण। संकर धान का क्षेत्र भारत में दो लाख हेक्टेयर से नीचे चला गया है, जबकि चीन में संकर धान का क्षेत्र 50 लाख हेक्टेयर से भी अधिक है। काफी प्रतीक्षा के बाद भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् ने इस वर्ष इन बीजों की सिफ़ारिश की है। भारत को भी चीन की तरह संकर धान की खेती 50 लाख हेक्टेयर से भी अधिक क्षेत्र में करनी चाहिए। गेहूं के लिये प्रौद्योगिकी कार्यक्रम, खास कर बढ़िया किस्म के गेहूं का, सितंबर में अगली रबी फसल के मैदानी प्रसार के लिये आ जाएगा। सरकार को एक ऐसी नियामक व्यवस्था करनी चाहिए जिससे किसान को उचित मूल्य पर बढ़िया बीज मिल सके। अरंडी के लिये भी इसी प्रकार के परिणाम मिले हैं। और भी बहुत सारे हैं। और हां, इस प्रणाली को, जैसा पहले होता था, अंजाम तक पहुंचाना होगा। आवश्यक हो तो निश्चित अवधि की शुरुआती वित्तीय सहायता के साथ भी। अन्यथा आत्महत्याओं की और घटनाओं से बचा नहीं जा सकेगा।

रोज़गार का एकीकरण

रोज़गार गारंटी योजना के बारे में दिल्ली में शास्त्रार्थ हो रहा है। एक धार्मिक मत के अनुसार रोज़गार गारंटी सुधार-विरोधी कदम है। यदि सोनिया गांधी ज्यादा दबाव डालती हैं तो न्यूनतम क्षेत्र जनसंख्या और आय के दायरे के बारे में सहमत हो जाओ और इसे यहीं पर समाप्त कर विनिवेश की ओर बढ़ो। एक अन्य मतानुसार, रोज़गार गारंटी तो पूर्व समाधान है, उसको आर्थिक और विकास के विचारों के साथ गंदला नहीं किया जाना चाहिए। सिंचाई, फसल विविधीकरण, ग्रामीण बुनियादी ढांचा, वृक्ष और तालाब सभी योजना कार्यक्रम हैं। ईजीएस को अकेला ही छोड़ देना चाहिए और सांसारिक विचारों के साथ प्रदूषित नहीं करना चाहिए।

सिद्धांतों के स्तर पर इन मुद्दों को बड़ी बुद्धिमानी से उठाना होगा, क्योंकि ब्यौरा तो लोगों को पता ही है। स्व. राजीव गांधी ने जब संसद में कृषि-जलवायु योजना पेश की तब वह भी रोज़गार के विषय को लेकर खासे चिंतित थे। इस पर काफी कुछ लिखा जा चुका है, परंतु 1989 में जब दो पूर्ववर्ती रोज़गार कार्यक्रमों (एनआरईपी और आरएलईजीपी) का परस्पर विलय किया गया, तो रणनीति का खुलासा इस प्रकार किया गया।

दोनों रोज़गार कार्यक्रमों का विलय 1989 में कर दिया गया। इसके अलावा स्थानीय समुदायों को उस तरह के भूमि विकास और जल प्रबंधन के कार्य करने की अनुमति देने का प्रयास किया गया, जिनको उप-क्षेत्रीय अर्थव्यवस्थाओं को लाभकारी बनाने के प्रयासों के लिये महत्वपूर्ण माना जा रहा था। जवाहरलाल रोज़गार योजना की नियमावली में इन इरादों का वर्णन कुछ इस प्रकार किया गया है:

12 अक्तूबर, 1989 को राजीव गांधी लिखित में एकीकरण की घोषणा करने वाले थे: "अगले पांच वर्षों के दौरान सिंचाई का पानी सिंचाई परियोजनाओं के कमांड क्षेत्र के एक करोड़ हेक्टेयर अतिरिक्त भूमि में सुनिश्चित आधार पर दिया जाएगा। किसानों को सुनिश्चित मात्रा में और सही समय पर पानी पहुंचाने की जिम्मेदारी अधिकारियों की रहेगी। साथ ही, प्रतिवर्ष 10 नलकूप और खुदाई के कुंए बनाए जाएंगे। इसके साथ ही प्रतिवर्ष 50 लाख हेक्टेयर भूमि को गांवों के तालाबों, बांधों, पोखरों और अन्य जलाशयों से गाद की सफाई कर अतिरिक्त जल का लाभ दिया जाएगा। दूसरे, असिंचित भूमि की उत्पादकता को बढ़ाने के लिये पनढाल विकास कार्यक्रम को प्रभावी ढंग से लागू करना होगा और अपने मूल स्थान पर ही नमी का संरक्षण करना होगा। इसका विस्तार आठवीं योजना में 50 लाख हेक्टेयर क्षेत्र तक किया जाएगा।" (भारत सरकार, 1989 क)

कुछ समय तक इस एकीकरण पर काम चला। उदाहरण के लिये युगांधर की नवाचारी रोज़गार योजना। लेकिन नयी सरकार के आने के बाद इसे शीघ्र ही त्याग दिया गया और जब ब्रेटन वुड्स (विश्व बैंक) का एक पैकेज़ लागू किया गया तो यह घोषित किया गया कि 80 का दशक वह दशक है जिसमें परिचालन सुधार रणनीति की कोई कल्पना ही नहीं की गई। रोज़गार योजनाओं को विकास की रणनीतियों से अलग कर दिया गया और दोनों ही समाप्त हो गईं।

निष्कर्ष

कहानी की शिक्षा छोटी-सी है- बिना सकारात्मक आर्थिक माहौल के, कृषि का पुनर्जीवन असंभव है। इस पुनर्जीवन के लिये नीतियां हाजिर हैं, परंतु उनको स्वीकार किए जाने की ज़रूरत है। हमें सभी प्रमुख फसलों के लिये रूपरेखा तैयार करनी होगी जो विश्व व्यापार संगठन की नीतियों के अनुकूल हो और हमने जो 'इफिशियेंसी शिफ्टर्स' तैयार किया है, उसकी आवश्यकता के अंतर को पाट सके। किसान को प्रतिस्पर्धा में उतारने के लिये उसे कुशल खेती की उत्पादन लागत के मामले में सहायता देनी होगी। ये लागत

मौजूदा गतिविधि को मुद्रा का रूप दे देते हैं, प्रविधि को अपनाने तथा सीखने की फौरी लागत का खर्च उठाते हैं और कभी नये आदाय में समाहित हो जाते हैं। उनमें से अधिकांश की आवश्यकता तुरंत ही होती है और शुरुआती समर्थन एवं रुझान के बाद किसान अपने-आप ही मुकाबले में आ खड़ा होगा। इस तरह की अर्थव्यवस्था की लागत पूंजी, शुरू में ऐतिहासिक लागत से अधिक हो सकती है, परंतु वर्तमान उत्पादन लागत, उत्पादन की प्रति इकाई के हिसाब से कम ही होगी। हालांकि उन्हें बाद में फिर ज्यादा पूंजी की आवश्यकता होगी। कानकुन दौर की वार्ता के बाद भारत की भूमिका अब प्रमुख हो गई है। यही तटकर के समापन और मात्रा का स्तर निश्चित करेगा। परंतु भारतीय कृषि की प्रतिस्पर्धात्मकता को विस्तार देने की नीतियों पर उन्हें अतिआवश्यक मानते हुए अमल करना होगा। प्रति-तथ्यों से पता चलता है कि तटकरों, करों, प्रभावी ब्याज दरों में कमी और बेहतर बाज़ार समर्थन को मूल्य निर्धारण की सिफ़ारिशों के साथ जोड़ा जा सकता है। ये सिफ़ारिशें अधिकतम समर्थन मूल्य के विकल्प के रूप में हो सकती हैं। सात प्रतिशत वार्षिक विकास दर के साथ वानिकी में ग्रामीण विकास के मामले में प्रमुख भूमिका निभाने की संभावना है। पशुपालन की भांति यह भी आमदनी में वृद्धि और विकास का प्रमुख क्षेत्र बन सकता है। वृक्षों का संरक्षण ज़रूरी है, परंतु वन विभिन्न तरीकों से संपत्ति का सृजन करते हैं। कई देशों ने इस प्रकार के नतीज़े दिए हैं। प्रत्येक कृषि जलवायु क्षेत्र के भूमि और जल विकास संबंधी अपने समाधान हैं। एक फ्रेमवर्क योजना बनी है जिसमें लक्ष्य, सर्वश्रेष्ठ व्यवहार्य प्रकरण, नीतियां और प्रत्याशित धमकियां दी हुई हैं, परंतु अफ़सोस कि यह सब कागज़ों तक ही सीमित है। नब्बे के दशक की प्रगति को हल्का किया जा रहा है और नवीनीकरण के सिद्धांतों पर काम चल रहा है।

प्रौद्योगिकीय नीतियां उस लक्ष्य तक नहीं पहुंच पा रही हैं, जहां तक उन्हें जाना चाहिए। रोज़गार गारंटी योजना सहित रोज़गार नीतियों को भूमि और जल तथा धारणीय विकास कार्यक्रमों के साथ जोड़ा जाना चाहिए। इस तरह के एकीकरण का प्रयास अस्सी के दशक के अंतिम वर्षों में शुरू किया गया था। लेकिन बाद में रोज़गार सृजन की पृथक नीतियों के रूप में उन्हें छोड़ दिया गया। इन त्रुटिपूर्ण नीतियों को त्यागना होगा। रोज़गार गारंटी योजना को कृषि-जलवायु, भूमि और जल विकास नीतियों के साथ जोड़ने से न केवल कार्यक्रम की सफलता की संभावना को व्यावहारिक बनाया जा सकेगा, बल्कि भागीदारी की सुनिश्चितता से भ्रष्टाचार के खिलाफ गारंटी भी मिल सकेगी।

उल्लेखित समस्याओं में ज्ञान कोई अवरोध नहीं बनेगा, अतः प्रगति में तेजी लाई जा सकती है। ❑

(लेखक पूर्व केंद्रीय मंत्री और योजना आयोग के पूर्व सदस्य हैं)

IAS / PCS - 2007-08 नामांकन प्रारम्भ

PUBLIC ADMN.

by Anil Singh

(Pre. & Mains दोनों पर समानांतर पकड़)

फाउंडेशन कोर्स : 2007-08

प्रीलिम्स बैच प्रारम्भ
(Duration 4 months)
1st बैच : 25 अगस्त
2nd बैच : 10 सितम्बर
(80 कक्षाएं + 20 प्रैक्टिस + UPSC पेपर Solved)

मेंस बैच प्रारम्भ
(Duration 2½ months)
1st बैच : 10 सितम्बर
2nd बैच : 20 नवम्बर
उत्तर लेखन अभ्यास एवं Synthesis पर विशेष बल।

वर्ष 2005 में Pub. Ad. (P.T.) में Cut-off (85, 85) था।
इस वर्ष 2006 में संभावित Cut-off (80, 80) रहेगा।
According to my solution.

हॉस्टल सुविधा उपलब्ध

ध्यातव्य बिन्दु :

★ प्री. एवं मेंस का अप्रोच अलग-अलग होने के कारण दोनों की अलग-अलग कक्षाएं।

★ ऐसे अभ्यर्थी जिनका प्री. एवं मेंस दोनों में Pub Ad. है, उन्हें पहले प्री. की तैयारी, तत्पश्चात मेंस की तैयारी करनी चाहिए। अन्यथा, प्री. में भ्रम की स्थिति उत्पन्न हो सकती है। क्योंकि, प्री. में Conceptual and Factual Clarity अत्यावश्यक है।

★ प्री. की तैयारी के पश्चात् मेंस की तैयारी हेतु Analysis and Synthesis करना आसान हो जाता है।

वर्ष 2005 मेंस में हिन्दी माध्यम से Pub. Ad. में
Score = 392 (195+197) (A.P. Singh)

NEW VISION
IAS ACADEMY

A-29, 30, Basement, Jaina House, Commercial Complex,
Dr. Mukherjee Nagar, Delhi-110009 • Cell.: 9891147383

YH-8/6/12

विदर्भ के लिये 3,750 करोड़ रुपये का राहत पैकेज़

○ सी.एस. राव

प्रधानमंत्री ने ब्याज माफी, ऋण पुनर्निर्धारण और अधिक ऋण सुविधा उपलब्ध कराने की घोषणा की

महाराष्ट्र के विदर्भ के लिये घोषित प्रधानमंत्री के 3,750 करोड़ रुपये के राहत पैकेज़ में मुख्यत: ब्याज माफी और ऋण का पुनर्निर्धारण करना शामिल है। इस पैकेज़ से क्षेत्र के छह जिलों के किसानों को लाभ पहुंचेगा। कपास के घटते मूल्यों और ऋण के भारी बोझ को सहन न कर पाने की वजह से क्षेत्र में सैकड़ों किसान आत्महत्या कर चुके हैं।

इसके अलावा चार राज्यों के उन 31 जिलों में एक विशेष पुनर्वास पैकेज़ शुरू किया जाएगा जहां पर किसानों ने आत्महत्याएं की हैं। महाराष्ट्र में छह जिलों के अलावा आंध्र प्रदेश में 16 जिलों, केरल में तीन और कर्नाटक में छह जिलों को चिह्नित किया गया है। पैकेज़ की घोषणा करते हुए डॉ. सिंह ने कहा कि कर्ज़ों पर समूचा बकाया ब्याज समाप्त कर दिया जाएगा तथा किसी भी किसान पर पिछला बकाया ब्याज नहीं होगा।

प्रधानमंत्री ने कहा कि किसानों को कर्ज़ से राहत दिए जाने की सभी तरफ से मांग उठ रही है और कुछ मामलों में तो बकाया ब्याज की राशि मूलधन को भी पार कर चुकी है। विदर्भ के छह प्रभावित जिलों में बकाया ब्याज की राशि 30 जून, 2006 को करीब 712 करोड़ रुपये थी। ब्याज समाप्त कर दिए जाने से किसान तत्काल नया ऋण पाने के पात्र हो जाएंगे। केंद्र और राज्य सरकार मिलकर इस बोझ को वहन करेंगी।

इसके अलावा 30 जून, 2006 तक 1,296 करोड़ रुपये के बकाया ऋणों का एक वर्ष के ऋण स्थगन के साथ तीन से पांच वर्ष की अवधि के लिये पुनर्निर्धारण किया जाएगा। डॉ. सिंह ने छह जिलों में 2006-07 में 1,275 करोड़ के अतिरिक्त ऋणों की व्यवस्था का भी वायदा किया। इसे सुनिश्चित करने के लिये राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) तथा प्रमुख बैंकों की विशेष टीमें तैनात की जाएंगी।

बेहतर लाभकारी मूल्यों के मुद्दे पर उन्होंने कहा कि इस पर उचित विचार-विमर्श की ज़रूरत है। नकदी फसल पर से ध्यान हटाए जाने की आवश्यकता से भी वह अवगत हैं।

डॉ. सिंह ने कहा कि किसानों और आत्महत्या करने वाले किसानों की विधवाओं से बातचीत ने उन्हें अंदर तक प्रभावित किया है। उन्होंने छह जिलों में प्रत्येक कलेक्टर के पास 50 लाख रुपये उपलब्ध कराने का प्रस्ताव किया जिसका इस्तेमाल पीड़ित परिवारों को राहत देने के लिये किया जाएगा।

प्रधानमंत्री ने कहा कि इन अल्पावधि उपायों से किसानों को काफी राहत मिलेगी। इस पैकेज़ में दीर्घावधि के भी कई उपाय शामिल हैं।

केंद्र सरकार आगामी तीन वर्षों में इन जिलों के लिये 524 बड़ी, मध्यम और लघु सिंचाई परियोजनाओं के लिये 2,177 करोड़ रुपये उपलब्ध कराएगी। करीब 1.59 लाख हेक्टेयर भूमि को सिंचाई सुविधा उपलब्ध कराई जाएगी।

180 करोड़ रुपये का गुणवत्ता बीज प्रतिस्थापन कार्यक्रम आरंभ किया जाएगा ताकि अच्छी किस्म के बीजों की समस्या को हल किया जा सके। छह जिलों को बांधों के विकास और निर्माण तथा वर्षाजल संचयन हेतु 240 करोड़ रुपये उपलब्ध कराए जाएंगे। इसके अतिरिक्त पैकेज़ के तहत 225 करोड़ रुपये राष्ट्रीय बागवानी मिशन के लिये जारी किए जाएंगे जो बुलढाणा सहित सभी छह जिलों में शुरू किया जाएगा तथा इससे संतरे की खेती में आने वाली कठिनाइयां दूर की जा सकेंगी। 50,000 हेक्टेयर भूमि में सिंचाई सुविधाएं प्रदान करने हेतु ड्रिप और स्प्रिंकलर सिंचाई के विस्तार का भी प्रस्ताव है।

डॉ. सिंह ने कहा कि किसानों के पास जीवनयापन के लिये अतिरिक्त स्रोत होना ज़रूरी है। उन्होंने कहा, "हमारा इन जिलों में पशुधन और मत्स्यपालन गतिविधियों में सुधार के लिये 135 करोड़ रुपये की लागत से एक वृहत कार्यक्रम चलाने का प्रस्ताव

योजना आयोग ने विदर्भ की सुध ली

बीटी कपास के विरुद्ध चेतावनी जारी करने को कहा

विदर्भ क्षेत्र में जहां बीटी कपास की प्रतिरोधी उच्च लागत को किसानों की दुर्गति का प्रमुख कारण माना जाता था, मोनसांटो मामले में उच्चतम न्यायालय के इस दखल के बाद कि बीटी कपास की कम कीमत होना फसल की असफलता का कारण हो सकता है, केंद्र अब इस विपरीत परिस्थिति का मुकाबला करने के लिये तैयार हो रही है।

एमआरटीपीसी द्वारा मोनसांटो को जारी निर्देशों पर सर्वोच्च न्यायालय के स्थगन आदेश देने से यह डर पैदा हुआ है बीजों की कीमतों में कमी करने की छूट मिल जाएगी। विशेषज्ञों की राय में बीटी कपास विदर्भ जैसे वर्षा आधारित क्षेत्रों के लिये उपयुक्त नहीं है, यह अच्छी सिंचाई सुविधा वाले क्षेत्रों के लिये उपयुक्त होती है।

योजना आयोग के अनुमानों के अनुसार सर्वोच्च न्यायालय के आदेश से बीटी कपास के मूल्य आधे कम हो जाएंगे। यह महसूस किया जा रहा है कि अनभिज्ञ किसान सस्ते बीजों की ओर आकर्षित होकर एक और फसल की बर्बादी का शिकार हो सकते हैं।

इस बात को ध्यान में रखते हुए कि प्रधानमंत्री ग्रामीणों की दुर्गति के प्रति चिंतित हैं, जिसकी वजह से ग्रामीणों ने आत्महत्याएं भी की हैं, योजना आयोग ने केंद्र से गैर-सिंचाई वाले क्षेत्रों में बीटी कपास के विरुद्ध चेतावनी जारी करने को कहा है।

आयोग की प्रधान सलाहकार सुश्री आदर्श मिश्र के नेतृत्व में वस्तुस्थिति का पता लगाने के लिये गठित पैनल ने विदर्भ की स्थिति पर अपनी रिपोर्ट दे दी है। अन्य बातों के अलावा इसने 15 लाख किसानों को मुफ्त बीज वितरण की सिफ़ारिश की है। उसका कहना है किसानों को बीटी कपास के चंगुल में पड़ने से बचाने के लिये उचित मूल्यों पर उपयुक्त बीज उपलब्ध कराए जाने चाहिए।

फसलों की बर्बादी की जांच कर रहे प्रधानमंत्री के पैनल ने पाया कि किसानों को बीटी कपास के बारे में उचित सलाह नहीं दी गई और बाद में समूचे विदर्भ में बीजों के पैकेट बेच दिए गए जिनमें छोटे अक्षरों में लिखा था : "सिंचाई वाले क्षेत्रों में प्रयोग करना उत्तम"। ग्रामीणों का कहना है कि निर्माता की चेतावनी पर बहुत देर से गौर कर पाए क्योंकि यह बहुत ही छोटे अक्षरों में लिखा गया था।

ग्रामीणों की बर्बादी का मुख्य कारण ऋणग्रस्तता को मानते हुए ऋण व्यवस्था पर भी नये सिरे से विचार होना चाहिए। केंद्र ने कम ब्याज दरों पर ऋण उपलब्ध कराने को कहा है।

निदान के तौर पर विदर्भ के किसानों को गैर-कपास फसलें उगाने की तरफ मोड़ने पर भी ध्यान दिया जा रहा है। योजना आयोग का दल चाहता है कि महाराष्ट्र सरकार उन किसानों को प्रोत्साहन दे जो खाद्यान्नों की खेती करते हैं। इस दिशा में ज्वार पर ध्यान केंद्रित किया जा रहा है जिसकी खेती 5 प्रतिशत भूमि पर होती है। कुछ समय पहले तक यह 30 प्रतिशत भूमि पर उगाई जाती थी। पैनल महसूस करता है कि प्रति एकड़ ज्वार की खेती पर कुछ प्रोत्साहन से इसकी खेती पुन: बढ़ाई जा सकती है।

ज्वार न केवल एक खाद्यान्न फसल के रूप में वापस लौटेगी बल्कि चारा समस्या भी इससे हल होगी और पशुपालन को बढ़ावा मिलेगा।

योजना आयोग के पैनल की राय में कपास उत्पादन को राज्य के सभी क्षेत्रों में प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। इसने राज्य सरकार को परामर्श दिया है कि कपास से बनने वाली वस्तुओं के उत्पादन के लिये कपड़ा मिलों और कताई मिलों की स्थापना की जानी चाहिए। ❑

(एजेंसियों से)

है। आशा है कि कृषि पर निर्भरता कम करने के लिये आय का एक समानांतर क्षेत्र तैयार हो जाएगा।

इस पैकेज़ के आलोचकों का कहना है कि इससे कपास के लिये उच्च लाभकारी मूल्य जैसी मुख्य मांग की पूर्ति नहीं होती। बुरी तरह प्रभावित छह जिलों के लिये 3 करोड़ रुपये (प्रत्येक जिले हेतु 50 लाख रुपये) का अर्थ है यदि इस राशि को इन तीन लाख किसानों में वितरित किया जाए तो एक किसान को मात्र 30 रुपये प्राप्त होंगे।

चूंकि ऐसे पैकेज़ों के पीछे कार्यान्वयन भी एक बड़ा मुद्दा होता है, इसलिये प्रधानमंत्री ने कहा कि उनका कार्यालय इसकी खुद निगरानी करेगा। उन्होंने कहा कि कृषि ऋणग्रस्तता एक राष्ट्रीय समस्या है तथा इसे युद्ध स्तर पर हल करना होगा। ❑

(एजेंसियों से प्राप्त सूचनाओं के आधार पर *योजना* (मराठी) द्वारा संकलित)

किसानों द्वारा आत्महत्या : कारण और निवारण

○ अक्किनेनी भवानी प्रसाद

हमें आंध्र प्रदेश और अन्य राज्यों के कई जिलों से बड़ी संख्या में किसानों द्वारा विभिन्न कारणों से आत्महत्या किये जाने के समाचार प्राप्त हो रहे हैं। देश के अन्नदाता कहे जाने वाले इन किसानों के लिये यह बड़ी ही दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति है।

पिछले दस वर्षों से भी अधिक समय से किसान आत्महत्या की ख़बरें मिलती रही हैं। मीडिया के खबरों के अनुसार 1997-98 में आंध्र प्रदेश के वारंगल जिले में लगभग 300 कपास उत्पादक किसानों ने आत्महत्या की थी और आज हमारे राज्य में ऐसी आत्महत्याओं की संख्या तीन हजार से ऊपर पहुंच चुकी है। आज महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि इतनी बड़ी संख्या में किसान आखिर आत्महत्या क्यों कर रहे हैं? मेरे विचार से यह एक बहुत महत्वपूर्ण मुद्दा है और केंद्र तथा राज्य सरकारों द्वारा अपनाई गई नीतियां ही इन आत्महत्याओं के लिये उत्तरदायी हैं।

कृषि क्षेत्र के मुद्दे

फसलों के लाभकारी मूल्य और विपणन

कृषि के मौजूदा बाज़ार ढांचे के मद्देनज़र किसानों के लिये ऐसे अवसर नहीं हैं कि उन्हें अपने उत्पादों के लाभकारी मूल्य प्राप्त हो सकें। कृषि उत्पादों में दो तरीकों से विपणन होता है। पहले तरीके के अंतर्गत किसान उन स्थानीय एजेंटों को अपना उत्पाद बेचता है जो सप्लायर का काम करता है तथा ऋण उपलब्ध कराता है और दूसरे तरीके के अंतर्गत किसान अपना उत्पाद बाज़ार बाड़ा या मंडियों में भेजता है।

पहली बात तो यह है कि किसान को इस बात की जानकारी ही नहीं होती कि उसके उत्पाद का बाज़ार भाव क्या है? और, वह आपसी विश्वास के सहारे अपनी उपज स्थानीय एजेंट को बेच देता है। यहां हमें यह याद रखना होगा कि एक किसान वर्ष में अपनी फसलों के आधार पर एक या दो बार आमदनी प्राप्त करता है। फसल कटने के साथ ही लगान वसूलने वाले, बीज, खाद, उपकरण, पानी जैसे कच्चे माल के आपूर्तिकर्ता, वाणिज्यिक/सहकारी बैंकों के ऋण, निजी ऋणदाता के अलावा बच्चों के पढ़ाई और शादी जैसे अन्य पारिवारिक ख़र्च एक किसान के सिर पर सवार इंतज़ार कर रहे होते हैं ऐसी हालत में किसान के पास यह अवसर नहीं होता कि वह अपनी फसल को कुछ समय के लिये रोक सके और बाज़ार में तब लाए जब उसे बेहतर मूल्य मिल सकें। किसान अपना उत्पाद तत्काल स्थानीय एजेंट को बेचकर अपना तनाव कम करने की कोशिश करता है लेकिन इसके लिये उसे काफी आर्थिक नुक़सान उठाना पड़ता है।

यदि बाज़ार बाड़ों या मंडियों की बात करें तो राज्य में ऐसी करीब 300 मंडियां हैं जिनमें से 85 या 90 में ही कारोबार होता है। यहां भी व्यापारियों के आढ़तिये अपना ज़ाल फैलाए होते हैं और कीमतों को बढ़ने नहीं देते। अंततोगत्वा किसान को मज़बूर होकर कम कीमत पर अपने उत्पाद बेचने पड़ते हैं। दूसरी बात यह है कि बाज़ार में दलाली की निर्धारित दर केवल 4 प्रतिशत है लेकिन आढ़तिये गलत तौल, हमाली शुल्क और सफाई शुल्क के नाम पर कुल 25 से 30 प्रतिशत तक दलाली वसूल करते हैं। मंडियों में वसूला गया बाज़ार उपकर कृषि विपणन व्यवस्था की बेहतरी के लिये इस्तेमाल होना चाहिए लेकिन इसका इस्तेमाल सड़क संपर्क आदि जैसी अन्य गतिविधियों में किया जाता है। वर्तमान में किसी भी फसल से संबंधित बाज़ार की गुप्त जानकारी उपलब्ध नहीं होती है और बाज़ार में उत्पादन की प्रचुरता होने पर सरकारी खरीद के लिये सरकार की पहले से कोई योजना नहीं होती।

यद्यपि मंडियों में 'रीति बंधु' योजना लागू है लेकिन इस सुविधा का लाभ केवल मध्यम और बड़े किसानों या उन व्यापारियों द्वारा उठाया जाता है जो किसानों के नाम पर बाज़ार समिति और अधिकारियों की सहूलियत के लिये उत्पादों का भंडारण करते हैं। बाज़ार समितियां सरकार द्वारा मनोनीत होती हैं और वे किसानों की बजाय अपने आकाओं के प्रति अधिक वफ़ादार होती हैं। इसलिये मेरी पुरज़ोर सलाह है कि उपकर वसूली और किसानों के हित में उसके खर्च प्रबंध के लिये मंडियों में निर्वाचित व्यक्तियों को रखा जाना चाहिए और उन्हीं पर इसकी जिम्मेवारी होनी चाहिए।

न्यूनतम खरीद मूल्य प्रक्रिया

भारत सरकार देश में होने वाली 25 फसलों के लिये न्यूनतम खरीद मूल्य घोषित करती है। न्यूनतम खरीद मूल्य से प्रभावित होने वाली मुख्य फसलों में धान, गेहूं, गन्ना और तिलहन शामिल हैं। उपज लागत की संगणना करने के लिये अव्यावहारिक मूल्य ढांचे को आधार बनाया जाता है। इस तरह घोषित न्यूनतम खरीद मूल्य किसानों के लिये लाभकारी नहीं होता। उदाहरण के लिये धान की फसल का न्यूनतम खरीद मूल्य पिछले तीन वर्षों के दौरान एक-सा बना रहा है। लेकिन बीज, खाद, कीटनाशक और बिजली जैसे निवेशों की लागत प्रतिवर्ष 10-15 प्रतिशत बढ़ गई है। यहां तक कि कृषि क्षेत्र में मज़दूरी भी 15 प्रतिशत की दर से बढ़ी है। उपज लागत की संगणना करते समय इन बढ़ोतरियों पर विचार नहीं किया गया है। इसलिये मेरा सुझाव है कि कृषि क्षेत्र

में निवेशों के मूल्य पर नियंत्रण रखने की प्रणाली विकसित की जानी चाहिए जिसमें उत्पादन लागत के साथ-साथ किसानों द्वारा अपने उत्पादों की बिक्री के लिये अपनाई गई प्रक्रिया को भी शामिल किया जाना चाहिए।

सिंचाई जल, बिजली

सिंचाई के लिये पानी की उपलब्धता हमारे कृषि क्षेत्र का सबसे महत्वपूर्ण पहलू है। हमारी कृषि योग्य भूमि के करीब 33-38 प्रतिशत भाग में सिंचाई की सुविधा सुनिश्चित है। शेष भाग या तो वर्षा पर या फिर भूमिगत जल की उपलब्धता पर आश्रित हैं। अनेक सिंचाई परियोजनाएं तैयार की गई हैं लेकिन सीमित संसाधनों के कारण इनके पूरा होने में वर्षों लग जाते हैं। मौजूदा सरकार ने ऐसी 26 बकाया परियोजनाओं को अगले 5 वर्ष के कार्यकाल में पूरा करने का कार्यक्रम बनाया है। ऐसी साहसिक पहल के लिये हम सरकार को धन्यवाद देते हैं।

इसी क्रम में सरकार ने कृषि क्षेत्र को मुफ्त बिजली उपलब्ध कराई है। इसलिये हम किसानों से भी अपील करना चाहेंगे कि वे इस सुविधा का दुरुपयोग न करें और यह सुनिश्चित करें कि बिजली का उपयोग केवल कृषि कार्यों में ही करेंगे। यहां मैं स्पष्ट करना चाहूंगा कि हमारे परिसंघ ने एक खास उपकेंद्र का सर्वेक्षण किया जिसका परिणाम इस प्रकार हैं :

पंपसेटों की कुल संख्या	:	2,235
औसत हार्सपावर	:	4.85
शामिल क्षेत्र	:	7,000 एकड़
विद्युत मोटरों की दक्षता	:	30-33 प्रतिशत
पंप-दक्षता	:	19 प्रतिशत

इस सर्वेक्षण से हम यह जान सके हैं कि उपकरणों, विशेष रूप से विद्युतमोटरों और पंपसेटों के निर्माता किस प्रकार भारतीय मानक संस्थान के निर्धारित मापदंडों का उल्लंघन करते हैं। दूसरी बात यह है कि अपने बोखलों की क्षमता के अनुरूप विद्युत मोटर और पंप लगाने की जानकारी न होना अत्यधिक विद्युत खपत का मुख्य कारण है।

यदि इन साधारण बिंदुओं पर ध्यान रखा जाए और विद्युत उपकरणों के उत्पादन और बिक्री पर सही नियंत्रण रखते हुए किसानों, बोरिंग और सिंचाई योग्य क्षेत्र, सही मोटर और पंप के बारे में किसानों को जानकारी उपलब्ध कराई जाए तो कृषि क्षेत्र में होने वाली विद्युत खपत में 30-35 प्रतिशत बचत हो सकती है बशर्ते मौजूदा मोटरों और पंप सेटों का नवीकरण कर दिया जाए।

- **परियोजनाओं के अंतर्गत सिंचाई जल आपूर्ति**

आंध्र प्रदेश में 3 बड़ी और 37 छोटी नदियां हैं। इन पर हमारी निर्भरता 75 प्रतिशत है, जिसके तहत हमें 2,743 टीएमसी पानी आवंटित है। इस परियोजना के अंतर्गत जल प्रबंधन क्षमता 30-40 प्रतिशत है। इसे देखते हुए सिंचाई जल के कारगर उपयोग में सुधार

लक्ष्य
The Target
(An Institute for Civil Services)
IAS 2006 - 07
Foundation Course (Mains Cum Prelim), Main
Both in English एवं हिन्दी माध्यम में भी
सा० अध्ययन
विजय कुमार के नेतृत्व में विशेषज्ञों के एक समूह के द्वारा
* विजय कुमार के नेतृत्व में संस्थान ने सामान्य अध्ययन के अध्यापन की अत्यधिक सरल एवं ग्राहय तकनीक विकसित की है।
इस वर्ष की प्रारंभिक परीक्षा में सामान्य अध्ययन के 90 से अधिक प्रश्न कक्षा नोट्स तथा संस्थान से अध्ययन सामग्री की आए हैं।
इतिहास
द्वारा विजय कुमार
भूगोल
द्वारा प्रख्यात विशेषज्ञ
विशेषताएँ
- पूर्णतः संशोधित एवं परिष्कृत अध्ययन सामग्री
- साप्ताहिक क्लास रूम टेस्ट; कठिन उत्तरों की कारणों सहित सम्पूर्ण व्याख्या
- मानचित्र पर आधारित प्रश्नों पर विशेष बल
- सिलेबस के अत्याधिक कठिन खंडों पर विशेष बल
- प्रत्येक खण्ड की समाप्ति पर doubt clearance कक्षा
- अपेक्षाकृत कमजोर छात्रों पर विशेष ध्यान
- मुख्य एवं प्रारंभिक परीक्षा के पूर्व भी गई टेस्ट श्रृंखला (व्याख्या सहित) का विशेष पैकेज।(बिल्कुल मुफ्त)
किन्ही दो Free Trial Class के विकल्प के साथ सभी विषयों के लिए कक्षाएँ प्रारंभ 14th July 2006
B-9, A-31-34, Jaina Exten., Comm. Complex,
Dr. Mukherjee Nagar, Delhi - 110009
Ph. : 011-65182199, 9891123699
YH-8/6/03

की जरूरत है ताकि उपलब्ध अतिरिक्त जल के सदुपयोग से और अधिक भूभाग को खेती में शामिल किया जा सके। यह तभी संभव हो सकता है जब नहर-प्रणाली और परियोजनाओं के प्रबंधन में किसान भागीदार बनें। आंध्र प्रदेश की किसान कई फसलों की सिंचाई के लिये बाढ़ के पानी पर निर्भर रहते हैं। ऐसी स्थिति में किसानों को हर फसल के लिये पानी की वैज्ञानिक उपयोगिता की जानकारी होनी चाहिए। इसके लिये जागरूकता अभियान चलाया जाना चाहिए। आज परियोजनागत सिंचाई जल आपूर्ति के लिये प्रति एकड़ करीब 70,000 रुपये खर्च किए जा रहे हैं। जब इतना अधिक खर्च किया जा रहा है तो परियोजनाओं के सर्वेक्षण, निर्माण और प्रबंधन में किसानों की थोड़ी भागीदारी तो होनी ही चाहिए। इससे जल प्रबंधन की क्षमता में सुधार होगा।

- **बीज**

हम सभी जानते है कि खेती में उन्नत बीज किसानों के लिये महत्वपूर्ण निवेश है। इस समय राष्ट्रीय बीज निगम और राज्य स्तरीय बीज निगमों के अलावा राज्य में स्थित विभिन्न अनुसंधान संगठनों की ओर से गुणवत्ता युक्त बीज का 30-35 प्रतिशत ही उपलब्ध कराया जाता है। शेष 65 प्रतिशत बीज की आपूर्ति निजी बीज उत्पादकों द्वारा की जाती है या फिर किसान आपस में बीजों की अदला-बदली कर काम चलाते हैं।ऐसी स्थिति में बीज की उत्पादकता या अंकुरण क्षमता की ठीक से जानकारी नहीं मिल पाती। पिछले दो वर्षों के दौरान फर्जी बीज निर्माताओं द्वारा नकली बीजों की आपूर्ति के कई मामले सामने आए हैं। इससे किसानों को भारी आर्थिक नुकसान झेलना पड़ता है। बीज गुणवत्ता और उसकी बिक्री के नियमन के लिये बीज अधिनियम, 1966 और बीज नियंत्रण आदेश, 1983 जैसे प्रावधान हैं। लेकिन ये प्रावधान निजी रूप से विकसित बीज की किस्मों के उत्पादन और बिक्री के नियमन में समर्थ नहीं हैं। ख़राब बीज की आपूर्ति से फसल चौपट हो जाने की स्थिति में कार्रवाई के लिये इन प्रावधानों में व्यवस्था नहीं है। हालांकि आंध्र प्रदेश सरकार ने कई निजी बीज कंपनियों के साथ समझौता किया है लेकिन इससे भी घटिया बीजों की बिक्री नहीं रुक सकी है। इसलिये हमारी मांग है ऐसा कानून बनाने की जिसमें बीज-उद्योग के ऐसे दोषी व्यक्तियों के लिये कठोर दंड और उनसे मुआवज़ा दिलाने का प्रावधान हो।

वर्ष 2002-2003 के दौरान 'ख़राब अंकुरण' के बारे में 960 शिकायतें प्राप्त हुईं, जिन्हें संबंधित अधिकारियों ने स्वीकार किया। मुआवज़े के रूप में कुल 9,18,750 रुपये का भुगतान किया गया। इसी प्रकार बीजों में आनुवांशिकी दोष से संबंधित कुल 84 शिकायतें प्राप्त हुईं। इन सभी शिकायतों पर कुल 10,21,587 रुपये का मुआवज़ा तय किया गया, जिसमें से केवल 35,000 रुपये की मुआवज़ा राशि का भुगतान किया गया।

उपर्युक्त तथ्यों में यह देखा जा सकता है कि राज्य और जिला स्तरीय समितियों द्वारा तय की गई मुआवज़ा राशि और वास्तव में किसान को भुगतान की गई मुआवज़ा राशि के बीच कोई संबंध नहीं है। इससे हम यह समझ सकते हैं कि किसानों के हित में काम कम और कागजी कार्रवाई ज्यादा है।

- **कीट नाशक**

आंध्र प्रदेश देश में कीटनाशकों की खपत की दृष्टि से दूसरे स्थान पर है। मौजूदा कानून डीलरों को घटिया और स्तरहीन कीटनाशक बेचने से नहीं रोक सके हैं। यहां भी अनेक कानूनी प्रावधानों के बावजूद दोषियों को मिलने वाला दंड नगण्य होता है। इसलिये हम अनुभव करते हैं कि घटिया कीटनाशकों के उत्पादन और बिक्री पर रोक लगाने के लिये राज्य या केंद्र सरकार की ओर से उचित कानून बनाना होगा और इस क्षेत्र पर निगरानी रखने वाले कुछ अधिकारियों पर इसकी जवाबदेही तय होनी चाहिए।

- **कृषि ऋण**

एक किसान के लिये समय से वाज़िब ब्याज दर पर ऋण प्राप्त होना अधिक महत्वपूर्ण है। भारतीय रिज़र्व बैंक के माध्यम से सरकार ने यह निर्धारित कर रखा है कि किसी भी बैंक द्वारा दिए जाने वाले कुछ ऋण का 40 प्रतिशत हिस्सा प्राथमिक क्षेत्र के लिये होना चाहिए और इस 40 प्रतिशत में से 18 प्रतिशत ऋण विशुद्ध रूप से कृषि क्षेत्र के लिये है। लेकिन यदि हम पिछले 5 वर्षों के दौरान वाणिज्यिक बैंकों के कुल कारोबार पर नज़र डालें तो पाते हैं कि कृषि क्षेत्र को 11 प्रतिशत या 12 प्रतिशत से अधिक नहीं दिया जा सका है। सहकारी बैंकों की ऋण नीति किसानों के लिये कृषक-विरोधी ज्यादा है। इसके कई कारण हैं। सबसे पहला कारण है, समय पर ऋण की धनराशि जारी न होना। दूसरे, इनकी ब्याज दर वाणिज्यिक बैंकों से अधिक होती है। इसके अलावा एक और महत्वपूर्ण बात यह है कि सहकारी बैंक से कृषक समाज के किसी नये सदस्य को ऋण नहीं मिल सकता है। आज की तारीख़ में किसानों पर सहकारी बैंकों का करीब 5,000 करोड़ रुपये बकाया है। चूंकि किसान अपनी आर्थिक ज़रूरत के समय ऋण प्राप्त नहीं कर सकता इसलिये वह विवश होकर निजी ऋणदाताओं से 24-36 प्रतिशत ब्याज दर पर कर्ज़ लेता है।

एक किसान चाहे वाणिज्यिक बैंक, सहकारी बैंक या किसी निजी ऋणदाता से कर्ज ले, सभी स्थितियों में उसे एक वर्ष के अंदर ऋण की अदायगी करनी होती है। किसी कारण से फसल न होने पर वह ऋण की अदायगी नहीं कर पाता है और दूसरी ओर अगली फसल के लिये धन जुटाने और परिवार का खर्च चलाने की समस्या सामने आ जाती है। यहां यह कहना अनुचित नहीं होगा कि वर्ष 2002-03 के दौरान हमारे राज्य के करीब 1,050 मंडलों को सूखाग्रस्त घोषित किया गया। संबंधित क्षेत्र के किसानों को भारी नुकसान उठाना पड़ा। इसी प्रकार, 2003-04 में लगातार दूसरे वर्ष 450 मंडलों को सूखाग्रस्त घोषित किया गया और किसानों को भारी घाटा हुआ। वास्तव में हमारे यहां कुछ मंडल ऐसे हैं जो लगातार पिछले 4-5 वर्षों से सूखे की चपेट में हैं। इस तरह एक किसान आर्थिक संकट से घिर जाता है ओर समय पर अपनी

देनदारियां चुकाने में अपने को असमर्थ पाता है। तो ये हालत है थोड़ी-सी ज़मीन के मालिक एक किसान की। लेकिन दूसरी ओर किसानों का एक और वर्ग है जो पट्टे पर ज़मीन लेकर खेती के जरिये अपना जीविकोपार्जन करते हैं वे भी संस्थागत ऋण के अभाव में निजी ऋणदाताओं से कर्ज़ लेकर अत्यधिक ब्याज चुकाने के लिये बाध्य हैं। इसलिये आज किसानों के लिये संस्थागत वित्त को आसान और सुलभ बनाने की बहुत ज़रूरत है। हमारा सुझाव है कि प्रत्येक गांव को किसी एक बैंक (वाणिज्यिक/सहकारी/ग्रामीण) द्वारा अपनाया जाना चाहिए। संबंधित बैंक के अधिकारी को गांव में जाकर ग्राम पंचायत और स्थानीय कृषि अधिकारी के साथ सलाह-मशविरा कर ऋण आवश्यकताओं का आकलन कर गांव में ही ऋण वितरण करना चाहिए।

ऐसी व्यवस्था हो जाने से गांव के एक किसान को बैंकिंग-व्यवस्था का प्रभावी ढंग से लाभ मिल सकेगा। पट्टे पर ज़मीन लेकर खेती करने वाले काश्तकार को संस्थागत वित्त उपलब्ध कराने के बारे में हमारा सुझाव है कि एक गांव में ऐसे सभी काश्तकारों का एक ऋतु मित्र समूह गठित कर सरकार की ओर से मूलराशि प्रदान की जानी चाहिए। समूह द्वारा मितव्ययता से उगाही धनराशि और मूलराशि के योग पर विचार करते हुए समूह गारंटी और निजी गारंटी के आधार पर 1:4 के अनुपात में ऋण दिया जा सकता है। भारत सरकार ने कृषि ऋण पर 9 प्रतिशत की उच्चतम ब्याजदर घोषित की है। राज्य सरकार ने घोषणा की है कि वह 3 प्रतिशत की ब्याजदर पर कृषि ऋण उपलब्ध कराएगी। इसके लिये हम वास्तव में केंद्र और राज्य सरकार को धन्यवाद देते है कि इन्होंने कृषि क्षेत्र के लिये कम ब्याज दर पर ऋण उपलब्ध कराने का महत्व समझा है। इस नीति को लागू करने के बारे में हमारा सुझाव है कि बैंक 6 प्रतिशत ब्याज आंध्र प्रदेश सरकार से वसूले और केवल 3 प्रतिशत ब्याज की अदायगी किसान द्वारा की जानी चाहिए। इस लक्ष्य को हासिल करने के लिये कार्यविधि तैयार कर इसे लागू करने के लिये ज़मीनी स्तर पर काम करने वाले बैंक अधिकारियों को यह सौंपा जाना चाहिए।

राज्य में किसानों को कृषि ऋण उपलब्ध कराने के लिये पट्टादार पास बुक और प्रत्येक भू-स्वामी के पास स्वामित्व संबंधी दस्तावेज़ का होना महत्वपूर्ण है। वर्तमान में राज्य में केवल 40-50 प्रतिशत लोगों को ही पट्टादार पासबुक उपलब्ध कराई जा सकी है। शेष लोगों को अभी पासबुक दी जानी है। किसानों को भू-स्वामित्व संबंधी रिकार्ड के साथ पट्टादार पासबुक उपलब्ध कराए जाने के लिये एक समय-सीमा निर्धारित होनी चाहिए। पट्टादार पासबुक और भू-स्वामित्व संबंधी दस्तावेज़ के वितरण की जिम्मेवारी जिला कलेक्टरों/संभागीय राजस्व अधिकारियों/मंडल राजस्व अधिकारियों को सौंपी जानी चाहिए और इस कार्य के लिये आंध्र प्रदेश सरकार की ओर से निर्धारित समय-सीमा की अंतिम तिथि तय की जानी चाहिए।

• वित्तीय संस्थाओं के सामाजिक उत्तरदायित्व

इसमें कोई संदेह नहीं कि वित्तीय संस्थाओं का संचालन व्यापारिक दृष्टि से होता है ताकि ये लंबे समय तक लगातार अपनी सेवाएं मुहैय्या करा सकें। समाचारपत्रों में खबरें देखी जाती रही हैं कि कई बैंक अपने शेयरधारकों को 50 से 100 प्रतिशत का लाभांश दे रहे हैं। यहां यह ध्यान देना होगा कि जब कई बैंक घाटे में चल रहे हैं वहीं दूसरी ओर भारत सरकार ने एक खास बैंक को बचाने और उसके कारोबार को जारी रखने के लिये करीब 22,000 करोड़ रुपये प्रदान किए।

इसी प्रकार, जब यूटीआई को वित्तीय घाटा हुआ तो उसके बचाव के लिये भारत सरकार को आगे आकर करीब 13,000 करोड़ रुपये की धनराशि उपलब्ध करानी पड़ी, जबकि इस संस्था का प्रबंध बहुत ही योग्य लोगों के हाथों में था। उपर्युक्त अनुभवों के परिप्रेक्ष्य में भारत सरकार और वित्तीय संस्थाओं की नीतिगत और नैतिक जिम्मेवारी बनती है कि वे उन किसानों की जीवनरक्षा के लिये आगे आएं जो आत्महत्या कर रहे हैं।

क - फसल बीमा

फसलों के लिये ऋण देने के समय ही फसल बीमा नीति के तहत 2 प्रतिशत से 7 प्रतिशत की दर से किस्त काट लिया जाता है। उदाहरण के तौर पर यदि एक किसान को खरीफ में धान की फसल के लिये 10 हजार रुपये का ऋण प्राप्त होना है तो उसे बीमा प्रीमियम के रूप में 200 रुपये जमा करने होंगे। यह धनराशि किसान को ऋण लेते समय मौके पर ही जमा करनी पड़ती है। किसी विशेष फसल के लिये प्राप्त ऋण की अदायगी उसी वित्त वर्ष में 31 मार्च तक करनी होती है। यदि अदायगी इस अवधि में नहीं हो पाती है तो किसान का बैंक खाता, गैर-निष्पादक खाता बन जाता है।

फसल चौपट हो जाने की स्थिति में बीमा राशि का भुगतान बहुत दिनों के बाद होता है, जबकि उस समय तक किसान उधार ली गई मूलराशि पर जुर्माना दर से ब्याज अदा करने के लिये बाध्य हो चुका होता है। यह सब कुछ देखते हुए फसल बीमा दावे का निपटारा उसी वित्त वर्ष के 31 मार्च से पहले हो जाना चाहिए। ऐसा करते समय केवल ऋण राशि पर ही नहीं बल्कि किसान द्वारा किए गए अतिरिक्त निवेश तथा उसके द्वारा और उसके परिवार द्वारा खर्च किए गए मानव घंटों पर भी विचार करना चाहिए। 31 मार्च के बाद ऋण अदायगी का उत्तरदायित्व किसान पर नहीं होना चाहिए।

ख - विफल नलकूप बीमा योजना

यह योजना 1992 तक जारी रही। खेतों में नलकूपों की बोरिंग और स्थल निर्धारण में वैज्ञानिक दृष्टिकोण के अभाव में यह योजना वापस ले ली गई। कुछ आत्महत्याओं के मामले में नलकूपों की विफलता एक महत्वपूर्ण कारण हो सकता है। इस संदर्भ में हमारे ये प्रस्ताव हैं:

- आंध्र प्रदेश सरकार का भूजल विभाग प्रत्येक जिला और मंडल में भूजल उपलब्धता के बारे में पहले ही सर्वे कर चुका है और सुधार की गुंजाइश वाले क्षेत्रों की पहचान भी कर चुका है।
- उपलब्ध आंकड़ों के परिप्रेक्ष्य में सुझाव है कि जिला स्तर किसान संगठनों और भूजल

विभाग को मिलाकर एक समिति गठित की जानी चाहिए। यदि ज़रूरी हो तो नलकूपों की बोरिंग और बीमा प्रबंध पर निगरानी के लिये राष्ट्रीय भूगर्भ अनुसंधान संस्थान, हैदराबाद की स्थापना भी की जा सकती है।

- **सामाजिक क्षेत्र के मुद्दे**

शिक्षा: आज हम सभी जानते हैं कि शिक्षा पर होने वाला खर्च दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। किसान बहुत अधिक खर्च करके भी अपने बच्चों को स्कूल और उच्च शिक्षा के लिये इस आशा के साथ भेजते हैं कि बच्चों का भविष्य संवर जाएगा। इस तरह इन पर कर्ज़ का बोझ और बढ़ता जाता है।

स्वास्थ्य: ज़मीनी स्तर पर स्वास्थ्य संबंधी सुविधाएं बिल्कुल नदारद हैं। यदि किसी किसान परिवार का कोई सदस्य बीमार पड़ जाए और अस्पताल में भर्ती करने की ज़रूरत हो तो उसे किसी कस्बे या शहर के अस्पताल में ले जाना पड़ता है और इसके लिये उन्हें, भारी खर्च उठाना पड़ता है। इस तरह भी किसान पर आर्थिक बोझ बढ़ जाता है।

वैवाहिक आयोजन: वैवाहिक समारोहों के आयोजन सामाजिक रीति-रिवाजों के तहत होते हैं। ऐसे आयोजनों में किसान हमेशा तुलनात्मक दृष्टिकोण अपनाते हैं और दिखावे के कारण वैवाहिक समारोह महंगे होते जा रहे हैं। इससे भी किसान पर आर्थिक बोझ बढ़ जाता है।

किसानों की सामाजिक सुरक्षा: यह बड़े दुर्भाग्य की बात है कि कृषि क्षेत्र में काम करने वाले (65-70 प्रतिशत) लोगों को सरकारी कर्मचारियों, औद्योगिक कर्मचारियों की तरह सामाजिक सुरक्षा प्राप्त नहीं है। जबकि विधायकों और सांसदों को भी यह सुविधा उपलब्ध है। यह पुरज़ोर मांग है कि कृषि क्षेत्र में कार्यरत लोगों के लिये अधिकार स्वरूप एक सामाजिक सुरक्षा योजना बनाई जाए।

आंध्र प्रदेश सरकार की और से पहल

मुफ्त बिजली: आंध्र प्रदेश सरकार ने राज्य में कृषि क्षेत्र को दिए गए विद्युत कनेक्शन के बिलों की 1,179 करोड़ रुपये की धनराशि माफ करने और नि:शुल्क बिजली प्रदान करने का आदेश जारी किया है।

राज्य सरकार ने आत्महत्या कर चुके किसानों के परिवारों के बकाया ऋणों की अदायगी तथा आगे खेती जारी रखने के लिये डेढ़ लाख रुपये की राहत प्रदान करने का आदेश जारी किया है। (आंध्र प्रदेश सरकार आदेश संख्या जीओमस नं. 421 दिनांक 1.6.2004)

आंध्र प्रदेश सरकार ने प्रोफेसर जयति घोष की अध्यक्षता में किसान कल्याण आयोग का गठन किया है। यह आयोग किसान आत्महत्या के कारणों का अध्ययन करेगा और आत्महत्या रोकने के वाज़िब उपाय सुझाएगा। राज्य सरकार द्वारा आयोग की रिपोर्ट स्वीकार कर ली गई है और स्वीकृत सिफ़ारिशों को लागू करने के लिये शुरुआत हो चुकी है।

किसान संगठन: हमारे परिसंघ की तर्ज़ पर गठित किसान संगठन, किसानों, को एकजुट करने और उनके साथ होने वाले अन्याय के खिलाफ संघर्ष में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं, लेकिन आंध्र प्रदेश सरकार और अन्य अधिकारियों को विभिन्न नीतिगत फैसलों और नये नियमों की जानकारी भी मिलती रहनी चाहिए। ❑

(लेखक भारतीय किसान सभा परिसंघ, हैदराबाद के सदस्य हैं)

समाचार

डब्ल्यूटीओ वार्ता में गतिरोध

विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यूटीओ) की लघु मंत्रिस्तरीय बैठक विकसित और विकासशील देशों के मध्य कृषि और औद्योगिकी वस्तुओं हेतु बाज़ार के उदारीकरण के बारे में कोई सहमति न बन पाने के कारण विफल हो गई है। वाणिज्य और उद्योगमंत्री कमलनाथ के अनुसार इस बात का दावा करने का अब कोई अर्थ नहीं रह गया है कि बैठक असफल नहीं हुई है।

इस बैठक में कृषि सब्सिडी और औद्योगिक तथा कृषि सामानों, दोनों पर आयात शुल्क घटाने के लिये एक ख़ाका तैयार होना था लेकिन सदस्य देशों द्वारा बैठक आरंभ होने से पूर्व की अपनी स्थिति से जरा भी टस से मस न होने के कारण कोई नतीजा नहीं निकल पाया। बैठक में कृषि और गैर कृषि बाज़ारों से संबंधित सहमति न हो पाने के कारण इस वर्ष के अंत में होने वाली दोहा वार्ता में भी किसी तरह के निष्कर्ष की संभावना पर प्रश्नचिह्न लग गया है। विकासशील सदस्य देशों के दो महत्वपूर्ण प्रतिनिधियों भारत और ब्राजील का कहना है कि जब विकसित देशों के पास कुछ भी देने को नहीं है तो औद्योगिक वस्तुओं के लिये बाज़ार उपलब्ध कराने की उनकी मांग गलत है। उनका यह भी कहना है कि विकसित देशों को विकास के मूल उद्देश्य से नहीं भटकना चाहिए जिसके तहत लाखों गरीबों को आर्थिक अवसर उपलब्ध कराए जाने हैं।

जाम्बिया के मंत्री दीपक पटेल, जो कि कम विकसित सदस्य देशों के मुखर प्रवक्ता कहे जाते हैं, का कहना है कि विकसित देशों पर अनेक वक्ता उनके अड़ियल रुख के कारण खूब बरसे। उन्होंने कहा, "हम यहां औद्योगिक देशों के लिये बाज़ार और खोलने हेतु झुकने के लिये एकत्र नहीं हुए हैं। हम किसी भी तरह की असफलता के लिये अपने पर कोई दोष मढ़ने की कतई अनुमति नहीं देंगे।" ❑

लोक सामाजिक सुरक्षा कोष

कपास उत्पादकों के लिये राहत का एक उपाय

महाराष्ट्र के आपदाग्रस्त विदर्भ क्षेत्र के वाशिम जिले में कपास की खेती पूरी तरह कर्ज़ के सहारे चल रही है। इस जिले में जहां कृषि ऋण के लिये 158 करोड़ रुपये की आवश्यकता होती है वहीं सरकारी, सहकारी बैंकों के जरिये धन उपलब्ध है मात्र 86 करोड़ रुपये अर्थात् 72 करोड़ रुपये की कमी। ऐसे में साहूकार लोगों का शोषण करते हैं। किसान अलाभकारी खेती तथा बार-बार फसलें नष्ट होने की वजह से परिवार की रोज़मर्रा की ज़रूरतें भी पूरी नहीं कर पातें जिससे वे साहूकारों के चंगुल में फंसकर भारी कर्ज़ के बोझ तले आ जाते हैं और अंततः आत्महत्या करके अपनी जीवनलीला ही समाप्त कर लेते हैं।

प्रधानमंत्री द्वारा क्षेत्र में खेती की ख़राब स्थिति का अध्ययन करने के बारे में गठित पैनल ने विदर्भ क्षेत्र के छह जिलों में से एक वाशिम में वहां की दुखद वस्तुस्थिति को उज़ागर करने के साथ ही कर्ज़ में डूबे कपास उत्पादकों का साहूकारों द्वारा शोषण और आत्महत्याओं के बारे में मौके पर स्थिति का अध्ययन किया है। योजना आयोग के प्रधान सलाहकार आदर्श मिश्र के नेतृत्व में बने इस पैनल को जब इस समस्या के समाधान हेतु कोई और रास्ता दिखाई नहीं दिया तो एक पीपल्स सामाजिक सुरक्षा कोष बनाने की सिफ़ारिश की। किसानों और सरकार के अंशदान तथा अधिकार की मदद से बनाए जाने वाले इस कोष से ख़राब स्थिति वाले किसानों को परिवार की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये ऋण उपलब्ध कराया जा सकेगा। यह कोष लघु स्वयं सहायता समूहों की तरह काम कर सकता है।

ख़राब स्वास्थ्य, जो कि ग्रामीण ऋणग्रस्तता का प्रमुख कारण माना जाता है, के हल के लिये यह सुझाव दिया गया है कि नकदी रहित इलाज की सुविधा प्रदान करने के वास्ते कर्नाटक सहकारी कृषक स्वास्थ्य योजना की तरह व्यवस्था की जाए। प्रथम वर्ष में सरकार द्वारा सब्सिडी देकर और दूसरे वर्ष में 10 रुपया प्रतिमाह लेकर यह सुविधा प्रदान की जा सकती है। सरकारी-निजी भागीदारी का यह एक बेहतर नमूना हो सकता है।

एक कपास उत्पादक किसान के परिवार का फाइल चित्र जिसने ऋण न चुका पाने की स्थिति में आत्महत्या कर ली। प्रधानमंत्री द्वारा गठित पैनल ने किसानों को दयनीय स्थिति से उबारने के वास्ते पीपल्स सामाजिक सुरक्षा कोष बनाने की सिफ़ारिश की है

योजना आयोग अपनी अंतिम सिफारिशों हेतु रिपोर्ट का अध्ययन कर रहा है। वाशिम के छह तालुकों में जनवरी 2001 से फरवरी 2006 तक करीब 100 किसान आत्महत्याएं कर चुके हैं। तथ्य जांच दल में उन पर औसतन रुपये 16,504 प्रति कारोबार का ऋण होने का पता लगाया है। प्रत्येक किसान द्वारा तीन बार लिया गया धन करीब 50,000 रुपया बनता है। यह औपचारिक ऋण ढांचे से अलग है।

इन किसानों पर प्रत्येक पर कम से कम 1.5 लाख रुपये की देनदारी होगी। पैनल ने पाया कि यदि परिवारों की घरेलू ज़रूरतों को भी शामिल किया जाए तो उपलब्ध धन और ऋण की आवश्यकता के बीच 72 करोड़ रुपये से 150 करोड़ रुपये का अंतर हो जाएगा। इस प्रकार वाशिम में गैर कानूनी कर्ज़ देने वालों का धंधा जोरों पर चल रहा है।

पैनल का कहना है कि सरकार को संकर बीज उपलब्ध कराने चाहिये तथा कीटनाशकों और श्रम के लिये ऋण प्रदान करना चाहिये। इसने ऋण प्रणाली में आमूलचूल सुधार के वास्ते नाबार्ड को शामिल करने का सुझाव दिया है। पैनल ने खरीद के बारे में सरकार के एकाधिकार को खत्म करने के फैसले को किसानों के लिये बहुत दुखद माना है। इसका कहना है कि हालांकि नीति से पलटना एक खर्चीला विकल्प साबित हो सकता है परंतु सरकार को उपलब्ध ऋण पैकेज़ पर ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है तथा उसे बकायेदार किसानों को वापस औपचारिक ऋण प्रणाली में लाने हेतु युद्ध स्तर पर प्रयास करने होंगे। ❑

मध्यावधि समीक्षा में कृषि संबंधी सिफ़ारिशें

निवेश और उपलब्ध सामग्री का इस्तेमाल बढ़ाएं तथा दक्षता में सुधार करें। इसमें 1990 के दशक के मध्य से महसूस किया जा रहा कम निवेश और उपलक्ष्य संसाधनों के उचित इस्तेमाल तथा उच्चतर पूंजी निर्गत अनुपात तथा उत्पादकता वृद्धि की कम दर का मुद्दा स्वत: हल हो जाना चाहिये।

सार्वजनिक निवेश में तेजी लाएं, विशेषकर सिंचाई और जल संसाधन प्रबंधन; जल-संभरण विकास और बंजर/निम्नीकृत भूमि के सुधार तथा सड़कों, मंडियों और बिजली जैसी बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये निवेश बढ़ाया जाए।

कृषि से संबंधित निवेश हेतु संसाधन जुटाने के वास्ते सब्सिडी समाप्ति की राह देखने की बजाय उन सब्सिडियों को कम करने पर ध्यान दिया जाए जिनकी वजह से प्राकृतिक संसाधनों पर दुष्प्रभाव हो रहा है तथा उन्हें समाप्त करने में जो सहायक बन रही हैं।

पानी की अत्यधिक कमी वाले क्षेत्रों अर्थात चिंताजनक रूप से अत्यधिक भूजल निकासी वाले और कम वर्षा वाले क्षेत्रों में उचित व्यवहार्य मूल्य निर्धारण, सामुदायिक नियंत्रण और जल संरक्षण तकनीकों पर सब्सिडी के प्रावधान हेतु कुछ मिले-जुले परिवर्तित उपाय खोजे जाएं। भूजल की अत्यधिक निकासी से जुड़ी किसी भी समस्या को निपटाने के लिये पानी और बिजली की दरों का उचित निर्धारण एक अनिवार्य तत्व है। लेकिन यह सब एक स्वीकार्य दायरे में होना चाहिए जैसे कि मीटर से आपूर्ति हो और उसके एक भाग पर सब्सिडी दी जाए।

उर्वरकों पर दी जाने वाली सब्सिडी पर पौष्टिकता संतुलन में सुधार और इन्हें छोटे-छोटे खेतों तक पहुंचाने के लिये पुन: विचार किया जाए। उदाहरण के लिये प्रति किसान एक निश्चित मात्रा पर अधिक सब्सिडी दी जा सकती है।

सहयोगी प्रणालियों जैसे कि कृषि अनुसंधान, विस्तार और ऋण तथा बीजों, उर्वरकों, कीटनाशकों और पशु चिकित्सा सेवाओं आदि की उपलब्धता के सही उपयोग हेतु ज़रूरी सुधारात्मक उपाय करें और व्यवस्था में नयापन लाएं। इन क्षेत्रों में राज्य स्तर पर उत्पन्न होने वाली खास किस्म की समस्याओं का पता लगाएं और केंद्रीय सहायता की मदद से इन्हें हल कराएं ताकि राज्य सरकार के प्रयास स्थाई रूप धारण कर सकें। इससे विशेष रूप से भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान तथा साथ ही साथ राज्य कृषि विश्वविद्यालयों और अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों तथा सहकारी संस्थाओं की भूमिका को पुन: संतुलित करने में मदद मिलेगी और राज्य सरकारें नयी चुनौतियों से निपटने के लिये कार्मिकों की भर्ती और कार्य-व्यवहार में आवश्यक सुधार ला सकेंगी।

मांग से जुड़ी समस्याओं पर ध्यान केंद्रित किया जाए क्योंकि 1990 के दशक के मध्य से हम अनुभव करते रहे हैं कि कृषि उत्पादों के निर्यात में निरंतर कमी आई है तथा ज्यादातर कृषि उपायों की प्रतिव्यक्ति घरेलू खपत तुलनात्मक मूल्यों में गिरावट के बावजूद स्थिर या नकारात्मक रही है। मांग से जुड़े कुछ ज़रूरी कदम उठाएं जाएं और ग्रामीण आय बढ़ाने के लिये विविध प्रकार की फसलों की खेती पर ध्यान केंद्रित किया जाए। साथ ही विविध प्रकार की खेती करने वालों को पर्याप्त बीमा सुविधा उपलब्ध कराई जाए। यह सुविधा या तो कृषि में अथवा कृषि से गैर-कृषि में प्रदान की जा सकती है।

अनाज की उपज की प्रति एकड़ पैदावार की विकास दर को वर्तमान उपेक्षणीय स्तर से 1980 के दशक के दौरान अर्जित किए गए वास्तविक स्तर पर लाया जाए। स्थाई विविधीकरण हेतु यह एक अनिवार्य ज़रूरत है। हालांकि बदलती मांग और प्राकृतिक संसाधनों के स्थायित्व के लिये अनाज से हटकर अन्य विविध फसलों की ओर रुख करना ज़रूरी है। लेकिन पिछले दशक से प्रति व्यक्ति अनाज के उत्पादन में वास्तव में गिरावट आई है।

रोज़गार गारंटी, दोपहर का भोजन और अंतरराष्ट्रीय बाल विकास योजना जैसी कल्याणकारी योजनाओं का पूरे भारत में तेज़ी के साथ विस्तार किया जाए; साथ ही सार्वजनिक वितरण प्रणाली के तहत वस्तुएं भी एक समान दर पर उपलब्ध कराने की व्यवस्था पुन: बहाल करने पर विचार किया जाएं। उत्पादन लागत से ऊपर मूल्य स्थिर रखने हेतु कम खर्चीले उपाय किए जाए। इसके लिये न्यूनतम समर्थन मूल्य तर्कसंगत हो तथा समूचे देश में इसे लागू किया जाए। सार्वजनिक वितरण प्रणाली के तहत अलग-अलग दरें समानता की दिशा में अच्छा उपाय नहीं है क्योंकि इससे प्रोत्साहनों का लाभ अलग पहुंचता है और भारी मात्रा में माल इधर से उधर किया जा सकता है।

राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना में सुधार करके बीमा की दरों में परिवर्तन, फसल अनुमानन प्रक्रिया में यथार्थता और समयबद्धता तथा कार्यान्वयन एजेंसी जैसी कृषि बीमा कंपनी को जोख़िम का कुछ भार उठाने के लिये तैयार किया जाए। चूंकि कम वर्षा और सूखे की स्थिति वाले क्षेत्रों में बीमा प्रीमियम की दरें कुछ ऊंची हो सकती हैं इसलिये इन क्षेत्रों के लिये विशेष बजटीय सब्सिडी का प्रबंध करना ज़रूरी होगा।

गांवों में हरे चारे और चरागाहों की कमी की समस्या के हल के लिये समान रूप से

कृषि शिक्षा के लिये विशेष पैकेज़

200 करोड़ रुपये की अतिरिक्त धनराशि की व्यवस्था

केंद्रीय मंत्रिमंडल की आर्थिक मामलों की समिति ने भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद को उच्च कृषि शिक्षा के नियमन की सिद्धांत रूप में मंजूरी दे दी है। समिति ने चालू पंचवर्षीय योजना की शेष अवधि के लिये 720 करोड़ रुपये के नियमित प्रावधानों के अलावा 200 करोड़ रुपये की अतिरिक्त धनराशि मंजूर की है। नये कोष का इस्तेमाल कई तरह की गतिविधियों के लिये किया जाएगा जिनमें मानवशक्ति की आवश्यकताओं के मूल्यांकन का अध्ययन करने, नये पाठ्यक्रमों की आवश्यकताओं का पता लगाने हेतु कार्यशालाओं का आयोजन और नेटवर्किंग सुविधाओं तथा उपकरणों के लिये किया जाने वाला खर्च शामिल है।

इसके तहत मौलिक और अग्रणी विज्ञान विषयों में स्नातकोत्तर अनुसंधान कार्यों के लिये अत्याधुनिक उपकरणों की खरीद, विशिष्ट क्षेत्रों के निर्माण, प्रशिक्षण और पुन: प्रशिक्षण, आईसीटी सुविधाओं और उपकरणों तथा व्यावसायिक शिक्षा में सुधार के साथ दूरस्थ शिक्षा को बढ़ावा देने हेतु धन उपलब्ध कराया जाएगा।

- **विश्व बैंक राष्ट्रीय कृषि नवाचार परियोजना के लिये 20 करोड़ अमरीकी डॉलर का अंशदान करेगा**
- **इस परियोजना के विभिन्न भागों का विभिन्न संस्थानों, गैर सरकारी संगठनों तथा अन्य साझेदारों द्वारा क्रियान्वयन किया जाएगा**

नवाचार परियोजना

एक और संबद्ध फैसले में मंत्रिमंडल ने 25 करोड़ अमरीकी डॉलर (1,189 करोड़ रुपये) की राष्ट्रीय कृषि नवाचार परियोजना को मंजूरी प्रदान कर दी है जिसकी अधिकांश धनराशि विश्व बैंक से प्राप्त होगी। अंतरराष्ट्रीय एजेंसी 20 करोड़ अमरीकी डॉलर का अंशदान करेगी। परियोजना का प्रबंधन भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा किया जाएगा तथा इसका सही और प्रभावी कार्यान्वयन सुनिश्चित करने के लिये कई समितियों का गठन किया जाएगा।

सर्वोच्च स्तर पर एक राष्ट्रीय संचालन समिति होगी, इसके आगे एक परियोजना प्रबंधन समिति, संगठन और प्रबंधक कार्यक्रम समिति, अनुसंधान कार्यक्रम समिति, संगठन और प्रबंधन परामर्शी समूह, संकाय परामर्शी, संकाय कार्यान्वन समिति का गठन किया जाएगा।

पूर्ण स्वतंत्रता

व्यवस्था के संचालन कार्य में मूल नवाचार यह है कि कार्यान्वयन एजेंसी के भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के साथ एक बार भागीदारी में शामिल हो जाने तथा स्पष्ट समझौता हो जाने के उपरांत परियोजना अधिकारियों को बगैर किसी हस्तक्षेप के पूर्ण स्वतंत्रता और जवाबदेही के साथ काम करने की सुविधाएं प्रदान की जाएंगी। ❑

उपलब्ध संसाधनों के प्रबंधन की दिशा में नीतिगत बदलाव किए जाने चाहिये। डेयरी उत्पादों के विपणन की समस्याओं के हल के लिये बहुत निचले स्तर पर दुग्ध और अन्य सहकारी संस्थाओं के गठन पर विशेष ध्यान दिया जाए। नीतिगत बाधाएं फसल कृषि से पशुपालन, डेयरी और मत्स्यपालन की ओर बदलाव में निरुत्साहित करने वाली है।

राज्यों के कृषि विपणन कानूनों में बदलाव किया जाए तथा विपणन संपर्क विकसित करने में मदद के लिये अनुबंध पर खेती करने की सुविधा प्रदान की जाए जो कि कृषि की दक्षता बढ़ाने के लिये ज़रूरी है। कृषि उपज विपणन समिति (एपीएमसी) कानूनों में बदलाव लाने के लिये मंडी सुधारों की प्रक्रिया में केंद्रीय सहायता को जोड़ा जाए। चूंकि कारोबारी मूल्य और अनुबंध लागू होने से छोटे किसानों के हित प्रभावित हो सकते हैं इसलिये इन प्रयासों के तहत किसानों की तरफ से सहकारी समितियों/पंचायतों को बातचीत के अधिकार दिए जाने चाहिये।

दुग्ध और दुग्ध उत्पादों की मांग के प्रबंधन को प्रमुख प्राथमिकता बनाएं। प्रचुर मात्रा में दुग्ध उपलब्ध होने वाले मौसम में दुग्ध पाउडर का बड़ा स्टॉक तैयार किया जाना चाहिये और इसका इस्तेमाल वर्तमान में जारी मध्याह्न भोजन योजना के साथ 'विद्यालय दुग्ध कार्यक्रम' के रूप में योजना शुरू करके किया जाए। इस तरह के कार्यक्रम बांग्ला देश, इंडोनेशिया, चीन, जर्मनी, स्वीडन और ब्रिटेन में चलाए जा रहे हैं। ❑

(स्रोत : 10वीं पंचवर्षीय योजना 2002-07 की मध्यावधि समीक्षा, योजना आयोग)

आर्थिक सुधार एवं कृषि व्यापार नीति

○ बद्री बिशाल त्रिपाठी

प्रसंस्करित वस्तुओं का निर्यात बढ़ाने का प्रयास किया जाना चाहिए। कृषि वस्तुओं के व्यापार में वृद्धि करने के लिये नवीन प्रकार की मंडियों को खोजना होगा तथा कृषि उत्पादन में विविधता लानी होगी

कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था का आधारिक व्यवसाय है इसलिये कृषि को खाद्यान्न और मध्यवर्ती वस्तु की आपूर्ति, पशुओं के लिये चारा, उद्योगों के लिये कच्चा माल, अकाल और मौसम की अन्य प्रतिकूलताओं की स्थिति का सामना करने के लिये अतिरिक्त उत्पाद, कृषि उत्पादों के निर्यात से विदेशी मुद्रा की प्राप्ति तथा ग्रामीण और नगरीय क्षेत्रों के लिये रोज़गार एवं आय की व्यवस्था करने वाला होना चाहिए। अर्थव्यवस्था का सबसे बड़ा क्षेत्र होने के कारण इसे विदेशी मुद्रा की प्राप्ति में सर्वाधिक सहयोग करना चाहिए। भारतीय अर्थव्यवस्था का अतीत कृषि और ग्रामोद्योगों का समन्वित रूप का रहा है। भारत विभिन्न कृषिगत वस्तुओं का सदियों से आयात एवं निर्यात करता रहा है। ब्रिटिश शासनकाल में अनुचित भूमि व्यवस्था और तटस्थ विकास नीति के कारण कृषि क्षेत्र की दशा अत्यंत दयनीय हो गई। ग्रामोद्योगों और कृषि आधारित उद्योगों का भी ह्रास हुआ है और कृषि वस्तुओं का आयात खाद्य पदार्थों एवं मध्यवर्ती उत्पाद की घरेलू आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये होने लगा।

कृषि आयात एवं निर्यात

भारत के कृषिगत आयात में प्राथमिक एवं प्रसंस्करित वस्तुएं सम्मिलित हैं। कृषि अर्थव्यवस्था में जोख़िम एवं अनिश्चितता का तत्व बना रहता है अत: कृषि आयातों की मात्रा एवं संरचना में भी परिवर्तन होते रहते हैं। वर्तमान में लगभग 325 वस्तुओं का आयात किया जाता है। आयात की मुख्य मदों में नारियल का तेल, अखरोट, गेहूं, चीनी, सिल्क, दालें, ऊन, कपास, सूरजमुखी का तेल, सूखी मटर, सोयाबीन तेल, चना, अनाजों से तैयार खाद्य पदार्थ एवं रबर मुख्य हैं। इनमें प्रत्येक का अंश कुल कृषि आयात में एक प्रतिशत से अधिक है। नियोजन की अवधि में भारत में आयात की मात्रा बढ़ी है और व्यापार की संरचना में परिवर्तन आया है। नियोजन के दशक में खाद्यान्न, विशेषकर गेहूं और चावल कृषि आयातों के प्रमुख मद थे। कुल कृषिगत आयात में गेहूं का अंश लगभग 50 प्रतिशत था। आयात की अन्य मदें कपास, जूट, डेयरी उत्पाद, सब्जियां, तिलहन इत्यादि थीं। इसके अतिरिक्त कृषि मशीनरी और उर्वरकों का आयात किया जाता था। हरित क्रांति के पश्चात प्राविधिक परिवर्तनों के कारण कृषि उत्पादकता में महत्वपूर्ण वृद्धि हुई। परिणामत: भारत अनाज, धान, फल, सब्जियां और समुद्रीय उत्पाद के निर्यातक के रूप में उभरा है। परंतु मशीनरी और उर्वरकों का भारी मात्रा में आयात किया जाने लगा है। हरित क्रांति के बाद जहां खाद्यान्नों का आयात कम हो गया है, वहीं कृषि मशीनरी का आयात बढ़ गया है। खाद्य तेलों का आयात भी बढ़ा है। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि हरित क्रांति के पूर्व मुख्य ज़ोर खाद्यान्नों के आयात पर था परंतु हरित क्रांति के बाद प्रसंस्कृत खाद्य वस्तुओं और अन्य माध्यमिक वस्तुओं का आयात अधिक हुआ है। भारत में प्राथमिक और प्रसंस्कृत कोटि की 325 वस्तुओं का आयात होता है। आर्थिक सुधारों के बाद की अवधि में कुछ वस्तुओं का आयात बंद हो गया है और अन्य नवीन वस्तुओं का आयात बढ़ा है। आर्थिक सुधारों के बाद 38 वस्तुओं का आयात बंद हुआ। दूसरी ओर 56 नवीन कृषि वस्तुओं का आयात आरंभ हुआ। वर्ष 2004-05 में कुल 3811.1 मिलियन डॉलर की कृषि वस्तुओं का आयात किया गया जो देश के समस्त आयातों का लगभग 4.7 प्रतिशत है। कृषि आयात में अब खाद्य तेल और दालों का अंश अत्यधिक है। वर्ष 2004-05 में कुल कृषि आयात में खाद्य तेलों का अंश 63.4 प्रतिशत और दालों का अंश 10.3 प्रतिशत था।

अर्थव्यवस्था के कृषि निर्यात खाद्य और कच्चे पदार्थ की कोटि के हैं। कुल निर्यात में 85 प्रतिशत अंश खाद्य पदार्थों का और 15 प्रतिशत अंश मध्यवर्ती उत्पादनों का है। यह अनुमान किया गया है कि निर्यात की लगभग 300 मदें खाद्य पदार्थों के वर्ग में और 250 मदें कच्चे पदार्थ व मध्यवर्ती उत्पाद के रूप में हैं। निर्यात की समस्त वस्तुओं को 6 वर्गों में विभक्त किया जाता है : (i) व्यापारिक

फसलें- जिनमें तंबाकू, मूंगफली, प्याज, कपास, बासमती चावल, आलू, जूट, लहसुन, ताजी सब्जियां और मसाले मुख्य हैं। (ii) बागानी फसलें- बागानी फसलों के वर्ग में निर्यात की मुख्य मदों में चाय, कॉफी, रबर और छोटी इलायची सम्मिलित हैं। (iii) पशुजन्य उत्पाद- इस वर्ग में मांस, भेड़ एवं बकरियां, अंडे, दुग्ध आते हैं। (iv) मछली, एवं समुद्री उत्पाद। (v) वनोपज में चंदन, लाख इमारती लकड़ी, रेलवे स्लीपर, बीड़ी की पत्तियां, गोंद एवं रेजिन आदि सम्मिलित हैं। (vi) संसाधित कृषि वस्तुएं- इस वर्ग में कई महत्वपूर्ण मदें सम्मिलित हैं जिनमें मक्खन, घी, आम का रस, चीनी, चिकने तेल, सिगरेट, मूंगफली का तेल, बिस्कुट आदि मुख्य हैं। अन्य विकासशील देशों सहित भारत भी कुछ परंपरागत सामग्री के निर्यात पर निर्भर रहा है। मलाया की रबर, वर्मा का चावल, पाकिस्तान की कपास, श्रीलंका की चाय, रबर और नारियल आदि इसके उदाहरण हैं। देश के निर्यात संरचना में कृषि और हस्तशिल्प आधारित वस्तुओं का प्रमुख योगदान है। कृषि वस्तुओं में भी निर्यात व्यापार की दृष्टि से कुछ वस्तुएं ही यथा - चाय, कॉफी, चावल, तंबाकू, मसाले, अखरोट खली, फल एवं सब्जियां, प्रसंस्कृत फल एवं सब्जियां, मांस एवं मांस उत्पाद तथा समुद्री उत्पाद अधिक महत्वपूर्ण हैं। योजनाकाल में कृषि वस्तुओं के निर्यात व्यापार की मात्रा और मूल्य में वृद्धि हुई है। कृषि वस्तुओं के निर्यात में 1951-60 के अवधि में लगभग स्थिरता की स्थिति रही है। परंतु इसके बाद 1951-66 को छोड़कर निर्यातों के मूल्य में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। विश्व अर्थव्यवस्था में स्फीतिकारी प्रवृत्तियों और 1972-73 में बांग्लादेश को खाद्यान्न निर्यात बढ़ने के कारण निर्यात प्राप्ति में वृद्धि हुई। कृषि निर्यातों का कुल निर्यातों में सापेक्षिक अंश कम हो रहा है। परंतु अभी भी कुल निर्यात का लगभग 10.2 प्रतिशत भाग कृषि उत्पादों का है।

कृषि व्यापार नीति

भारत की व्यापार नीति स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद लगभग तीन दशकों तक नियमन, नियंत्रण एवं संरक्षण की रही है। आयात प्रतिबंध, प्रतिस्थापन, उच्च सीमा शुल्क, सकारात्मक सूची और लाइसेंस व्यापार नीति के प्रमुख अवयव रहे हैं। कुछ वस्तुओं का आयात-निर्यात कोटा के माध्यम से होता था और कई वस्तुओं का आयात-निर्यात 'केनेलाइजिंग एजेंसी' के माध्यम से होता था। व्यापार नीति के इन समष्टिभावी आयामों का प्रभाव कृषि उत्पादों पर भी था। भारतीय खाद्य निगम खाद्यान्नों के आयात हेतु प्रमुख 'केनालाइजिंग एजेंसी' रही है। निर्यात नीति प्रस्ताव, 1970 में अधिक निर्यात क्षमता वाली वस्तुओं की पहचान करने और उनके सुधार तथा विकास के लिये उचित माध्यमों का सुझाव दिया गया था ताकि अर्थव्यवस्था आत्मविश्वास के साथ आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर हो। समुद्री उत्पाद और उससे संबद्ध निर्यातों को बढ़ावा देने के लिये 1972 में 'मेरीन प्रोडक्ट एक्सपोर्ट डेवलपमेंट अथारिटी' की स्थापना की गई। कृषि उत्पादों एवं प्रसंस्कृत उत्पादों के निर्यात को बढ़ावा देने के लिये 1986 में 'एग्रीकल्चरल एंड प्रोसेस्ड फूड डेवलपमेंट अथॉरिटी की स्थापना की गई। इस नीति प्रस्ताव में अधिक निर्यात संभावना वाली फसलों का उत्पादन बढ़ाने के लिये विशेष प्रयत्न का प्रस्ताव किया गया जैसे - कपास, जूट, मसाले, तंबाकू, काजू, तिलहन इत्यादि। निर्यात में वृद्धि के लिये उत्तम बीज, सिंचाई, उर्वरक, कीटाणु नाशक दवाइयों के प्रयोग और कृषि के उन्नत तरीकों को लागू करके उपर्युक्त वस्तुओं के उत्पादन में वृद्धि करने की बात कही गई। व्यापारिक फसलों और प्रसंस्कृत सामान के निर्यात वृद्धि पर विशेष बल दिया गया। इसी प्रकार व्यापारिक दृष्टि से फलों, सब्जियों आदि के विकास हेतु वैज्ञानिक विधियों पर ज़ोर दिया गया। शीघ्र नाशवान कृषि उत्पादनों और मछलियों के निर्यात में भी विकास की आवश्यकता है। इस प्रस्ताव में वनोपज के निर्यात पर भी बल दिया गया।

देश में जून 1991 से आर्थिक सुधारों की प्रक्रिया आरंभ हुई। नियमन और नियंत्रण के स्थान पर निजीकरण और खुलेपन को बढ़ावा दिया गया। इस क्रम में व्यापार नीति में भी परिवर्तन की प्रक्रिया आरंभ हुई। मात्रात्मक प्रतिबंधों को समाप्त करने, प्रशुल्क में कमी करने, केनालाइजिंग एजेंसी की अनिवार्यता शिथिल करने के कदम उठाए गए। संरक्षण और प्रतिस्थापन के स्थान पर खुलेपन और प्रतिस्पर्धा पर ज़ोर दिया जाने लगा। इस प्रकार व्यापार नीति को उदार बनाया गया और उदारीकरण का तत्व क्रमशः बढ़ता गया।

परंतु 1991 के आर्थिक सुधारों की प्रक्रिया में किए गए व्यापार नीति के परिवर्तनों में कृषि व्यापार नीति में कोई परिवर्तन नहीं किया गया। बाद के वर्षों में कृषि व्यापार नीति में परिवर्तन तो किया गया तथापि 1995 तक कृषि व्यापार नीति में कोई क्रांतिकारी परिवर्तन नहीं हुआ। नारियल, दालें, चावल, सब्जियां, खली एवं गरी आदि लाइसेंसिंग व्यवस्था में ही बने रहें। वस्तुतः सतत उदार होती अर्थव्यवस्था एवं विश्व व्यापार संगठन की स्थापना के बाद कृषि व्यापार नीति को भी उदार किया जाना आवश्यक हो गया। भारत ने 15 अप्रैल, 1994 को यूरुग्वे दौर के अनुसार विश्व व्यापार संगठन के समझौते पर हस्ताक्षर किया। विश्व व्यापार संगठन पहली जनवरी, 1995 से प्रभावी हुआ। विश्व व्यापार संगठन के कृषि पर हुए समझौते के अनुसार कृषि व्यापार को भी विश्व व्यापार संगठन के कार्य क्षेत्र में सम्मिलित कर लिया गया। इन समझौतों का उद्देश्य कृषि व्यापार में मात्रात्मक प्रतिबंधों को समाप्त करना, मात्रात्मक प्रतिबंधों को प्रशुल्कों से प्रतिस्थापित करना, प्रशुल्कों में कमी करना और घरेलू कृषि व्यापार को अन्य देशों के कृषि निर्यातों के लिये खोलना है। विश्व व्यापार संगठन का कृषि पर समझौता प्रावधान लागू होने से कृषि व्यापार नीति में उदारीकरण की एक नवीन व्यवस्था का सूत्रपात हुआ। कृषि व्यापार नीति में उदारीकरण के परिप्रेक्ष्य में निम्नलिखित महत्वपूर्ण नीतिगत परिवर्तन किए गए :

1. कृषि व्यापार में 'केनालाइजिंग एजेंसी' की भूमिका अत्यंत कम कर दी गई। कतिपय

अति संवेदनशील आयातों यथा – अनाज, तिलहन और खाद्य तेल के अतिरिक्त अन्य कृषिगत आयातों को 'डिकेनालाइज' कर दिया गया। इसी प्रकार प्याज, तिल जैसी वस्तुओं को छोड़कर अन्य कृषिगत निर्यात 'डिकेनालाइज' कर दिए गएं।

2. प्रतिबंधित, वर्जित और राज्य एकाधिकार वाली वस्तुओं को छोड़कर शेष कृषि आयातों से मात्रात्मक प्रतिबंध समाप्त कर दिए गए। प्रतिकूल व्यापार संतुलन के परिप्रेक्ष्य में 2,714 वस्तुओं पर मात्रात्मक प्रतिबंध लगा हुआ था जिनमें कई कृषि उत्पाद थे। मात्रात्मक प्रतिबंध हटाने की प्रक्रिया पहली अप्रैल, 2001 से अधिक तीव्र हो गई।
3. शोध और उत्पादन विकास की परियोजनाओं तथा कृषि उत्पादों को विदेशी बाज़ार में प्रोत्साहित करने की प्रक्रिया को सहायता देने के कार्यक्रम आरंभ किए गए हैं।
4. अंतरराष्ट्रीय बाज़ार में भारतीय कृषि उत्पादों को प्रोत्साहित और स्थापित करने के लिये निर्यातकों को सहायता उपलब्ध कराने के कार्यक्रम आरंभ किए गए।

व्यापार में मात्रात्मक प्रतिबंध समाप्त होने से यह संभावना बनती है कि घरेलू बाज़ार में विदेशी वस्तुओं का संकेंद्रण हो जाए। कई देश अपनी कृषि उपज पर और उनके निर्यात पर भारी सहायता प्रदान करते हैं। इस कारण घरेलू कृषि उत्पादकों को भारी क्षति का भय बना रहता है। इसलिये 2001-07 की व्यापार नीति में बचाव के सम्यक प्रावधान किए गए हैं ताकि आयात से मात्रात्मक प्रतिबंध समाप्त होने के नकारात्मक प्रभाव कृषि क्षेत्र पर न पड़ें। इस क्रम में कतिपय कृषि उत्पादों, यथा – गेहूं, चावल, मक्का और कई अन्य मोटे अनाज तथा नारियल को राज्य व्यापार की श्रेणी में रख दिया गया है। कुछ चयनित राज्य व्यापार उद्यमों को ही इनके आयात की अनुमति है। कई खाद्य उत्पादों का आयात घरेलू खाद्य मानकों के पूरा होने पर ही किया जा सकता है। पौध एवं पशुजन्य प्राथमिक आयातों से बीमारियों और जीवाणुओं का प्रसार न हो, इस लिये उनका आयात भारत सरकार द्वारा निर्गत स्वच्छता एवं पादप स्वच्छता प्रावधान की अनुमति मिलने पर ही किया जा सकता है। अब कई ऐसे कृषि उत्पादों पर आयात प्रशुल्क लगा दिया गया है जो पहले स्वतंत्र आयात की कोटि में थे। दूध, दूध पाउडर, गेहूं उत्पाद, मक्का, चावल, सरसों और राई का तेल, बाजरा, ज्वार, सवां आदि कृषि वस्तुओं पर प्रशुल्क गैट के अनुच्छेद 27 के अंतर्गत बातचीत करके बढ़ाए जा सकते हैं।

कृषि भारत का आधारभूत क्षेत्र है। कई वस्तुओं यथा – मसाले, चाय, जूट, तिलहन एवं काफी के उत्पादन में भारत को जलवायु और भौतिक संरचनागत विशिष्टता प्राप्त है। ऐसी दशा में भारत का निर्यात व्यापार कृषि वस्तु प्रधान होना स्वाभाविक है। अभी देश की कुल निर्यात आय का लगभग 13 प्रतिशत भाग कृषिगत निर्यात से आता है इसलिये सरकार कृषि निर्यात को बढ़ाने के लिये विशेष रूप से सचेष्ट है। यह माना जा रहा है कृषि क्षेत्र में निर्यात बढ़ाकर विदेशी मुद्रा प्राप्त करने और कृषकों की आय बढ़ाने की व्यापक संभावनाएं हैं अत: कृषिगत निर्यात को बढ़ाने के लिये विशेष प्रयास किए गए हैं। निर्यात संवर्धन काउंसिल और वस्तु बोर्ड संबद्ध वस्तुओं के उत्पादन और निर्यात को प्रोत्साहित करते हैं। नारियल जटा, चाय, कॉफी, रबर, मसाले और तंबाकू के उत्पादन और निर्यात को प्रोत्साहित करने के लिये 6 वैधानिक वस्तु बोर्ड गठित किए गए हैं। इसी प्रकार विभिन्न वस्तुओं के निर्यात को प्रोत्साहित करने के लिये 20 'निर्यात संवर्धन काउंसिल' बनाई गई हैं। इनमें से 5 कृषि वस्तुओं के निर्यात से संबंधित हैं। ये हैं काजू निर्यात प्रोत्साहन काउंसिल, समुद्री उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण, प्रसंस्कृत खाद्य निर्यात संवर्धन काउंसिल, मसाला निर्यात संवर्धन काउंसिल और तंबाकू निर्यात संवर्धन काउंसिल। कृषि वस्तुओं के निर्यात को प्रोत्साहित करने के लिये 1986 से नकद क्षतिपूर्ति सहायता योजना चलाई गई है ताकि शीघ्र नाशवान वस्तुओं की क्षति होने पर क्षतिपूर्ति की जा सके।

राष्ट्रीय कृषि नीति, 2000 में कृषि विविधीकरण और मूल्यवर्धन पर ज़ोर दिया गया है ताकि निर्यात एवं खेतिहर परिवारों की आय बढ़ाई जा सके। दसवीं पंचवर्षीय योजना में कहा गया है कि निर्यात प्रतिबंधों को समाप्त किया जाना चाहिए। कमी की स्थिति में घरेलू मांग को निर्यात पर प्रतिबंध लगाकर नहीं, अधिक आयात से पूरा किया जाना चाहिए। व्यापार नीति, 2001 और आयात-निर्यात नीति 2002-07 में कृषि निर्यात में वृद्धि हेतु विशेष प्रावधान किए गए हैं। कृषि निर्यात की अंतरराष्ट्रीय बाज़ार तक पहुंच बढ़ाने के लिये 'कृषि निर्यात क्षेत्रों' की स्थापना को बढ़ावा दिया जा रहा है। निर्यात संवर्धन आयोजनों यथा – क्रेता-विक्रेता सम्मेलन का आयोजन, अंतरराष्ट्रीय व्यापार मेलों और प्रदर्शनियों का आयोजन और उनमें भागीदारी को प्रोत्साहित किया जा रहा है। कृषि उत्पादों यथा – गेहूं, गेहूं उत्पाद, मोटे अनाज, चीनी और दलहन को छोड़कर शेष अन्य कृषि उत्पादों के निर्यात पर लगे प्रतिबंध समाप्त कर दिए गए हैं। लगभग सभी अन्य उत्पाद स्वतंत्रतापूर्वक आयात-निर्यात किए जा रहे हैं। शुल्क मुक्ति योजना और निर्यात संवर्धन पूंजीगत पदार्थ योजना को कृषि क्षेत्र पर भी लागू किया गया है। ऊंची निर्यात संभावना वाले उत्पादों पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। कृषि निर्यात को बढ़ाने के लिये विशेष कृषि उपज योजना चलाई जा रही है। दीर्घकालीन विदेशी व्यापार नीति, 2005-09 के परिशिष्ट के रूप में 2006-07 के लिये घोषित विदेशी व्यापार नीति में 'विशेष कृषि उपज योजना' का विस्तार किया गया है और इसमें कुटीर एवं ग्रामोद्योग के अंतर्गत बनी वस्तुओं को भी निर्यात हेतु सम्मिलित कर लिया गया है।

भारत में कृषि उत्पादों के निर्यात को बढ़ाने की विपुल संभावनाएं विद्यमान हैं। उत्पादों के विविधीकरण और सुविधाएं उपलब्ध कराकर निर्यात बढ़ाया जा सकता है। आर्थिक सुधारों का निर्यात पर प्रभाव हो रहा है। कृषि क्षेत्र से निर्यात की जाने वाली 308 प्रमुख मदें

हैं। आर्थिक सुधारों के आरंभ होने के बाद 26 मदों का निर्यात बंद कर दिया गया है। इनमें प्राथमिक और प्रसंस्कृत वस्तुओं का निर्यात सम्मिलित है। इसी प्रकार आर्थिक सुधारों के आरंभ होने के बाद कृषि क्षेत्र से 28 नवीन मदों का निर्यात आरंभ हुआ है। निर्यात की इन नवीन मदों में अधिकांश प्राथमिक वस्तुएं हैं। प्राथमिक वस्तुओं की कीमतें प्रसंस्कृत वस्तुओं की कीमतों से कम होती हैं। इससे यह स्पष्ट होता है कि अपेक्षाकृत कम मूल्य वाली वस्तुओं का निर्यात बढ़ा है। भारत के कृषि पदार्थों निर्यात संरचना में प्रसंस्कृत वस्तुओं की संख्या अधिक है। कुल मिलाकर भारत 254 वस्तुओं का निर्यात लगातार कर रहा है। इनमें 134 प्रसंस्कृत और 120 प्राथमिक वस्तुएं हैं। आर्थिक सुधारों के बाद की अवधि में चावल, सोयाबीन खली, रिफाइंड चीनी, गेहूं, मूंगफली एवं कॉफी का निर्यात बढ़ा है जबकि पेय पदार्थों और मिर्च का निर्यात कम हुआ है।

प्रसंस्करित वस्तुओं का निर्यात बढ़ाने का प्रयास किया जाना चाहिए। कृषि वस्तुओं के व्यापार में वृद्धि करने के लिये नवीन प्रकार की मंडियों को खोजना होगा तथा कृषि उत्पादन में विविधता लानी होगी। एशिया, अफ्रीका, पूर्वी यूरोप के देशों से व्यापार बढ़ाना होगा। मुख्य रूप से कृषि पर आधरित उद्योगों का आधुनिकीकरण किया जाना चाहिए जिससे कि उत्पादन लागत कम होने के साथ ही वस्तु की किस्म में सुधार हो और उपयोगिता में भी वृद्धि हो। उत्पादकों को संचार, पैकिंग, भंडारण, परिवहन जैसी अवस्थापनागत सुविधाएं बढ़ानी होंगी। वस्तुओं की उपयोगिता एवं मूल्य बढ़ाने के लिये प्रक्रिया उद्योगों का विकास होना आवश्यक है। कृषि प्रक्रियात्मक उद्योगों के विकास के लिये मशीनें और वित्तीय तथा तकनीकी सहायता मिलना आवश्यक है। गुणवत्ता, चयन का विकल्प और स्वास्थ्य तथा जैव सुरक्षा भी निर्यातों को प्रभावित करते हैं। इन पर ध्यान दिया जाए। भारत का अधिकांश विदेशी व्यापार समुद्री मार्ग द्वारा होता है। विदेशी व्यापार के लिये देश में पूर्वी और पश्चिमी तट पर कुल 12 बड़े बंदरगाह हैं। लेकिन इन सभी बंदरगाहों में मुंबई, हल्दिया और चेन्नई के बंदरगाहों पर ही वर्षभर अत्यधिक भीड़ रहती है। परिणामतः इन बंदरगाहों पर भंडारण, लदान और यातायात की समस्या जटिल हो जाती है। इससे सामानों को क्षति पहुंचती है और शीघ्र नाशवान वस्तुएं उपभोग योग्य नहीं रह जाती हैं। अवस्थापनागत सुविधाओं के अन्य साधनों के विकास की अत्यंत आवश्यकता है। सामान्यतः कृषि वस्तुओं के भारतीय निर्माता जोखिम वहन करने में सक्षम नहीं होते हैं। सरकार की ओर से उन्हें इस संदर्भ में मार्गदर्शन एवं समर्थन की आवश्यकता है। उत्पादकों को कृषि वस्तुओं के निर्यात के संबंध में विभिन्न जानकारी दी जानी चाहिए। ❑

(लेखक इलाहाबाद डिग्री कॉलेज के अर्थशास्त्र विभाग में रीडर हैं)

Now Delhi in Patna *Admission open...*

IAS/PCS

सामान्य अध्ययन + इतिहास

By : MEDIUM : हिन्दी + ENGLISH

शैलेन्द्र सिंह

With Proven Capacity

RENOWNED FOR ANALYTICAL APPROACH

Features:-
- व्याख्यान पर बल
- सम्पूर्ण पाठ्यक्रम के नोट्स
- Regular Test
- Regular Debate
- Answer Formating
- साक्षात्कार (Interview)

New Batch : 1st week of every month

अन्य विषय : निबंध / साक्षात्कार

THE ZENITH

An Innovative Institute for I.A.S.

G-4, Chandrakanta Apartment, Opp. Bata, Pandui Kothi Lane, Boring Road, Patna-800001,
Mob. : 9431052949 / 9931026982 E-mail : thezenithias@rediff.com

YH-8/6/02

कृषि उत्पादन बढ़ाने में सिंचाई का महत्व

○ सूरिन्दर सूद

भारत में नियोजित विकास की शुरुआत से ही सिंचाई को हमेशा प्राथमिकता सूची में रखा गया है। बड़ी, मध्यम और छोटी सिंचाई परियोजनाओं के जरिये सिंचाई के लिये बुनियादी ढांचा तैयार करने के लिये सार्वजनिक और निजी, दोनों क्षेत्रों में व्यापक निवेश हुआ है। इसके परिणामस्वरूप कुल सिंचाई क्षमता में व्यापक वृद्धि हुई है। 1950-51 में योजना-पूर्व इसका स्तर जहां 2.26 करोड़ हेक्टेयर था अब यह 8.9 करोड़ हेक्टेयर से कुछ अधिक हो गया है। लेकिन सभी स्रोतों के जरिये देश की कुल सिंचाई क्षमता, जिसका पहले 11.35 करोड़ हेक्टेयर होने का अनुमान लगाया गया था, अब पुन: 13.99 मिलियन हेक्टेयर आंकी गई है। अभी तक हम इस क्षमता का करीब 64 प्रतिशत ही लाभ उठा पाए हैं।

देश में सृजित क्षमता का बहुत कम लाभ उठा पाने की वजह से वास्तविक सिंचित क्षेत्र केवल करीब 5.5 करोड़ हेक्टेयर (2000-01) है जो कुल जुताई क्षेत्र का करीब 40 प्रतिशत है। इस तरह 60 प्रतिशत क्षेत्र की फसलें अब भी वर्षा पर निर्भर हैं जिससे कुल कृषि उत्पादन में अनिश्चितता बनी रहती है।

इसके अलावा उपलब्ध सिंचाई जल का भी पूरी क्षमता के अनुरूप उपयोग नहीं हो रहा है। खेतों में फसलों की सिंचाई हेतु देशव्यापी जल प्रयोग क्षमता औसतन करीब 50 प्रतिशत रही है। हालांकि छिड़काव वाली सिंचाई और ड्रिप सिंचाई जैसी नयी जल उपयोग प्रणालियों की दक्षता दर क्रमश: 80 प्रतिशत और 95 प्रतिशत है लेकिन इनको लगाने पर होने वाले अत्यधिक शुरुआती खर्च की वजह से इनका प्रयोग बहुत कम क्षेत्रों में ही हो रहा है।

वास्तव में कृषि उत्पादन बढ़ाने और उसमें स्थिरता लाने के लिये 19वीं सदी में ही सिंचाई के महत्व को महसूस कर लिया गया था। इसके परिणामस्वरूप कुछ बृहत सिंचाई परियोजनाओं के लिये मुख्यत: व्यावसायिक दृष्टिकोण के साथ काम आरंभ किया गया तथा ये काफी लाभप्रद साबित हुईं। स्वतंत्रता प्राप्ति तक सिंचाई क्षेत्र सरकार के लिये राजस्व जुटाने का एक प्रमुख स्रोत था। ऐसा इसलिये था क्योंकि तत्कालीन ब्रिटिश सरकार ने केवल ऐसी परियोजनाएं शुरू करने की नीति अपनाई थी जिनसे कुछ आय प्राप्त होती हो।

19वीं सदी के उत्तरार्ध में पड़े अकाल और प्राकृतिक आपदाओं ने सरकार को मानसून फेल होने की वजह से नष्ट होने वाली फसलों के बचाव हेतु कुछ सिंचाई परियोजनाएं आरंभ करने पर मज़बूर कर दिया। इसका उद्देश्य सूख़ा राहत पर होने वाले ख़र्च से बचाव करना था। इसके फलस्वरूप बेतवा नहर, निरा, लेफ्ट बैंक केनाल, गोकाक नहर, खसवाड टैंक और रूसीकुलया नहर जैसी परियोजनाओं के लिये फसल सुरक्षा सिंचाई परियोजनाओं के रूप में काम शुरू किया गया। लेकिन सिंचाई परियोजनाओं के लिये यही प्राथमिकता बनी रही कि वे सरकार के लिये राजस्व जुटा सकें। इस तरह सिंचाई क्षेत्र सरकारी कोष के लिये राजस्व जुटाने का स्रोत बना रहा।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद योजनागत विकास में मुख्य जोर केवल राजस्व जुटाने पर नहीं रहा तथा अब मुख्य ध्यान जल संसाधनों के विविध लाभकारी प्रयोगों पर दिया जाने लगा। अत: सिंचाई, बाढ़ नियंत्रण, पनबिजली उत्पादन, पेयजल आपूर्ति औद्योगिक और अन्य विविध प्रयोगों जैसे विशिष्ट उद्देश्यों के लिये तीव्रता के साथ जल संसाधन परियोजनाएं तैयार करने तथा उनके क्रियान्वयन के लिये राज्य सरकारों को प्रोत्साहित किया गया।

इस नीति के परिणामस्वरूप विभिन्न प्रकार के बांधों, बैराजों, पनबिजली परियोजनाओं, नहरों के नेटवर्क आदि से जुड़ी विभिन्न प्रकार की ढांचागत सुविधाओं का विकास हुआ। इन सबकी सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धि यह रही कि पानी को जमा करके रखने की कुल स्टोरेज क्षमता 200 अरब क्यूबिक मीटर हो गई जो कि अन्य उद्देश्यों की पूर्ति के अलावा सिंचाई के लिये उपलब्ध है।

पर्यावरणीय और पुनर्वास से जुड़े मुद्दों के अलावा संसाधनों की कमी इस क्षेत्र के लिये प्रमुख बाधा रही है। इनकी वजह से बड़ी और मध्यम सिंचाई परियोजनाओं के क्रियान्वयन में बाधा आई है। लक्ष्यों की प्राप्ति में असफलता से सिंचाई परियोजनाओं के पूर्ण होने में बहुत देरी होने की वजह से लागत भी अत्यधिक बढ़ गई जिससे इस क्षेत्र की प्रगति में बाधा पहुंची है। बहुत-सी परिचालन परियोजनाएं प्रचालन और रखरखाव हेतु संसाधनों की कमी के कारण क्षमता के अनुरूप कार्य नहीं कर पा रही हैं। इस प्रमुख क्षेत्र की वर्तमान निराशाजनक स्थिति के लिये राज्य सरकारों के पास संसाधनों की कमी और ख़राब जल मूल्य निर्धारण नीति को प्रमुख रूप से दोषी माना जाता है।

दरअसल बहुउद्देशीय और सिंचाई परियोजनाओं सहित बड़ी संख्या में नदी घाटी परियोजनाएं इनके क्रियान्वयन के लिये जिम्मेदार राज्य सरकारों द्वारा मुख्यत: पर्याप्त धनराशि के आवंटन के अभाव में एक योजना से दूसरी योजना में खिसकती चली गई।

हालांकि 7वीं योजना से किसी भी तरह की कोई नयी सिंचाई और बहुउद्देशीय परियोजना आरंभ नहीं की गई है, फिर भी 171 बड़ी, 259 मध्यम और 72 विस्तार पुनरुद्धार तथा आधुनिकीकरण योजनाओं को 8वीं योजना से 9वीं योजना में स्थानांतरित किया गया। इनमें से पांच परियोजनाएं पहली योजना से, द्वितीय और सप्तम योजना में से प्रत्येक से सात परियोजनाएं, तृतीय योजना से 12 परियोजनाएं, चौथी योजना से 18 और 8वीं योजना से 20 परियोजनाएं अब भी लंबित पड़ी हैं। आर्थिक सर्वेक्षण 2005-06 लंबित परियोजनाओं की कुल लागत का अनुमान 75,690 करोड़ रुपये लगाया गया था। मध्यम में और बड़ी सिंचाई परियोजनाओं के जरिये सिंचाई क्षमता सृजन की लागत पूंजी में काफी वृद्धि हुई है। 1970 के दशक में यह 40,000 रुपये प्रति हेक्टेयर थी जो 1990 में 1,90,000 रुपये से अधिक हो गई।

वास्तव में 1980 के दशक के मध्य से ही नहरी सिंचाई हेतु सरकारी धन के आवंटन में कोई वृद्धि नहीं की गई। कुल योजना व्यय में सिंचाई का हिस्सा 10 प्रतिशत से नीचे रहा है। परिणामस्वरूप नहरी सिंचाई क्षमता की दर में भी गिरावट का रुख रहा। यह 1974 में करीब 10 लाख हेक्टेयर थी जो 8वीं योजना में (1992-97) मात्र 4 लाख हेक्टेयर रह गई।

इन्हीं सब कारणों से 1996-97 में एक त्वरित सिंचाई लाभ कार्यक्रम (एआईबीपी) आरंभ किया गया। इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य उन सिंचाई परियोजनाओं के काम में तेजी लाना था जिन पर पहले ही बड़ी मात्रा में निवेश हो चुका है ताकि इन्हें और देरी के बिना पूरा किया जा सके।

बाद में एआईबीपी हेतु केंद्रीय मदद को राज्यों द्वारा सिंचाई क्षेत्र में सुधार प्रक्रिया शुरू करने के साथ जोड़ दिया गया। एक ओर जहां ज्यादातर राज्यों को उन्हें छोड़कर जो कि उनके पिछड़ेपन के कारण विशेष श्रेणी के अंतर्गत आते हैं, केंद्रीय योजनागत सहायता 2:1 के अनुपात में (केंद्र-राज्य) प्राप्त हुई वहीं सुधार करने वाले राज्यों (जो कि प्रचालन और अनुरक्षण खर्च की भरपाई के लिये पानी का शुल्क बढ़ाने पर सहमत हुए) को केंद्रीय सहायता 4:1 के अनुपात में प्राप्त हुई।

सतही सिंचाई के अन्य स्रोत परंपरागत तालाब और अन्य सतही जल स्रोत हैं। देश में इस समय 1.5 करोड़ तालाब हैं। इन तालाबों का घनत्व आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, तमिलनाडु और पश्चिम बंगाल जैसे राज्यों में अपेक्षाकृत ऊंचा है। लेकिन इनमें से बहुत से तालाबों के उचित अनुरक्षण का अभाव हैं। इनमें बढ़ती गाद की वजह से पिछले वर्षों में इन तालाबों की सिंचाई क्षमता में कमी आई है। 1960 में तालाबों के जरिये सिंचित किए जाने वालों लगभग 48 लाख हेक्टेयर क्षेत्र का अनुमान लगाया गया था लेकिन तालाबों के सूखने या अन्य कारणों की वजह से अब यह क्षमता केवल 17 लाख हेक्टेयर ही आंकी गई है।

वर्ष 2004-05 के बजट में तालाबों और अन्य जल स्रोतों की मरम्मत, नवीकरण और जीर्णोद्धार हेतु एक व्यापक कार्यक्रम शुरू किया गया। इस उद्देश्य के लिये 30 करोड़ रुपये की अनुमानित लागत के साथ जनवरी 2005 में 10वीं योजना में क्रियान्वयन के लिये एक प्रायोगिक योजना मंजूर की गई। राज्य क्षेत्र की इस योजना के लिये केंद्र और राज्य सरकारों के बीच 75:25 के अनुपात में धन खर्च किए जाने की सहमति प्रदान की गई। अप्रैल 2006 तक केंद्रीय जल संसाधन मंत्रालय ने 262.91 करोड़ रुपये की कुल लागत के साथ 13 राज्यों के 23 जिलों हेतु परियोजनाएं मंजूर की। ये परियोजनाएं आंध्र प्रदेश, छत्तीसगढ़, गुजरात, हिमाचल प्रदेश, जम्मू-कश्मीर, झारखंड, कर्नाटक, केरल, मध्य प्रदेश, उड़ीसा, राजस्थान, तमिलनाडु और पश्चिम बंगाल राज्यों में हैं। सतही जल ढांचों से कुल सिंचाई कमांड क्षेत्र में वृद्धि करने के लिये इस योजना के तहत और अधिक परियोजनाएं शुरू किए जाने की संभावना है।

वास्तव में लघु सिंचाई दिन-ब-दिन अपनी खूबियों की वजह से ज्यादा महत्वपूर्ण होती जा रही है। इसके तहत लघु निवेश, आसान उपकरण, तीव्र परिणाम और आसान प्रबंधन सम्मिलित है। यह किसानों के लिये बहुत अच्छी है क्योंकि इससे व्यक्ति विशेष की आवश्यकताओं की आसानी से पूर्ति होती है। इसके परिणामस्वरूप अधिकतर लघु सिंचाई क्षमता का सृजन निजी पूंजी निवेश के जरिये हुआ है तथा यह मुख्यत: भूजल के दोहन पर आधारित है। कृषि, ग्रामीण विकास, सिंचाई, समाज कल्याण आदि जैसे कई सरकारी विभाग लघु सिंचाई कार्यक्रमों को प्रोत्साहन दे रहे हैं।

ग्रामीण क्षेत्र और रोजगार मंत्रालय ने 1988-89 में कुओं के नेटवर्क के विस्तार हेतु एक महत्वाकांक्षी योजना शुरू की। 10 लाख कुएं नामक इस योजना के तहत 4,728 करोड़ रुपये से अधिक के व्यय के साथ 12.6 लाख से अधिक कुओं के निर्माण में मदद मिली।

इसके अतिरिक्त कृषि मंत्रालय वाणिज्यिक बैंकों, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों, सहकारी संस्थाओं और राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) पर इस बात के लिये दबाव बनाए हुए है कि वे कुएं के निर्माण और ट्यूबवेल हेतु किसानों को ऋण उपलब्ध कराएं। जल संसाधन मंत्रालय लघु सिंचाई योजनाएं तैयार करने में राज्य सरकारों की सहायता कर रहा है ताकि विदेशी वित्त प्राप्त करने में सहायता मिले।

सिंचाई क्षेत्र का सबसे चिंताजनक पहलू है सृजित सिंचाई क्षमता और इसके उपयोग के बीच बहुत बड़ा अंतर होना। इस अंतर को कम करने के उद्देश्य से केंद्र द्वारा प्रायोजित कमांड एरिया डेवलपमेंट (सीएडी) स्कीम 1974-75 में आरंभ की गई थी। बाद में इसका विस्तार करके इसमें जल प्रबंधन और सिंचाई कमांड क्षेत्रों में अधिक से अधिक कृषि उत्पादन प्राप्त करने के लिये पानी के समुचित उपयोग को सुनिश्चित करने के मुद्दे को भी शामिल कर लिया गया। इस कार्यक्रम के अंतर्गत

नवंबर 2005 तक 2.89 करोड़ हेक्टेयर क्षेत्र कुल कमांड क्षेत्र वाली करीब 310 परियोजनाओं में शामिल किया जा चुका था।

सिंचाई को अब बृहत भारत निर्माण कार्यक्रम के तहत ग्रामीण बुनियादी ढांचा विकास के लिये निर्धारित छह महत्वपूर्ण बिंदुओं में शामिल किया गया है। इसके लिये वर्तमान योजनाओं के विस्तार, नवीकरण और आधुनिकीकरण के जरिये तथा सिंचाई कमांड क्षेत्रों में अधिक दक्षता वाली जल प्रबंधन व्यवस्था शुरू करके 10 लाख हेक्टेयर सिंचाई क्षमता की बहाली और इसके उपयोग का प्रस्ताव किया गया है।

इसके अलावा, भारत निर्माण में इस बात पर भी ज़ोर दिया गया है कि उन क्षेत्रों में भी उपलब्ध भूजल का सिंचाई के लिये उपयोग किया जाए जहां अभी तक इस स्रोत का पर्याप्त दोहन नहीं किया जा सका है। इस प्रकार इसके तहत भूजल विकास के जरिये करीब 28 लाख हेक्टेयर की सिंचाई क्षमता सृजित करने का तय लक्ष्य है।

इसके अतिरिक्त सतही जल बहाव के उपयोग से लघु सिंचाई योजनाओं के जरिये करीब 10 लाख हेक्टेयर की सिंचाई क्षमता सृजित करने की योजना है। जल संग्रह केंद्रों की मरम्मत, नवीकरण और पुन: बहाली तथा लघु सिंचाई योजनाओं के विस्तार, नवीकरण और आधुनिकीकरण के जरिये दस लाख हेक्टेयर सिंचाई क्षमता उपलब्ध कराने का भी प्रस्ताव है। इन सभी लघु सिंचाई कार्यक्रमों का लक्ष्य छोटे और सीमांत किसानों को लाभ पहुंचाना है।

हालांकि कृषि विकास को बढ़ावा देने के लिये सिंचाई व्यवस्था के और विस्तार की आवश्यकता है, साथ ही उन समस्याओं के निराकरण की भी तत्काल आवश्यकता है जो सिंचाई व्यवस्था में अक्सर बाधक होती हैं। ये समस्याएं नहरी सिंचाई क्षेत्रों में पानी जमा होने और मिट्टी का खारापन बढ़ने तथा ट्यूबवेल सिंचाई क्षेत्रों में तेज़ी से भूजल का स्तर गिरने के रूप में उभर कर सामने आ रही हैं। इन समस्याओं का कारण प्रथम दृष्टि में मुख्यत: अपर्याप्त व्यवस्था, नहर कमांड क्षेत्रों में पानी का अत्यधिक प्रयोग तथा कुओं से सिंचित क्षेत्रों में भूजल की अत्यधिक निकासी माना जा रहा है। लेकिन इन सब कारणों के पीछे नहरी सिंचाई क्षेत्रों में पानी का यथार्थ मूल्य न होना तथा ट्यूबवेलों को चलाने के लिये सस्ती या मुफ़्त बिजली की आपूर्ति है। पिछले कई दशकों से कई राज्यों में पानी की दरों में कोई वृद्धि नहीं की गई है। इसी प्रकार कई राज्य सरकारें कृषि क्षेत्र को ट्यूबवेल चलाने हेतु मुफ़्त या रियायती दरों पर बिजली उपलब्ध करा रही हैं। ये लोकप्रियता हासिल करने के उपाय हो सकते हैं लेकिन अब ये विकास विरोधी सिद्ध हो रहे हैं।

इसके साथ एक और महत्वपूर्ण प्रश्न जुड़ा है किसी व्यक्ति विशेष को अपनी जमीन के टुकड़े से असीमित जल निकालने का अधिकार होना। इस तरह का अधिकार देने संबंधी कानूनी प्रावधान अब सचमुच में पुराने पड़ चुके हैं, खासकर इस स्थिति में कि भूजल की उपलब्धता सबके लिये एक समान है और एक व्यक्ति द्वारा अत्यधिक दोहन किये जाने से वह दूसरों को उनके हिस्से से वंचित कर सकता है, खासकर उन क्षेत्रों में जहां पर भूजल का स्तर तेजी से गिरता जा रहा है।

इन नीतियों की वजह से पानी के अंधाधुंध उपयोग को बढ़ावा मिला है जिससे मिट्टी की उपजाऊ क्षमता में कमी के साथ-साथ उत्पादन की स्थिति चिंताजनक हुई है और परिस्थितिकीय समस्याएं बढ़ी हैं। जब तक जल क्षेत्र में सुधारों के जरिये इन मुद्दों को हल नहीं किया जाता, आर्थिक और पारिस्थितिकीय दृष्टिकोण से सिंचाई क्षेत्र के लिये स्थायित्व का ख़तरा बना रहेगा। ❑

(लेखक वरिष्ठ कृषि पत्रकार हैं)

राष्ट्रीय ई-गवर्नेंस योजना

राष्ट्रीय ई-गवर्नेंस योजना के तहत उठाए गए कदमों का उद्देश्य गवर्नेंस की गुणवत्ता में सुधार लाना तथा सूचना प्रौद्योगिकी के जरिये विभिन्न सरकारी सेवाएं आम आदमी को सुलभ कराना है।

मुख्य बातें

इस योजना की प्रमुख बातें इस प्रकार हैं:

- 26 नागरिक-केंद्रित मिशन परियोजनाएं
- छह लाख गांवों के लिये एक लाख साझा सेवा केंद्र
- राज्यभर में फैले क्षेत्रीय नेटवर्क के जरिये प्रखंड स्तर तक ऑप्टिक फाइबर संपर्क
- राज्य केंद्रों की स्थापना
- राज्य और स्थानीय सरकार स्तर पर कार्यान्वयन
- दीर्घावधि लाभ सुनिश्चित करने के लिये प्रभावी सरकारी-निजी भागीदारी

नागरिकों को लाभ

- सरकारी सेवाओं की एकीकृत और व्यापक प्राप्ति (उदाहरणार्थ : ऑन लाइन आवंटन और पैन कार्ड प्राप्त करना)
- सेवा स्तरों को स्पष्ट परिभाषित किया गया है (उदाहरण : संपत्ति अधिकारों का रिकार्ड 15 मिनट में जारी करना)
- ग्रामीण क्षेत्रों में व्यापक पहुंच के साथ सेवा प्राप्तकर्ता के द्वार पर सेवाओं की उपलब्धता (एक लाख साझा सेवा केंद्र सरकारी और निजी क्षेत्र दोनों की सेवाएं उपलब्ध करा रहे हैं)
- दक्षता में वृद्धि (अर्थात 3 माह की बजाय 30 मिनट में जमीन का पंजीकरण) ❑

SUBODH JHA CIVIL ACADEMY

हिन्दी माध्यम के लिए समर्पित एकमात्र संस्थान

समाजशास्त्र

By

SUBODH JHA

(B.Sc., M.A., LL.B., NET, SRF)
लखनऊ स्कूल ऑफ सोस्योलाजी

मुखर्जी मॉडल से उत्तर लेखन अभ्यास

* यूनिवर्सल + इण्डोलोजिकल एप्रोच
* सैद्धांतिक + व्यवहारिक उपागम
* **20 Test & Discussion**
* **सभी टॉपिक का क्लास नोट्स**
* **प्रिंटेड मेटेरियल बिल्कुल अलग**
* **कक्षा-आरेख चित्र के माध्यम से**

दर्शनशास्त्र

By

डॉ. उपेन्द्र कुमार

पाश्चात्य दर्शन तथा समकालीन दर्शन के एक मात्र वास्तविक विशेषज्ञ

(भारत में पहली बार प्रोजेक्टर के माध्यम से अध्यापन)

* सिविल सेवा में दर्शन शास्त्र के बदलते हुए स्वरूप को ध्यान में रखते हुए परिमार्जित एवं संशोधित अध्ययन सामग्री।
* पिछले 10 वर्षों के सभी प्रश्नों के उत्तरों की रूपरेखा का अभ्यास।
* 15 टेस्ट सीरिजों के साथ।
* 350-400 अंक की गारंटी

CRACH COURSE (120 hr.)

मुख्य परीक्षा हेतु

(प्रारंभिक परीक्षा के परिणाम के तुरन्त बाद)

पत्राचार पाठ्यक्रम उपलब्ध
फ्री काउन्सलिंग
(IAS परीक्षा से संबंधित)

TEST SERIES

10 Test & DISCUSSION

नामांकन आरम्भ

सामान्य अध्ययन-विशेषज्ञों के समूह के द्वारा

लोक प्रशासन
- डी. एन. पाण्डेय

इतिहास
- अख्तर मलिक

ADD- A-14 भंडारी हाउस (बेसमेंट), निकट चावला रेस्टोरेंट, मुखर्जी नगर- 9
Ph.: 011-55462132, 9873337566, 9350260167

YH-8/6/11

सहकारी ऋण संस्थाओं को पुनर्जीवन

○ वाई.एस.पी. थोराट

सहकारिताओं के दृष्टिकोण में भी आमूलचूल परिवर्तन लाए जाने की जरूरत है जिससे उनके काम करने के तरीकों में भी बदलाव लाया जा सके। उन्हें सेवा–उत्पाद देने की प्रक्रिया में भी नयापन लाने की जरूरत है, साथ ही सूचना प्रौद्योगिकी अपनाने की भी जरूरत है ताकि वे अधिकाधिक परिणाम दिखा सकें

आज जिस तरह की ग्रामीण कृषि ऋण व्यवस्था हमें दिखाई दे रही है इसका विकास पिछले साढ़े पांच दशकों में हुआ है। इस अवधि में इसमें कई प्रकार के परिवर्तन हुए हैं जो मुख्य रूप से समय-समय पर भारत सरकार और रिज़र्व बैंक ऑफ इंडिया द्वारा नियुक्त किए गए विभिन्न ग्रुपों और समितियों की सिफ़ारिशों के परिणाम थे। अगर ऐतिहासिक रूप से देखा जाए जो स्वतंत्रता प्राप्ति के समय कृषि ऋण विभागीय रूप से दिया जाता था तथा कुछ हद तक यह सहकारी समितियों द्वारा भी दिया जाता था। उस समय जो भी ऋण दिया जाता था वह सुधारात्मक प्रकृति का था और इसका उद्देश्य किसानों को उन ऋणदाताओं के पंजे से मुक्त कराना था जो बहुत ऊंची ब्याज दरों पर कर्ज़ दिया करते थे।

कृषि ऋण व्यवस्था को पहला नीतिगत दिशानिर्देश अखिल भारतीय ग्रामीण समिति से मिला जिसने नये उपायों की सिफ़ारिश की। इस समिति ने सहकारी समितियों के अस्तित्व और व्यापकता को मान्यता दी और इन्हें सुदृढ़ बनाने के लिये सरकारी वित्तीय सहायता की सिफ़ारिश की। इसने बड़े आकार की बहुउद्देश्यीय ऋण सहकारिताओं की स्थापना की सिफ़ारिश की और इंपीरियल बैंक ऑफ इंडिया (बाद में इसका नाम स्टेट बैंक रख दिया गया) के राष्ट्रीयकरण की भी सिफ़ारिश की ताकि ग्रामीण क्षेत्रों में भी बैंकिंग सेवाएं उपलब्ध कराई जा सके।

इन उपायों से कृषि के लिये ऋण प्राप्त होने में कुछ हद तक आसानी हुई लेकिन सहकारी समितियों से मिलने वाला ऋण मांग के मुकाबले काफी नहीं था। इसलिये कृषि के लिये ऋण प्राप्ति को सुविधाजनक बनाने के लिये सरकार को हस्तक्षेप करना पड़ा। इसके लिये उसने प्रमुख वाणिज्यिक बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया। यह काम दो चरणों में पूरा किया गया। कुछ प्रमुख बैंकों का राष्ट्रीयकरण 1969 में किया गया। बाद में 1980 में फिर ऐसा ही कदम उठाया गया। कृषि ऋण क्षेत्र के अन्य प्रमुख घटनाक्रमों में 1975 में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की स्थापना, 1982 में नाबार्ड का गठन और 1992 में चल रहे वित्तीय क्षेत्र के सुधार शामिल हैं। इन के पूरक के तौर पर काम करने के लिये 1996-97 में स्थानीय क्षेत्रीय बैंकों की शुरुआत की गई। इन सभी संस्थागत घटनाक्रमों से ग्रामीण ऋण संरचना मजबूत हुई तथा आगे चल कर ऋण मिलने में गुणात्मक सुधार हुआ।

संस्थागत ऋण संरचना

मौजूदा स्थिति के अनुसार ग्रामीण ऋण की संस्थागत संरचना में चार प्रकार के संस्थान आते हैं- वाणिज्यिक बैंक (राष्ट्रीयकृत एवं

तालिका-1

ग्रामीण ऋण के लिये संस्थागत व्यवस्था

रिज़र्व बैंक ऑफ इंडिया	भारत सरकार	
अनुसूचित वाणिज्यक बैंक (95)	नाबार्ड क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक (196)	ग्रामीण सहकारिताएं
8,882 मेट्रो शाखाएं 15		एससीबी-31
10,990 शहरी शाखाएं 430		डीसीसीबी-367
15,018 अर्द्धशहरी शाखाएं 2,153		पीएसीएस-1,12,309
32,080 ग्रामीण शाखाएं 11,825		एलडीबीएस-20
66,970 कुल शाखाएं 14,423		पीएलडीबीएस-730
जमाकर्ता एवं ऋणी	म्युचल फंड	स्वसहायता समूह

निजी), ग्रामीण क्षेत्रीय बैंक (वाणिज्यिक बैंकों द्वारा प्रायोजित), अल्पावधि सहकारी ऋण संरचना (एसटीसीसीएस) और राज्य सरकारी कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (एससीएआरडीबी) प्रारंभिक कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (पीसीएआरडीबी) इनसे संबद्ध हैं।

इस समय वाणिज्यिक बैंक ग्रामीण एवं अर्द्ध-शहरी क्षेत्रों में अपनी 6,1076 शाखाओं के जरिये काम करते हैं। सहकारी ऋण व्यवस्था के अल्पावधि पक्ष में 1,12,309 सहकारी ऋण सहकारिताएं हैं जो ग्राम स्तर पर ऋण देती हैं। एससीएआरडीबी/पीसीएआरडीबी की देशभर में कुल 1,573 शाखाएं हैं जो सावधि ऋण देती हैं। इस प्रकार से मार्च 2005 में 1,74,958 ग्रामीण ऋणदाता संस्थाओं के मार्फ़त जो कृषकों को ऋण सुविधा देती हैं, गांवों में ऋण उपलब्धता में बहुत सुधार आया है।

इस घटनाक्रम की ताज़ा कड़ी है अपनी मर्जी से स्वसहायता समूहों का गठन और उन्हें बैंकों से संबद्ध करना। इनके जरिये आबादी के दलित, वंचित वर्ग जैसे अजा/अजजा वर्ग के लोग, भूमिहीन श्रमिक, बटाईदार किसान आदि को औपचारिक रूप से ऋण पाने का पात्र बनाया जाता है। इस अवधारणा का और विस्तार करके गरीबों के लिये माइक्रो इंश्योरेंस आदि अन्य वित्तीय सेवाएं भी उपलब्ध कराई जाती हैं। ग्रामीण वित्तीय परिदृश्य में अब म्युच्युअल फंड भी आ गए हैं। हाल ही में बैंकों को एजेंसी बैंकिंग की तर्ज़ पर बैंकिंग करेस्पीडेंट्स के जरिये वित्तीय सेवाएं देने की इज़ाजत दे दी गई है। 1992 भारत में ऐसा साल था जब माइक्रो फाइनांस सेवाएं शुरू की गईं। 1992 में नाबार्ड ने स्वसहायता समूहों से संबद्ध कार्यक्रम के बारे में एक आजमायशी योजना शुरू की। इसमें 500 स्वसहायता समूहों को वाणिज्यिक बैंकों से जोड़ा गया। आज इसे बहुत कामयाब मॉडल मान लिया गया है और फरवरी 2006 के अंत तक लगभग 20 लाख समूह बैंकों से ग्रामीण 9,233 करोड़ रुपये का संचयी ऋण पा चुके थे।

कृषि को ऋण प्रवाह में प्रवृत्तियां

बैंक व्यवस्था किसानों को बीज, उर्वरक और कीटनाशक दवाएं आदि खरीदने के लिये पूंजीगत आवश्यकताएं पूरी करने के लिये ऋण देती हैं। इसके अतिरिक्त यह व्यवस्था कुएं, पंपसेट, ट्रैक्टर आदि की खरीद के लिये (निर्माण के लिये मध्यम अवधि) दीर्घ अवधि के ऋण भी देता है। 2000-01 से 2002-03 तक कृषि का संस्थागत ऋण वार्षिक चक्रवृद्धि दर से 14 प्रतिशत बढ़ा लेकिन 2003-04 में यह वृद्धि दर 25 प्रतिशत और 2004-05 में 44 प्रतिशत हो गई। कुल ऋण में अल्प अवधि ऋण का अंश 65 प्रतिशत के आसपास रहा, बाकी भाग सावधि ऋण का था।

अल्पावधि के ऋणों की मात्रा लगातार अधिक होने का कारण संभवत: यह है कि ऋण लेने और देने वाले, दोनों पक्षों को यह उपयुक्त लगता है। खेती का काम जारी रखने के लिये खाद, बीज जैसी ज़रूरी चीजें जुटाने पर ख़र्च करने की ज़रूरत तो पड़ती है अत: किसान कम अवधि के ऋण लेना ठीक समझते हैं क्योंकि इससे उनका तरलता के कारण संसाधनों पर नियंत्रण बना रहता है। उधर ऋणदाताओं को अल्पावधि ऋण इसलिये उपयुक्त लगता है क्योंकि उसमें अपेक्षाकृत कम जोखिम होता है।

1997 में जितना कुल ऋण दिया गया उसका 45 प्रतिशत भाग सहकारिताओं/वाणिज्यिक बैंकों का था। लेकिन 2004-05 में वाणिज्यिक बैंकों का अंश बढ़ कर 65 प्रतिशत हो गया जबकि सहकारिताओं का भाग कम हो कर 25 प्रतिशत रह गया। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का हिस्सा जो 6-8 प्रतिशत के बीच हुआ करता था, 2004-05 में बढ़ कर 10 प्रतिशत हो गया।

बैंकों की पहुंच सीमित करने वाले कारक

ग्रामीण वित्तीय संस्थानों की शाखाओं में काफी वृद्धि के बावजूद भौगोलिक क्षेत्र और किसान परिवारों की संख्या को देखते हुए इन संस्थाओं की पहुंच बहुत सीमित रही है। हाल ही में प्रकाशित एनएसएसओ सर्वेक्षण (2003) के अनुसार ऐसे संकेत हैं कि कुल 14.09 करोड़ ग्रामीण परिवारों में से 60 प्रतिशत कृषक हैं। इन कृषक परिवारों में से सिर्फ 28 प्रतिशत यानी 2.33 करोड़ परिवारों ने बैंक व्यवस्था से ऋण प्राप्त किया। वित्तीय संस्थानों की पहुंच सीमित बनाने वाला एक प्रमुख कारण है सहकारिताओं की ख़राब वित्तीय स्थिति। उड़ीसा, छत्तीसगढ़, झारखंड, बिहार, पश्चिम बंगाल तथा पूर्वोत्तर राज्यों और महाराष्ट्र के कुछ भागों में सहकारी समितियों की वित्तीय स्थिति ख़राब है। इन भागों में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों और वाणिज्यिक बैंकों की पहुंच सीमित है।

कमज़ोर सहकारी संगठन

पंजाब, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, केरल और उत्तरांचल को छोड़कर अन्य राज्यों में सहकारिताओं का संगठन कमज़ोर है। 31 मार्च,

तालिका- 2

सावधि ऋण का एजेंसी वार विवरण

(रुपये करोड़ में)

कृषि और संबद्ध गतिविधियों के लिए एजेंसी वार यथार्थ स्तर का ऋण प्रवाह

एजेंसी/वर्ष	1990-00	2000-01	2001-02	2002-03	2003-04	2004-05
सहकारी बैंक	18,260	20,718	23,524	23,636	26,875	31,231
क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक	3,172	4,220	4,854	6,070	7,581	12,404
वाणिज्यिक बैंक	24,733	27,807	33,587	39,774	52,441	81,481
अन्य एजेंसियां	103	82	80	80	84	193
योग	**46,165**	**72,745**	**61,965**	**69,480**	**86,981**	**1,25,309**

2004 की स्थिति के अनुसार सहकारी ऋण संगठनों के लगभग आधे संगठन हक़ीकत में घाटा उठा रहे थे। छह राज्य सहकारी बैंकों और 133 जिला केंद्रीय सहकारी संस्था के नेटवर्क ऋणात्मक हो चुके थे।

बैंक व्यवस्था को होने वाला संचयी घाटा (दीर्घावधि संरचनाओं के घाटे को मिला कर) लगभग 14,000 रुपये तक पहुंच गया। ध्यान देने की बात है कि अखिल भारतीय ग्रामीण ऋण सर्वेक्षण समिति ने यह बात मानी थी कि सहकारिताओं में पूंजीकरण का स्तर बहुत कम है। इसी बात को ध्यान में रखते हुए उन्होंने कहा था कि अगर सहकारिताओं को अधिक ऋण देना है तो उन्हें अधिक उधार लेना चाहिए। समिति का विचार था कि ऐसा सरकार की सहायता से उनका पूंजी आधार बढ़ा कर ही किया जा सकता है। यही कारण था कि समिति ने ऐतिहासिक भागीदारी का सुझाव दिया जिसके कारण यह सरकार के नियंत्रण में पहुंच गया और इस प्रकार से अनचाहे ही इसका परिणाम यह हुआ कि सहकारी ऋण व्यवस्था में सुशासन-प्रबंधन विफल हो गए जिसके कारण कई प्रकार की वित्तीय परेशानियां सामने आईं। इन्हीं समस्याओं से निपटने के लिये समय-समय पर समितियों का गठन किया गया। लेकिन सहकारिता आंदोलन के 100वें वर्ष के दौरान 2004 में यह जिम्मेदारी वैद्यनाथन समिति पर डाली गई कि वह एक ऐसी योजना का सुझाव दे जिसे आसानी से लागू किया जा सके।

वैद्यनाथन समिति

वैद्यनाथन समिति का प्रमुख काम यह था कि वह वित्तीय रूप से कमज़ोर और सुशासन तथा प्रबंधन की दृष्टि से विफल सहकारिताओं के पुनरुत्थान के उपाय सुझाए। हालांकि इन सहकारिताओं को फिर से पुनर्जीवित करने का मामला कमज़ोर था लेकिन समिति ने यह बात मानी कि सभी कठिनाइयों के बावजूद इन सहकारी ऋण समितियों की पहुंच व्यापक हैं, इनकी शाखाएं दुर्गम क्षेत्रों में भी मौजूद हैं और इनके 70 प्रतिशत लाभार्थी 'लघु एवं गुजारे वाले कृषक वर्ग' के हैं। कमज़ोर व्यवस्था के बावजूद इसे फिर से जीवित करना एक विरोधाभासी बात थी। इस कार्यबल ने इन सहकारिताओं को वित्तीय पुनर्गठन और नियामक तथा संस्थागत सुधारों से जोड़ने की राय दी। अन्य शब्दों में, इसे वित्तीय प्रोत्साहनों और कठोर शर्तों का मिश्रण बनाने का सुझाव दिया गया।

इस कार्यबल ने माना कि वित्तीय दुर्बलता कारण नहीं अपितु परिणाम था। वित्तीय दुर्बलता के कारण सुशासन एवं प्रबंधन की

समाचार

निजी क्षेत्र भी कर सकता है गेहूं का आयात

मूल्यों में वृद्धि को रोकने के लिये सरकार ने उठाया कदम

आवश्यक वस्तुओं की कीमतों में वृद्धि रोकने के उपायों के तहत सरकार ने निजी क्षेत्र को गेहूं का आयात करने की अनुमति देने, दालों का निर्यात स्थगित रखने और चीनी के सीमित आयात की अनुमति देने का फैसला किया है। ये सभी फैसले मूल्यों के बारे में मंत्रिमंडलीय समिति (सीसीपी) की बैठक में किए गए। वित्तमंत्री पी. चिदंबरम के अनुसार, गेहूं की आपूर्ति बढ़ाने के वास्ते निजी क्षेत्र को गेहूं आयात करने की अनुमति देने का फैसला किया गया है। सरकार आपूर्ति बढ़ाने के लिये गेहूं आयात करती रही है। उन्होंने कहा कि पर्याप्त गेहूं का आयात करने का निर्णय पहले किया गया था। कुछ गेहूं पहले ही पहुंच चुकी है। जरूरत की शेष मात्रा के लिये आयात से संबंधित विवरणों को अंतिम रूप दिया जा चुका है और शीघ्र ही इस बारे में फैसला किया जाएगा।

दालों का आयात

श्री चिंदबरम ने यह भी घोषणा की कि सीसीपी ने घरेलू बाज़ार में मांग की पूर्ति बनाए रखने हेतु तत्काल प्रभाव से दालों का निर्यात रोकने का फैसला किया है।

सरकार ने नोडल एजेंसी से कहा है कि मांग और आपूर्ति के अंतर को पाटने के लिये दालों का आयात किया जाए। उन्होंने कहा कि थोड़ी मात्रा में ही दालों का निर्यात हो रहा था। दालों का निर्यात तत्काल प्रभाव से रोक दिया गया है। उन्होंने कहा कि चीनी की आपूर्ति बढ़ाने के लिये सरकार चीनी का सीमित मात्रा में आयात करेगी। श्री चिदंबरम ने कहा कि मूल्यों संबंधी मंत्रिमंडलीय समिति ने मूल्यों की समूची स्थिति पर डेढ़ घंटे तक विचार-विमर्श किया। यह महसूस किया जा रहा है कि तीन आवश्यक वस्तुओं- गेहूं, दालों और चीनी की कीमतों में वृद्धि हो रही है। इसलिये यह महसूस किया गया कि इन तीनों वस्तुओं की आपूर्ति बढ़ाई जानी चाहिए। उन्होंने कहा कि इन फैसलों से मुद्रास्फीति की स्थिति में सुधार होगा। एक प्रश्न के उत्तर में उन्होंने कहा कि विनिर्मित उत्पादों से संबंधित मुद्रास्फीति की दर बहुत ज्यादा नीचे थी और तेल से संबंधी मुद्रास्फीति के पीछे के कारणों से सब परिचित है। आवश्यक वस्तुओं की जमाखोरी के ख़िलाफ़ उठाए जा रहे कदमों के बारे में पूछे जाने पर उन्होंने कहा कि राज्य सरकारों से जमाखोरी के ख़िलाफ़ पर्याप्त कदम उठाने का अनुरोध किया जा रहा है। ❑

कमज़ोरी में निहित थे। कई राज्यों में चुनाव न करना, अनेक संस्थाओं के प्रबंधन मंडलों को भंग कर देना और राज्य सरकार द्वारा शेयर धारकों, प्रबंधकों, नियामकों तथा समकालीन सुपरवाइजरों और ऑडिटरों की भूमिका हथिया लेना- ये सब सहकारी संस्थाओं की खास बातें बन गई हैं। इसके अलावा ग्रामीण ऋणों की मंजूरी में दखलंदाजी, ऋण माफी के ऐलान और वसूली अभियानों को रोके रखने जैसे वित्तीय और प्रशासनिक मामलों को भी प्रभावित करती है। इसी तरह से व्यावसायिक गुणों की जगह राजनीतिक कारणों से निदेशक मंडल में नियुक्ति, ऋणों की वाणिज्यिक के अलावा अन्य आधार पर मंजूरी सहित निर्णयों में दखलंदाजी जैसे मामलों में भी राजनीतिक हस्तक्षेप के संकेत मिले।

इस समिति ने प्रबंधकीय पक्ष में यह भी कहा कि राज्य सरकार ने सहकारी बैंकों में वरिष्ठ पदों पर अधिकारियों की नियुक्ति की। इस प्रकार जो लोग नियुक्त किए गए वे भले ही बहुत अच्छे अधिकारी न रहे हों वे अच्छे बैंकर भी नहीं थे। साथ ही, कई राज्यों में फुटकर सहकारी कार्यालयों के प्रबंधक एक समान 'स्टाफ पूल' से लिये गए थे। इसके परिणामस्वरूप वे उस संस्था के प्रति उत्तरदायी नहीं थे जहां सेवा कर रहे थे और संस्था में उनका कामकाज कैसा भी हो या व्यापारिक परिणाम कुछ भी हों, उन्हें उनका वेतन मिलता रहा। इन सहकारी संस्थाओं की दिन-प्रतिदिन के प्रबंधन की जिम्मेदारी मुख्य कार्यकारी अधिकारी की थी, लेकिन उसे निभाया बोर्ड ने और इस तरह सुशासन और प्रबंधन में अस्पष्टता पैदा हुई। इसके अलावा ख़राब प्रबंधन, कमज़ोर आंतरिक नियंत्रण और लेखा परीक्षा की घटिया गुणवत्ता आदि सहित संचालन के अव्यावसायिक तरीकों के कारण भी स्थिति ख़राब हुई।

इस समिति ने कहा कि कुछ कानूनी और नियामक मुद्दों के कारण भी इस हालत में गिरावट आई। एक संगठन के रूप में सहकारिताएं, राज्य सहकारिता अधिनियम के अंतर्गत आती हैं। यह अधिनियम इस मामले में तटस्थ जान पड़ता है कि वही सारे नियम सहकारी बैंकों और सहकारी बाज़ार पर भी लागू होते हैं। सहकारी बैंकों की इस विशेष स्थिति को नहीं माना जाता कि ये सार्वजनिक धन को संभालने वाले हैं और इनका नियमन बैंकिंग रेगुलेटर द्वारा किया जाना चाहिए।

हाल ही में रिज़र्व बैंक ऑफ इंडिया और ग्रामीण ऋण सहकारिताओं के बीच नियंत्रण के दो केंद्रों को लेकर काफी बहस हो चुकी है। समस्या की जड़ यह है कि मौजूदा नियमों के अनुसार सेंट्रल बैंक को अपने नियामक निर्देश ग्रामीण ऋण सहकारिताओं के अंतर्गत लागू करने होते हैं। कुछ राज्य सरकारों द्वारा शहरी सहकारी बैंकों के बारे में रिज़र्व बैंक के साथ सहमति ज्ञापन पर हस्ताक्षर करने पर सहमत हो जाने के बाद यह स्थिति तेज़ी से बदल रही है। वैद्यनाथन समिति ने आग्रह किया है कि बैंकिंग सहकारी समितियों के काम-काज की देखरेख की जिम्मेदारी रिज़र्व बैंक ऑफ इंडिया की हो और राज्य सरकारों के साथ सहमति ज्ञापन को इसका साधन बनाया जाना चाहिए।

पुनर्सशक्तीकरण कार्यक्रम

सहकारी ऋण व्यवस्था के कमज़ोर हो जाने को नज़र में रखते हुए इस कार्यबल का विचार है कि पुनर्सशक्तीकरण के प्रति एक स्पष्ट रवैया अपनाया जाना चाहिए। यह कार्यक्रम अपने अंतिम स्वरूप में इन 4 स्तंभों पर आधारित है:

1. इन सहकारिताओं के मात्रात्मक लाभ गुणात्मक लाभों पर भारी पड़ते हैं अतः इनका पुनर्सशक्तीकरण करना उपयुक्त होगा।
2. पुनर्सशक्तीकरण रणनीति में वित्तीय पुनर्रचना और संस्थागत सुधारों का सामंजस्य होना चाहिए।
3. वित्तीय पुनर्रचना का उद्देश्य नियामक, संवैधानिक और प्रशासनिक सुधार लागू करना होना चाहिए।
4. संवैधानिक और प्रशासनिक परिवर्तनों का उद्देश्य इन सहकारिताओं को सदस्य-केंद्रित, लोकतांत्रिक, स्वशासी और स्वावलंबी संस्थाएं बनाना है।

कार्यान्वयन/भावी कार्य

भारत सरकार ने इस रिपोर्ट को स्वीकार कर लिया है और राज्य सरकारों द्वारा इन्हें मंजूर करने की प्रक्रिया चल रही है। उम्मीद है कि इनका कार्यान्वयन जल्द शुरू हो जाएगा। इस रिपोर्ट में कुछ ऐसी व्यवस्था रखी गई है कि इसे कार्यान्वित करने पर उन्हें स्वतः लाभ होगा।

जैसे ही सहकारी ऋण संस्थाओं को वित्तीय सहायता मिलनी शुरू हो जाएंगी और यह स्पष्ट हो जाएगा कि इसके प्रभाव लाभकर हैं, राज्य सरकारें इन्हें कार्यान्वित करने की प्रेरणा पाएंगी। इस रिपोर्ट को स्वीकार करने में संभावित रुकावट है, राज्य सरकारों द्वारा दी जाने वाली एकमुश्त आर्थिक सहायता। इस बात पर भी ध्यान दिया गया है और केंद्र सरकार का भाग बढ़ा दिया गया है। एक अन्य प्रश्न यह कि क्या राज्य सरकारें सुशासन और प्रबंधन सुनिश्चित करने के उद्देश्य से सहमतिपत्र पर हस्ताक्षर करने की इच्छुक होंगी। यह एक पेचीदा प्रश्न है। लेकिन इस बात पर विश्वास करने के पर्याप्त कारण मौजूद हैं कि सुधारों के पक्ष में सभी राजनीतिक दल हैं।

इसके अतिरिक्त ग्रामीण ऋण बाज़ार में और लोगों के आ जाने, प्रतियोगिता बढ़ने और सूचना टेक्नोलॉजी के बढ़ते प्रयोग के कारण इसमें बहुत परिवर्तन आ गए हैं। म्युचुअल फंड भी अब इस क्षेत्र में आ गए हैं और वे अपनी जगह बनाने में कामयाब हो गए हैं। बैंक भी लगातार सक्रिय हैं और गरीबों तक पहुंचने के लिये समाज के साथ सहयोग कर रहे हैं। स्वसहायता समूह और संयुक्त उत्तरदायित्व समूह आदि के अंतर्गत नये-नये समूह तंत्र वाले तरीके अपनाए जा रहे हैं। ऐसे माहौल में सहकारिताओं को उन तौर-तरीकों पर गंभीरता से विचार करना है जिनके द्वारा वे बाज़ार में अपना भाग बनाए रख सकें और यथा समय उसे बढ़ा भी सकें।

सहकारिताओं के दृष्टिकोण में भी आमूलचूल परिवर्तन लाए जाने की जरूरत है जिससे उनके काम करने के तरीकों में भी बदलाव लाया जा सके। उन्हें सेवा-उत्पाद देने की प्रक्रिया में भी नयापन लाने की जरूरत है, साथ ही सूचना टेक्नोलॉजी अपनाने की भी जरूरत है ताकि वे अधिकाधिक परिणाम दिखा सकें। ❑

(लेखक मुंबई स्थित राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) के अध्यक्ष हैं)

आर्थिक सुधारों के दौर में कृषि

संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन सरकार के रुझान

○ सुरेश चंद्र बाबू

सुधारों और उदारीकरण के प्रति भारतीय दृष्टिकोण ऐसा जबरदस्त आर्थिक विकास हासिल करने का रहा है जो अंततः कृषि क्षेत्र के अनेक पक्षों तक स्वयं जा पहुंचेगा। छोटे किसानों के लिये उपयोगी प्रौद्योगिकियों और उनके लिये नयी कृषि रणनीतियों के विकास में निवेश से भूख और ग़रीबी की समस्या से गंभीरतापूर्वक निपटा जा सकेगा जो आर्थिक विकास के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा हैं

पिछले पंद्रह वर्षों से भारत आर्थिक सुधारों की राह पर अग्रसर है। कुछ तो सुपरिभाषित रणनीतियों के जरिये और कुछ विश्व में तेज़ी से फैल रहे एकीकरण के माहौल में मजबूरन बिठाए गए तालमेल के जरिये। भारत की आर्थिक सुधार प्रक्रिया का वर्णन अक्सर ऊपर से नीचे आने वाले नज़रिये के तौर पर किया जाता है, अर्थात जो बृहद क्षेत्रों में आर्थिक सुधारों से लेकर व्यक्तिगत क्षेत्रों तक पहुंचता है। यह चीन जैसी संक्रमण काल से गुजर रही अर्थव्यवस्थाओं के ठीक विपरीत है, जहां मशहूर हो चुकी घरेलू जिम्मेदारी प्रणालियां कृषि क्षेत्र से शुरू हुईं। उस प्रक्रिया में पिछले कुछ वर्षों में कृषि क्षेत्र के साथ अनेक रूपों में व्यवहार किया गया है और बजटीय आवंटन भी कृषि क्षेत्र के तहत उप-क्षेत्रों में होने वाले सुधारों के आधार पर किया गया है।

सुधारों और उदारीकरण के प्रति भारतीय दृष्टिकोण ऐसा जबरदस्त आर्थिक विकास हासिल करने का रहा है जो अंतत: कृषि क्षेत्र के अनेक पक्षों तक स्वयं जा पहुंचेगा। आर्थिक सुधारों के पंद्रह वर्षों बाद यह प्रश्न पूछना स्वाभाविक है कि इन सुधारों ने भारतीय कृषि की संरचना, रंग-ढंग और निष्पादन को किस प्रकार प्रभावित किया है। कृषि की संरचना में क्या परिवर्तन आए हैं? विभिन्न पारिस्थितिकीय क्षेत्रों में कृषि प्रणाली में आर्थिक सुधारों द्वारा दिए जाने वाले प्रोत्साहनों के प्रति किस तरह सामंजस्य स्थापित किया है और कृषि क्षेत्र के लिये लाभप्रद आर्थिक सुधारों के पैकेज़ का पूर्ण लाभ लेने के लिये किस तरह के परिवर्तनों की आवश्यकता है? प्रस्तुत आलेख में कृषि क्षेत्र के विकास के प्रति संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन सरकार के नये रुझानों के विशेष संदर्भ में, इस प्रकार के कुछ सवाल उठाने का प्रयत्न किया गया है।

जारी आर्थिक विकास में कृषि क्या अब भी प्रासंगिक है?

भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्व इसी बात से लगाया जा सकता है कि राष्ट्रीय सकल घरेलू उत्पाद में इसका योगदान 25 प्रतिशत है और देश की जनसंख्या के 65 प्रतिशत लोगों को रोज़गार का सहारा देता है। देश की ग्रामीण जनसंख्या के अधिकांश लोगों के लिये कृषि जीवन पद्धति का प्रमुख रूप है। जो लोग निर्धनता, खाद्य असुरक्षा और कुपोषण के शिकार हैं, उनमें से ज्यादातर लोगों के लिये कृषि जीवनयापन का प्रमुख साधन है। कृषि ग्रामीण लोगों को गांवों में ही रोके रहने का प्रमुख आधार है। शहरीकरण की गति को नियंत्रित करने का भी काम कृषि क्षेत्र ही करता है।

पिछले पंद्रह वर्षों के आर्थिक विकास को लेकर देश में आमतौर पर काफी उत्साह देखा जाता है। लगभग 6 प्रतिशत की औसत वृद्धि दर्ज़ की गई है और सकल घरेलू उत्पाद में 8 प्रतिशत की दर से वृद्धि की आशा बनी हुई है। इसके बावजूद कृषि क्षेत्र देश में सबसे धीमी गति से बढ़ने वाला क्षेत्र है। इसको देखते हुए देश के नीति निर्माताओं में कृषि क्षेत्र को पुनर्जीवित करने की चर्चा शीर्ष पर है जिससे यह ग्रामीणों की निर्धनता दूर करने और दीर्घकालीन आधार पर आर्थिक विकास में योगदान दे सके। कृषि को ग्रामीण क्षेत्र की निर्धनता को दूर करने का सरल मार्ग भी माना

जाता है। इसके बाद भी 1990 के दशक के प्रारंभ से ही कृषि की विकास दर लगातार गिर रही है। 1990 के दशक के प्रारंभिक वर्षों में 4.7 प्रतिशत से घटकर कृषि विकास दर दशक के अंत तक 2.1 प्रतिशत रह गई और वर्तमान में यह दर 1.5 प्रतिशत से 2 प्रतिशत के बीच बनी हुई है। इससे न केवल ग्रामीण क्षेत्र पर, बल्कि पूरे देश पर बहुत बड़ा बोझ आ पड़ा है। इसका एक सकारात्मक पहलू यह है कि कृषि विकास को पुनर्जीवित कर देश के त्वरित और दीर्घकालिक आर्थिक विकास के लिये एक अच्छा अवसर प्रदान करता है।

कृषि क्षेत्र के पुनर्जीवन की चुनौतियां

कृषि की स्थिति पर एक ऐसे देश के नज़रिये से नज़र डालना महत्वपूर्ण होगा, जिसने लगभग 35 वर्षों पूर्व ही पूर्ण आत्मनिर्भरता प्राप्त कर ली थी। साठ के दशक में अपने बहु प्रचारित प्रयासों के फलस्वरूप अकाल के भय से मुक्ति पाने की भारत की कहानी अपनी जनता को भूख से मुक्ति दिलाने के लिये जूझ रहे अनेक विकासशील देशों के सम्मुख एक आदर्श प्रस्तुत करती है। हरित क्रांति के नाम से चर्चित इस रणनीति में प्रौद्योगिकीय सुधार, आवश्यक सामग्री के अवदान और विस्तार (शिक्षा), विस्तृत सिंचाई कार्यक्रम और खाद्यान्न अर्जन की सहायता नीतियां शामिल हैं। इस तथ्य के बावजूद दुनिया के लोगों के लिये यह विकास एक पहेली ही है कि देश की 30 प्रतिशत आबादी रोज ही भूखी सोती है और पांच वर्ष से कम आयु के 50 प्रतिशत से अधिक बच्चे कुपोषण के शिकार हैं। इस प्रश्न का पूर्ण उत्तर देना अभी शेष ही है कि भारतीय कृषि ने देश की भूख, खाद्य असुरक्षा और कुपोषण की समस्याओं का निराकरण कर दिया है।

प्रौद्योगिकीय समाधानों के साथ-साथ आवश्यक कृषि सामग्रियों को किसानों तक पहुंचाना और कृषि उत्पादों की सक्षम अर्जन नीतियों के फलस्वरूप साठ और सत्तर के दशकों में खाद्यान्न के मामले में राष्ट्रीय स्तर पर आत्मनिर्भरता हासिल करने में सफलता मिली। इसके बाद भी, पिछले दो दशकों से कृषि क्षेत्र की उत्पादकता में कमी आई है। आंशिक रूप से यह नवाचार और अत्याधुनिक प्रौद्योगिकीय विकास को ठीक तरह से नहीं अपनाने और आंशिक रूप से श्रम की उत्पादकता में आए धीमेपन के कारण हुआ है। कृषि क्षेत्र से जुड़े अन्य कतिपय कारकों की उत्पादकता में आए ह्रास के कारण भी ऐसा हुआ है।

हरित क्रांति प्रौद्योगिकी की दूसरी पीढ़ी की चुनौतियों पर गंभीरता से ध्यान देने की आवश्यकता है। इस बात के प्रमाण हैं कि अधिक उत्पादन देने वाले उन्नत बीजों और रासायनिक उर्वरकों का लाभ वही चुनिंदा लोग उठा पाए हैं जिनके पास सिंचित खेती की सुविधा है। इसका एक कारण यह है कि उन्नत बीज और कृषि रसायन केवल सिंचित क्षेत्रों में तथा धान और गेहूं उत्पादक क्षेत्रों में ही अधिक सफल होते हैं। सीमांत क्षेत्रों और शुष्क कृषि प्रणालियों में प्रभावी प्रौद्योगिकीय उपलब्धियों के उपयोग में हम काफी पीछे रह

ADVANCE
PT
(Eng./हिन्दी)
CIVILS INDIA
IAS STUDY CENTRE
202 A/12, ANSAL BUILDING, MUKHERJEE NAGAR, DELHI-9
PH.: 27652921, 9818244224, 9810553368.
GEOGRAPHY/ भूगोल
Prof. Majid Husain
Starts/प्रारंभ 31st Aug.
with 4 days Orientation
4-दिवसीय परिचर्चा के साथ
Registration Open
(Just Walk-in! Register)
YH-8/6/10

गए हैं। हालांकि इस बात के संकेत हैं कि जिन क्षेत्रों में ज्वार और बाजरा जैसी शुष्क भूमि वाली फसलें पैदा होती हैं, वहां शुष्क कृषि प्रणाली में सुधार हो रहा है। इन प्रणालियों की उत्पादकता में पर्याप्त ह्रास हुआ है, क्योंकि इस क्षेत्र में इतना निवेश नहीं हुआ है जितना इस प्रणाली को सिंचित प्रणाली के समान उत्पादक बनाने के लिये आवश्यक है।

कुछ प्रमाण ऐसे भी हैं जो सिंचित कृषि प्रणालियों में भी हरित क्रांति प्रौद्योगिकी के पूर्ण लाभों का खंडन करते हैं। कीटनाशकों जैसे कृषि रसायनों के इस्तेमाल से जैव विविधता का ह्रास हुआ है। इसके अतिरिक्त अनेक प्रकार के कृषि जल चक्र क्षेत्रों में चावल और गेहूं की एक फसली खेती ने लोगों को अपने भोजन से अनेक प्रकार के खाद्य पदार्थों को हटाने के लिये विवश कर दिया है। इसका नतीजा यह हुआ है कि लोगों को अपना मुख्य भोजन चावल और गेहूं में से चुनने का बड़ा कठिन विकल्प रह गया है। इसके अलावा, विषैले कीट नाशकों के ज्यादा उपयोग के कारण पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य पर भी विपरीत प्रभाव पड़ रहा है।

चिंता की एक बड़ी वजह यह है कि हरित क्रांति लाने वाली नयी प्रौद्योगिकियों का लाभ ग्रामीण समुदायों में उचित रूप से वितरित नहीं हुआ है। भूमिहीन श्रमिकों की मजदूरी में वृद्धि से उनको लाभ तो हुआ परंतु अनाज उत्पादन बढ़ाने के लिये अनाज के मूल्यों में की गई वृद्धि ने उनकी (भूमिहीन श्रमिकों की) क्रय शक्ति घटा दी। इसके अलावा, साठ और सत्तर के दशक में हरित क्रांति की प्रौद्योगिकियों के कारण उत्पादकता में हुई वृद्धि से भूमि के मूल्यों में पर्याप्त वृद्धि हो गई, जिससे छोटी जोत वाले किसानों के लिये अपनी खेती में विस्तार हेतु ज़मीन खरीदना दु:साध्य हो गया। इस बात के पर्याप्त प्रमाण हैं कि विभिन्न वर्गों के किसानों, भू-मालिकों और भूमिहीन किसानों के बीच असमानता में इज़ाफा हुआ है।

भारत में कृषि प्रणाली की उत्पादकता में वृद्धि के सामने आई नयी चुनौती फसलों की विविधता में आई धीमी प्रगति है, हालांकि फलों, सब्जियों और पशुधन उत्पादों जैसे गैर अनाज वाले भोज्य पदार्थों की मांग में बढ़ोतरी हुई है। गैर-अनाज वाली फसलों और उच्च मूल्य वाली फसलों के लिये भूमि के समुचित आवंटन से फसलों में विविधता लाकर कृषि प्रणालियों की उत्पादकता बढ़ाई जा सकती है। इस तरह के दृष्टिकोण को सीमांत और दूरदराज के क्षेत्रों में जबरदस्त चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है, क्योंकि वे क्षेत्रीय बाज़ारों से उपयुक्त बुनियादी ढांचे के अभाव से जुड़े हुए नहीं हैं।

अकार्बनिक (अजैव/उर्वरकों के बढ़ते उपयोग के कारण किसान मिट्टी के स्वास्थ्य के प्रति लापरवाह हो गए हैं) जैव उर्वरकों की कमी के कारण पिछले कुछ वर्षों में मिट्टी की गुणवत्ता प्रभावित हुई है और रासायनिक उर्वरकों का प्रभाव भी कम होता जा रहा है। इसके अतिरिक्त, सीमांत ज़मीनों में क्षरण के कारण मृदा ह्रास की समस्या का नतीजा यह हुआ है कि कृषि क्षेत्रों को लोग छोड़ने लगे हैं।

कृषि में जल एक दुर्लभ संसाधन बनता जा रहा है। अच्छे सिंचित क्षेत्रों में भूजल के घट जाने से कृषि को गंभीर खतरा पैदा हो गया है। सिंचित क्षेत्रों में भी जल निकासी की नष्ट हो रही प्रणालियों से जुड़ी समस्याओं से पानी जमा होने और उसमें नमक की मात्रा बढ़ने की शिकायतें बढ़ गई हैं। सिंचित कृषि प्रणालियों की संपोषणीयता को पुनर्जीवित करने में क्षारीय मिट्टी को कृषि योग्य बनाना सबसे बड़ी समस्या है। नीति और संस्थागत सुधार इस प्रवृत्ति को पलटने में प्रभावी सिद्ध हो सकते हैं। इसके साथ ही जुड़ी है राज्यों के बीच पानी के बंटवारे की चुनौती, जिसमें केंद्रीय हस्तक्षेप की निरंतर आवश्यकता बनी रहती है।

कृषि सुधारों में कृषि संबंधी चुनौतियों का सामना करना

आर्थिक सुधारों के युग में प्रकट रूप से प्रबंधनीय लग रही इन चुनौतियों को क्या हुआ है? भारतीय कृषि के समक्ष आई चुनौतियों को कुल मिला कर उत्पादकता में ह्रास, पर्यावरणीय अधोगति, फसलों में विविधता की कमी और घरेलू बाज़ार और व्यापार सुधारों जैसे बड़े-बड़े वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। इनमें से कई चुनौतियों को आर्थिक सुधारों के तहत शुरू की गई कुछ नीतियों ने आंदोलित कर दिया है, तो अन्य नीतिगत विकल्पों ने कृषि प्रणाली की बेहतर बनाने में मदद की है। पिछले 10 वर्षों में भारत ने जो आर्थिक विकास हासिल किया है, उसे बनाए रखने के लिये और कृषि क्षेत्र की गतिशीलता बनाए रखने के लिये बड़े प्रभावी परिवर्तन किए जाने की आवश्यकता है।

प्रौद्योगिक परिवर्तन और आर्थिक सुधार

कृषि में उत्पादकता की वृद्धि के लिये बड़े पैमाने पर प्रौद्योगिक आविष्कारों की आवश्यकता है। जैव-प्रौद्योगिकी के उपयोग से फसलों में इज़ाफा हो सकता है, परंतु यह कोई रामबाण नहीं है। विकसित देशों और बहुराष्ट्रीय कंपनियों से प्रौद्योगिकीय हस्तांतरण अब एक महंगा सौदा हो गया है तथा हरित क्रांति के ज़माने जैसा आसान भी नहीं रहा। आर्थिक सुधार प्रक्रिया को एक ऐसा ढांचा तैयार करने की चुनौती को स्वीकार करना होगा जो जैव प्रौद्योगिकी और नैनो टेक्नोलॉजी जैसे नये तकनीकी विकास को कृषि में उपयोग का मार्ग दिखा सके। जैव सुरक्षा नियमों, उपभोक्ता और खाद्य सुरक्षा की चिंताओं को बौद्धिक संपदा अधिकारों के प्रबंधन के साथ ही समाधान करना होगा। बौद्धिक संपदा अधिकार व्यवस्थाओं का कृषि क्षेत्र में विस्तार करने की आवश्यकता है, जिससे निजी क्षेत्र के लिये इस क्षेत्र में पूंजी निवेश का उचित माहौल बन सके। कारपोरेट क्षेत्र के बीज उत्पादकों, किसानों और पारंपरिक समुदायों को संरक्षण दिए जाने की आवश्यकता है। इससे नवाचार के प्रोत्साहन, आनुवंशिक संसाधनों, किसानों और पारंपरिक समुदायों के अधिकारों की रक्षा में मदद मिलेगी। इनके अलावा बिना मुआवज़ा दिए स्थानीय संसाधनों

से उत्पादों की रचना के विकसित देशों के प्रयासों को भी रोका जा सकेगा।

भारतीय बीज बाज़ार को विदेशी सहयोग के लिये खोले जाने से कुछ चुनिंदा फसलों को भी लाभ हुआ है। कपास इसी तरह की फसल है जिसकी उत्पादकता में वृद्धि के लिये जैव प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल होता है। कपास उत्पादक क्षेत्रों में किसानों ने कपास की उन प्रजातियों को अपनाया है जो बीज कोष के कीड़ों की प्रतिरोधी हैं। उदार नीतियों के फलस्वरूप इस तरह की प्रौद्योगिकियों का आयात हालांकि अब सरल हो गया है, तथापि किसानों की आमदनी पर इन प्रौद्योगिकियों का प्रभाव मिश्रित ही है। बीजों की ऊंची कीमतें और एकीकृत पौध संरक्षण में विस्तार, शिक्षा की दयनीय स्थिति तथा कपास उत्पादक क्षेत्रों में सूखे के कारण ख़राब हुई फसलों ने जैव प्रौद्योगिकी अपनाने वाले किसानों के कुछ वर्गों में काफी हद तक आर्थिक संकट पैदा कर दिया है। फसलों की नाकामयाबी से किसानों को बचाने और नवीन प्रौद्योगिकी अपनाने से होने वाले संकट को दूर करने के लिये प्रभावी नीतियों की आवश्यकता है।

व्यापार और स्वदेशी बाज़ार सुधार

एक बड़ी दुविधा यह है कि कमज़ोर वर्गों और समुदायों पर विदेशी व्यापार के प्रभावों को नियंत्रित करने के साथ ही व्यापार के नये अवसरों का लाभ किस प्रकार उठाया जाए। यदि भारत में सभी लोगों के लिये खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करनी है तो आर्थिक उदारीकरण नीतियों के भाग के रूप में कृषि पर विश्व व्यापार संगठन के समझौते जैसे मुद्दों पर गंभीर रूप से विचार करना होगा। यदि देश के खाद्य सुरक्षा कार्यक्रम अक्षमता में कमी लाने और उसकी प्रभावोत्पादकता को सुधार पाने में सफल होते हैं तो कृषि पर विश्व व्यापार संगठन के समझौते के तहत भारत तब भी खाद्य सुरक्षा के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये स्वदेशी सुधार नीतियां तैयार कर सकेगा। खाद्य सुरक्षा के लक्ष्य की प्राप्ति में खाद्य बाज़ारों में इस तरह के सुधारों और खाद्यान्न बाज़ार में निजी व्यापार को प्रोत्साहन की भूमिका पर अत्यधिक ज़ोर नहीं दिया जाना उचित नहीं होगा। उदारीकृत बाज़ार नीतियों के अंश के रूप में विभिन्न राज्यों में परस्पर अनाज के व्यापार को अनुमति देने से खाद्यान्न व्यापार को लाभ हुआ है। स्थानीय रूप से जब बाज़ार की मांग के मुताबिक उत्पादन नहीं होता तो इस तरह के प्रयासों से खाद्य आपूर्ति आसानी से बढ़ाई जा सकती है।

हाल के दिनों में सुपर बाज़ारों की बढ़ती संख्या ने शहरी क्षेत्रों के पास रहने वाले किसानों के लिये नये तरह के बाज़ार मुहैया कराने में वास्तव में बड़ी मदद की है। सब्जियों, फ़लों और पशुधन उत्पादों की बढ़ती मांगों ने भी चुनिंदा क्षेत्रों में फसलों में विविधता लाने में काफी मदद की है। ये क्षेत्र बाज़ारों के आस-पास खासतौर पर विकसित किए जाते हैं। इस तरह की संविदा कृषि प्रणाली ने किसानों को आवश्यक कृषि सामग्री समय पर उपलब्ध कराने और अपनी उपज को बाज़ार मूल्य से अधिक मूल्य पर बेचने में बड़ी मदद की है।

कुछ राज्यों ने शहरी और अर्द्धशहरी क्षेत्रों में सीधे अपनी उपज बेचने के लिये 'किसान बाज़ार' के नाम से किसानों के लिये विशेष बाज़ार बनाए हैं। इस तरह की व्यवस्था ने बिचौलियों की भूमिका समाप्त कर दी है और इससे किसानों की आय में भी वृद्धि हुई है। तमिलनाडु और आंध्र प्रदेश जैसे प्रगतिशील राज्यों ने किसान समुदायों के लिये इस तरह के बाज़ार विकसित कर किसानों के लिये उत्पादन का लाभ बढ़ा दिया है।

दूसरी और हरित क्रांति के ज़माने से दी जा रही कृषि संबंधी सुविधाओं को कम करने की दिशा में कोई खास मशक्कत नहीं की गई है। इससे अनाज उत्पादक क्षेत्रों में चावल और गेहूं जैसे अन्न की फसलें लेने के लिये किसानों को प्रोत्साहन मिलना ज़ारी है। इसका एक नतीजा यह हुआ है कि साल दर साल गेहूं और चावल जैसी अनाज की एक फसली खेती से हटाने को प्रेरित करने वाला किसानों का कोई हतोत्साहन नहीं करता। इस तरह की अक्षम उत्पादन प्रणालियों के फलस्वरूप सिंचित कृषि प्रणालियों में पर्यावरणीय ह्रास काफी बढ़ गया है।

पर्यावरणीय परिवर्तन और आर्थिक सुधार

यह स्पष्ट है कि भविष्य में कृषि क्षेत्र की संपोषणीयता और आर्थिक विकास में इसका योगदान कृषि के लिये पानी की उपलब्धता पर ज्यादा निर्भर होगा। सिंचित कृषि प्रणालियों ने हरित क्रांति के युग में फसलों का उत्पादन बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की थी। सिंचित कृषि का पूर्ण लाभ उठाने हेतु सिंचाई सुविधाओं के एक बड़े भाग को पुनर्गठित करने की आवश्यकता है। इसके साथ ही देश में कृषि योग्य भूमि का एक बड़ा हिस्सा असिंचित ही है। नयी सिंचाई संरचनाओं में निवेश के जरिये पानी की सुविधा में वृद्धि से देश के पूर्वी और उत्तर-पूर्वी राज्यों में उत्पादकता में सुधार किया जा सकता है।

पर्यावरणीय चुनौतियों से संबंधित एक बड़ी नीतिगत और संस्थागत चुनौती यह है कि सिंचाई अनुदान की बृहत और अधारणीय प्रकृति ने पानी की मूल्य प्रणाली को विकृत कर दिया है, जिससे कृषि में जन संसाधन का भली-भांति उपयोग नहीं हो रहा है। पानी के विभिन्न उपयोगों के बीच प्रतिस्पर्धा से भी कृषि के लिये पानी की उपलब्धता में कमी आएगी। इससे भविष्य में देश की खाद्य आवश्यकताओं को पूरा करने में गंभीर संकट का सामना करना पड़ सकता है। विद्यमान जल संसाधनों के बुद्धिमता पूर्ण उपयोग और पानी के उपयोग की कार्यकुशलता बढ़ाने वाली नयी प्रौद्योगिकियों के विकास हेतु निवेश करके आर्थिक सुधार प्रक्रिया आगे बढ़ाई जा सकती है।

आय और रोज़गार में वृद्धि हेतु फसल विविधीकरण

पिछले 30 वर्षों से खाद्य क्षेत्र में आत्मनिर्भरता पर दिए जा रहे ज़ोर और गेहूं तथा चावल का उत्पादन बढ़ाने के लिये संस्थागत और नीतिगत समर्थन के कारण भूमि संसाधनों का ठीक से उपयोग नहीं हो सका

है। इस वजह से अन्न की फसलों से परे उत्पादन आधार के विविधीकरण की संभावनाओं का ठीक से उपयोग नहीं हो सका है। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन द्वारा कराए गए हालिया सर्वेक्षणों में पता चला है कि फ़ल, सब्जियों, दुग्ध और पशुधन उत्पादों की खपत अब निर्धनों के घरों में भी बढ़ रही है। इसके बावजूद इस तरह की मांग का लाभ किसान समुदाय के लिये उठाने हेतु ढंग से कोई प्रयास नहीं किए गए हैं।

छोटी जोत वाले किसानों को उच्च मूल्य वाली फसलों की बढ़ती मांग से जोड़ना, उनकी ग़रीबी दूर करने का सबसे सरल और छोटा रास्ता है। परंतु उच्च मूल्य वाले बाज़ारों की शृंखला में छोटे किसानों की भागीदारी को बढ़ाने के लिये बुनियादी ग्रामीण ढांचा होना ज़रूरी है। इसके लिये नीतिगत और संस्थागत सुधार करने होंगे। उनको बड़े निजी क्षेत्र से बचाने के लिये कानूनों और नियमों की आवश्यकता है, क्योंकि यदि संविदा कृषि की व्यवस्था पर कड़ाई से नज़र नहीं रखी गई तो वे किसानों का शोषण कर सकते हैं। उच्च मूल्य वाली फसलों की आपूर्ति शृंखला के विकास से छोटे किसानों को अंतरराष्ट्रीय बाज़ारों से जोड़ा जा सकता है। इस तरह का लाभ लेने के लिये ऐसे नीतिगत उपाय महत्वपूर्ण हो सकते हैं जो शीत भंडार गृहों और ग्रामीण परिवहन ढांचे के विकास को सुनिश्चित कर सकें।

कृषि क्षेत्र के विकास के प्रति संप्रग सरकार के रुझान

संप्रग सरकार ने विभिन्न प्रस्तावों के माध्यम से कृषि क्षेत्र को पुनर्जीवित करने का प्रयास किया है। राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन सरकार द्वारा गठित कृषक आयोग को कृषि क्षेत्र के विकास के लिये नये विचारों का सर्जन करने को कह कर संप्रग सरकार ने इसका प्रभावी उपयोग किया है। इसके प्रमुख रुझानों में है क्षेत्र के विकास दर में वृद्धि। संप्रग सरकार के हाल के बजट ने विभिन्न तरीकों से इसे प्राप्त करने का प्रयास किया है।

उदाहरणार्थ, सिंचाई क्षेत्र में सिंचाई सुविधाओं के विकास और मौजूदा सिंचाई प्रणालियों के बेहतर प्रबंधन के लिये आवंटन राशि में 58 प्रतिशत की वृद्धि की गई है। त्वरित सिंचाई लाभ कार्यक्रम के तहत यह राशि 71 अरब 21 करोड़ रुपये बनती है। पानी उपयोगकर्ताओं के संगठनों के जरिये सहभागिता के आधार पर जन संसाधन प्रबंधन को सफल बनाने के लिये कमांड क्षेत्र विकास कार्यक्रम के तहत 44 अरब 81 करोड़ रुपये निर्धारित किए गए हैं। इस पर यदि पर्याप्त मॉनिटरिंग और मूल्यांकन करते हुए समुचित संस्थागत सुधारों के साथ अमल किया गया तो कृषि क्षेत्र की उत्पादकता बढ़ाने के लिये अत्यंत आवश्यक सिंचाई क्षेत्र को नया रूप दिया जा सकेगा।

ग्रामीण क्षेत्र में बुनियादी ढांचे का विकास एक और पहलू है, जिस पर संप्रग सरकार ने काफी ज़ोर दिया है। जैसा पहले बताया जा चुका है, इस तरह का संरचनात्मक विकास छोटे किसानों को उच्च मूल्य वाली फसलों की आपूर्ति शृंखला के विकास में शामिल करने और उन्हें अंतरराष्ट्रीय तथा क्षेत्रीय बाज़ारों से जोड़ने के लिये आवश्यक है। उदाहरण के लिये हाल के बजट में ग्रामीण अधोसंरचना विकास कोष को एक खरब रुपये आवंटित किए गए हैं जो पिछले आवंटन से 37 प्रतिशत अधिक है।

फसल विविधीकरण प्रक्रिया को गति देने के लिये हाल के बजट में बागवानी मिशन को 6 अरब 30 करोड़ रुपये दिए गए हैं। सिंचाई क्षेत्र और ग्रामीण संरचना विकास के निवेशों के साथ बागवानी मिशन के परिव्यय को मिला देने से कृषि क्षेत्र में उच्च विकास दर हासिल करने के लिये वांछित परिवर्तन लाना संभव होगा।

इसके साथ ही कृषि क्षेत्र में लघु अवधि के ऋणों की ब्याज दर घटा कर 7 प्रतिशत कर दी गई है। कृषक आयोग ने अपनी हाल की रिपोर्ट में ब्याज दर 4 प्रतिशत करने की सिफ़ारिश की है। यह सही दिशा में उठाया गया कदम है, परंतु भूमि को खेती योग्य बनाने और आंशिक यांत्रिकीकरण कार्यक्रमों के लिये आवश्यक निजी निवेश को बढ़ाने में शायद पर्याप्त न हो।

संप्रग सरकार ने खाद्य प्रसंस्करण क्षेत्र को भी प्राथमिकता वाले क्षेत्र में शामिल कर लिया है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है, यह नीति पशुधन उत्पादों, फ़लों और सब्जियों, कुक्कुट उत्पाद और मत्स्योत्पादन जैसे उच्च मूल्य वाले कृषि उत्पादों की बढ़ती मांग की प्रवृत्ति के साथ अच्छी तरह से मेल खाती है।

उपसंहार

भारतीय आर्थिक सुधार प्रक्रिया में जब कृषि विकास के मुद्दों को समाधान करने की कोशिश होती है, उसे एक-दूसरे से जुड़ी अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। कृषि उत्पादन में वृद्धि के ऐसे तरीकों का पता लगाना जो ग्रामीण क्षेत्रों में रोज़गार सृजन के जरिये गरीबों के लिये भोजन मुहैया कराने में भी मददगार हों, एक कठिन चुनौती बनी हुई हैं। कृषि क्षेत्र में देशज सुधारों, छोटे किसानों के उत्पादनों में विविधीकरण, खाद्य व्यापार के उदारीकरण और उच्च मूल्य वाली कृषि आपूर्ति शृंखलाओं से छोटे किसानों को जोड़ने पर ज़ोर देते रहने से ग्रामीण आय में निश्चित वृद्धि होगी।

विगत अनुभवों के अनुसार कहा जा सकता है कि ग्रामीण रूपातंरण के लिये निवेश के भारी संसाधनों की आवश्यकता होगी। परंतु अंततः आर्थिक विकास, समानता और प्राकृतिक संसाधनों के दीर्घकालिक प्रबंधन के मामले में यह काफी लाभदायक सिद्ध हो सकता है। छोटे किसानों के लिये उपयोगी प्रौद्योगिकियों और उनके लिये नयी कृषि रणनीतियों के विकास में निवेश से भूख और ग़रीबी की समस्या से गंभीरतापूर्वक निपटा जा सकेगा जो आर्थिक विकास के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा हैं। इस प्रक्रिया में, प्रभावी नीतिगत सुधारों के जरिये कृषि क्षेत्र को निरंतर समर्थन जारी रखने की भूमिका को इससे ज्यादा महत्व मुश्किल से दिया जा सकता है। ❑

(लेखक इंटरनेशनल फूड पॉलिसी रिसर्च इंस्टीट्यूट, वाशिंगटन डीसी में वरिष्ठ शोध अध्येता हैं)

लोक प्रशासन

(हिन्दी माध्यम)

By **Atul Lohiya**

(A person who believes in scientific approach and hard work)

UGC-NET

QUALIFIED IN TWO SUBJECTS

(HISTORY & PUB. ADMINISTRATION)

अतुल लोहिया ही क्यों? क्योंकि...

- ★ केवल हम कराते हैं लोक प्रशासन का सम्पूर्ण एवं समग्र अध्ययन;
- ★ ***UPSC** के साथ **UP, MP, Raj., Bihar, Uttaranchal, Jharkhand Chhattisgarh, Haryana, Himachal PCS** की भी तैयारी;*
- ★ बेहतर समझ, बेहतर नोट्स एवं बेहतर प्रश्न अभ्यास तथा लेखन-शैली के विकास के समन्वित दृष्टिकोण पर आधारित मार्गदर्शन। अध्यापन की शैली-विशिष्ट व वैज्ञानिक।
- ★ लोक प्रशासन से संबंधित समसामयिक, किन्तु आवश्यक एवं उपयुक्त जानकारियों का समावेश।
- ★ अनावश्यक तथ्यों के संकलन द्वारा लोक प्रशासन को बोझिल बनाने के स्थान पर एक सरल तथा सुरूचिपूर्ण विषय के रूप में समझाने पर विशेष बल।
- ★ नोट्स - वैज्ञानिक तरीके से तैयार पूर्णतः संशोधित, परिमार्जित एवं परिवर्धित, (Pre. और Mains के लिए अलग-अलग) संदर्भ : 80 से 85 स्रोत;
- ★ **केवल हमारे नोट्स से प्रतिवर्ष UPSC (Pre.) में 112 से 115 प्रश्न तथा मुख्य परीक्षा में 80 प्रतिशत से अधिक प्रश्न आए;**
- ★ Revision Notes - चार्ट के रूप में उपलब्ध कराने वाले एकमात्र शिक्षक;
- ★ हम देते हैं प्रत्येक क्लास का 40 प्रतिशत समय प्रश्न अभ्यास में और शेष समय विषय की बेहतर समझ एवं छात्रों की परिपक्व सोच को विकसित करने में।
- ★ इसके अतिरिक्त आप प्राप्त कर सकते हैं – प्रतियोगी वातावरण, कुशल परिचर्चा समूह, और भी...
- ★ **लोक प्रशासन हिन्दी माध्यम में परिणामों में भी सबसे आगे...**

N.A.

Prakash Chandra
SDM Uttaranchal-2002

Arvind Kumar
IRS-2003

A.P.S. Yadav
IRS-2004

Virendra Kumar
Essay+Interview (A.C.)

UPSC-2005 लोक प्रशासन में
हमारे संस्थान के अधिकतम
अंक प्राप्तकर्ता – 334
प्रथम प्रश्न पत्र – 178
द्वितीय प्रश्न पत्र – 156

N.A.

Ritesh Chouhan
Roll No. 118185

लोक प्रशासन ही क्यों? क्योंकि...

आप एक लोक प्रशासक बनने जा रहे हैं ;

- ★ परीक्षा की चुनौतियों एवं बदलती परिस्थितियों के अनुरूप अंकदायी विषय
- ★ भविष्य में सामान्य अध्ययन के अनिवार्य भाग के रूप में लोक प्रशासन को शामिल किए जाने की अधिकतम संभावना;
- ★ वर्तमान समय में भी अंकों के खेल में सबसे आगेः आपका अध्ययन 600 अंकों के लिए, लेकिन आप हल कर सकेंगे एक हजार से अधिक अंकों के प्रश्नः

  वैकल्पिक विषय - 600 + निबंध - 200 + G.S. (Polity) - 90 + G.S. (Social Problem) + G.S. Current Affairs + साक्षात्कार
- ★ प्रत्येक परीक्षार्थी द्वारा जिज्ञासावश भी अधिकांश सिलेबस का अध्ययन, जैसे - भर्ती, प्रशिक्षण, अलग कमेटी, वेतन एवं सेवा शर्तें आदि।

MAINS (SPECIAL) BATCH AFTER UPSC (PRE.) RESULT

New Batch (Delhi)
16th August, 2006

लोक प्रशासन

Mains के साथ-साथ
Pre. के लिये भी बेहतर विकल्प

'अतुल लोहिया'

शिक्षक, मार्गदर्शक और मित्र भी

पत्राचार पाठ्यक्रम भी उपलब्ध

(पूर्णतः संशोधित, परिमार्जित एवं परिवर्धित कम्प्यूटराइज्ड नोट्स)

MAINS - 2500/-
MAINS + PRE. - 3500/-

डाक खर्च - 200/- अतिरिक्त

Send DD/MO in favour of Atul Lohiya

New Batch (Allahabad)
12th August, 2006

"PRABHA"

AN INSTITUTE OF PUBLIC ADMINISTRATION

105, VIRAT BHAWAN (MTNL BLDG.), NEAR BATRA CINEMA, MUKHERJEE NAGAR, DELHI-110009
Phone : 27653498, 27655134, 32544250. Cell.: 9810651005 • e-mail: atullohiya@rediffmail.com
Branch : 305/250, COLONELGANJ, NEAR COLONELGANJ POLICE STATION, ALLAHABAD.

YH-8/6/06

कृषि क्षेत्र का संकट

○ नवीन पंत

वर्ष 2005-06 के दौरान 8.4 प्रतिशत की विकास दर प्राप्त करके देश ने सर्वत्र उत्साह और आशा का वातावरण पैदा कर दिया है। वर्ष की अंतिम तिमाही में तो उसने अब तक की सबसे अधिक 9.3 प्रतिशत की विकास दर प्राप्त की है। इस उपलब्धि का मुख्य श्रेय कृषि क्षेत्र को है जिसने 1.9 प्रतिशत की विकास दर प्राप्त की, जबकि पिछले वर्ष (2004-05) में उसकी विकास दर मात्र 0.7 प्रतिशत थी। कृषि क्षेत्र ने यह विकास दर अत्यंत विषम परिस्थितियों में प्राप्त की है। इसके लिये देश के किसानों की जितनी प्रशंसा की जाए कम है।

भारतीय कृषि इन दिनों जबरदस्त संकट के दौर से गुजर रही है। कृषि क्षेत्र में 3.9 की वृद्धि दर से सरकार को इस खुशफहमी में नहीं रहना चाहिए कि कृषि क्षेत्र में काफी निवेश किए बिना कृषि विकास की वर्तमान दरों को बनाए रखा जा सकता है अथवा उनमें वृद्धि की जा सकती है।

इधर पिछले कुछ वर्षों के दौरान साहूकारों के ऋण जाल में फंसे हजारों किसानों की आत्महत्या के समाचार छपे हैं। कृषि क्षेत्र संकट के दौर से गुजर रहा है, इसका आभास इस बात से लगता है कि देश के अनेक भागों में कृषि कर्म लाभप्रद नहीं रहा है।

किसानों की आत्महत्या की पृष्ठभूमि में सरकार ने कृषि क्षेत्र में निवेश बढ़ाने की आवश्यकता स्वीकार की है। देश के चोटी के कृषि वैज्ञानिकों का मानना है कि देश की बढ़ती जनसंरचना को भोजन की सुरक्षा प्रदान करने के लिये हमें दूसरी हरित क्रांति करनी होगी। लेकिन यह हरित क्रांति 'जीन' क्रांति होगी। इसके लिये ग्रामीण क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर निवेश करना होगा। वित्त मंत्री पी. चिदंबरम इस बात को लेकर चिंतित हैं कि कृषि क्षेत्र के निवेश में गतिहीनता आ गई है। कृषि क्षेत्र में विकास की गति को बढ़ाने के लिये अधिक निवेश की जरूरत है।

कृषि क्षेत्र में निवेश बढ़ाने के लिये सरकार अल्पकालीन और दीर्घकालीन दोनों तरह की योजनाओं पर विचार कर रही है। किसानों की आत्महत्या की घटनाओं से सरकार चिंतित अवश्य है तथापि उसका कहना है कि इससे आतंकित नहीं होना चाहिए। सरकार की जानकारी के अनुसार केवल महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, केरल और कर्नाटक के 30 जिलों में किसानों की ऋणग्रस्तता, सूखे, गलत बीजों के उपयोग और खपत एवं जन्म, मृत्यु, विवाह आदि कार्यों के लिये किसानों को ऋणों की अनुपलब्धता के कारण स्थिति संकटपूर्ण है।

इस संकट को हल करने के लिये कृषि मंत्रालय ने एक अल्पावधि कार्यक्रम बनाया है। इस पर विभिन्न मदों के अंतर्गत 60 हजार करोड़ रुपये से अधिक खर्च किए जाएंगे। इस कार्यक्रम के अंतर्गत इन जिलों में छोटी और बड़ी दोनों सिंचाई परियोजनाओं पर तेज़ी से काम किया जाएगा और सिंचाई क्षेत्र बढ़ाया जाएगा। इसके साथ ही जल संभरण प्रबंध को बेहतर बनाया जाएगा। गैर कृषि क्षेत्र में किसानों की आय बढ़ाने के लिये उन्हें डेयरी, कुक्कुट पालन, बागवानी, सब्जी उत्पादन करने के लिये आर्थिक और तकनीकी सहायता प्रदान की जाएगी। प्राकृतिक आपदा के कारण फसलों को सुरक्षा प्रदान करने के लिये किसानों को बीमा कवच प्रदान किया जाएगा।

यह खुशी की बात है कि सरकार दक्षिण और पश्चिम भारत के चार राज्यों के किसानों को राहत देने के लिये योजना बना रही है, तथापि यह कुछ अन्य राज्यों में अधिक समय तक किसानों की दुर्व्यवस्था की उपेक्षा नहीं कर सकती। कुछ समय पूर्व झाबुआ, मध्य प्रदेश के 81 गांवों के 1,700 किसानों ने राष्ट्रपति को पत्र लिख कर आत्महत्या करने की अनुमति मांगी थी। ये सभी किसान सूखे, बैंक ऋणों और बेरोज़गारी से पीड़ित थे।

कृषि क्षेत्र में अग्रणी समझे जाने वाले पंजाब में भी किसानों की दशा अच्छी नहीं है। पंजाब के 52 प्रतिशत किसान साहूकारों के कर्ज़दार हैं, जो उनसे ऋण पर 18 से 36 प्रतिशत ब्याज वसूलते हैं। संगरूर, मानसा, भटिंडा जिलों के छह गांवों के किसानों ने राष्ट्रपति से आत्महत्या करने की अनुमति मांगी थी।

इस तरह के समाचार भी हैं कि पंजाब के किसान अपने खेत बेच कर कनाडा जाने का प्रयास कर रहे हैं। कनाडा की सरकार खेती करने वाले किसानों की कमी अनुभव कर रही है। पंजाब के 80 किसान कनाडा जा चुके हैं और 600 वहां जाने की प्रतीक्षा सूची में हैं। कनाडा में छोटे आकार का फार्म 1.5 करोड़ रुपये में मिल जाता है। अपनी ज़मीन बेचकर पंजाब के किसान इतनी राशि आसानी से जुटा ले सकते हैं।

महाराष्ट्र के डोर्ली गांव के किसान कृषि कार्य को छोड़कर अपना गांव बेचने का प्रस्ताव

किया है। विदर्भ में सूखे की चपेट में आए ऋण चुकाने में असमर्थ किसानों ने ग्लानि में आकर आत्महत्या की है।

यह निस्संदेह चिंता का विषय है कि स्वतंत्रता के लगभग 60 वर्ष बाद भी किसानों को अपनी जरूरतों के लिये मुनासिब दरों पर ऋण नहीं मिलता। उन्हें मजबूरी में साहूकारों से 36 प्रतिशत ब्याज पर ऋण लेना पड़ता है। कानून के अनुसार साहूकार कर्ज़ के लिये किसानों की ज़मीन को गिरवी नहीं रख सकते। साहूकारों के पंजीकरण, ब्याज की दरों के संबंध में भी कानून में स्पष्ट व्यवस्थाएं हैं लेकिन सरकारी अधिकारियों की उदासीनता के कारण इनका पालन नहीं किया जाता।

किसानों को ऋण प्रदान करने में सहकारी समितियां प्रमुख भूमिका अदा कर सकती हैं लेकिन भ्रष्टाचार, भाई-भतीजावाद और राजनीतिक हस्तक्षेप के चलते इनकी स्थिति ख़राब हैं। विदर्भ में 668 सहकारी समितियां तथा बैंक दिवालिया घोषित किए जा चुके हैं।

कुछ बैंक किसानों को ऋण देते हैं लेकिन ऐसे बैंकों की संख्या और ऋण दी जाने वाली राशि की मात्रा मांग के अनुरूप नहीं है। इन बैंकों में किसानों को ऋण लेने के लिये अनेक चक्कर लगाने पड़ते हैं। बैंकों में निचले स्तर पर भ्रष्टाचार की भी शिकायतें मिली हैं। बैंक ऋण व्यवस्था की सबसे बड़ी कमज़ोरी यह है कि बैंक किसानों को जन्म, मृत्यु, विवाह आदि के लिये ऋण नहीं देते। उन किसानों को भी ऋण नहीं दिया जाता जिन्होंने ऋणों की किश्त चुकाने में चूक की है। इन सब समस्याओं के चलते किसान साहूकार से ऋण लेना पसंद करते हैं।

वित्त मंत्री पी. चिदंबरम ने पिछले बजट में किसानों की सहायता के लिये कुछ व्यवस्थाएं की थीं। वर्ष 2005-06 के दौरान अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों से 9 प्रतिशत ब्याज पर ऋण लेने वाले किसानों को 2 प्रतिशत ब्याज के बराबर सरकारी अनुदान प्रदान किया गया। संक्षेप में उनके लिये ब्याज की दर 7 प्रतिशत कर दी गई। यह व्यवस्था की गई कि किसानों को वर्तमान वित्त वर्ष के दौरान 7 प्रतिशत ब्याज पर तीन लाख रुपये तक का ऋण मिल सके। फार्म ऋण के लिये निर्धारित ऋण की राशि 1,41,500 करोड़ रुपये से बढ़ाकर 2006-07 में 1,75,000 करोड़ रुपये कर दी गई। बैंकों को यह भी आदेश दिए गए कि 50 लाख नये किसानों को ऋण सुविधा प्रदान की जाए।

इन सबके बावजूद इस वर्ष खाद्यान्नों के सुरक्षित भंडार में 20 लाख टन की कमी हुई है। सरकारी खरीद भी लक्ष्य से बहुत कम हुई है। खुले बाज़ार में गेहूं के भाव काफी बढ़ गए हैं। सरकार ने खाद्यान्नों की कमी को पूरा करने के लिये विदेशों से 30 लाख टन गेहूं मंगाने का फैसला किया है। यह गेहूं समर्थन मूल्य से कहीं अधिक मूल्यों पर आयात किया जा रहा है। इस वर्ष किसानों को दिए जाने वाले 50 रुपये प्रति टन बोनस की घोषणा भी देर से हुई। इस कारण अनाज व्यापारियों ने किसानों से पहले ही अधिक मूल्य पर गेहूं खरीद लिया।

खाद्यान्न मूल्यों का विषय अत्यंत जटिल और संवेदनशील है। जहां उपभोक्ता खाद्यान्नों का मूल्य कम से कम चाहते हैं वहीं किसान वर्तमान समर्थन मूल्यों से संतुष्ट नहीं है। तमिलनाडु में द्रविड़ मुनेत्र कड़गम द्वारा 2 रुपये किलो चावल देने के बाद यह आशंका होती है कि देश के अन्य राज्यों में भी रियायती दरों पर खाद्यान्नों की मांग ज़ोर पकड़ेगी।

मुद्रास्फीति में वृद्धि, पेट्रोलियम पदार्थों के मूल्यों में वृद्धि आदि के कारण इधर आवश्यक वस्तुओं के मूल्य में बढ़ोतरी हुई है। सबसे अधिक वृद्धि खाद्य पदार्थों के मूल्य में हुई है। लेकिन इस वृद्धि का लाभ किसानों, उत्पादकों को नहीं मिला है।

हमारे देश में औसत किसान के लिये खेती कभी आकर्षक नहीं रही है। राष्ट्रीय कृषक आयोग के अध्यक्ष एम.एस. स्वामीनाथन चाहते हैं कि कृषि को अधिक आकर्षक बनाया जाए। कृषि को तभी आकर्षक बनाया जा सकता है जब किसान को विश्वास हो कि कृषि उपज से वह अपने परिवार की सम्मानपूर्ण ढंग से गुजर-बसर कर सकता है। उस स्थिति में वह किसान होने पर गर्व करेगा। कृषि के लाभप्रद होने पर ग्रामीण युवकों का नगरों-महानगरों में पलायन रुकेगा। यह तभी संभव है जब गांवों में कृषि उपज पर आधारित उद्योगों का जाल बिछा दिया जाए। इसके लिये कृषि क्षेत्र में और ग्रामों के बुनियादी ढांचे में सुधार के लिये बड़े पैमाने पर निवेश करना होगा।

कृषि क्षेत्र का संकट वास्तविक है। अगर इसके समाधान के प्रयत्न तत्काल नहीं किए गए तो कृषि क्षेत्र की विकास दर में गिरावट आ सकती है। इससे हमारी समग्र विकास दर गड़बड़ा जाएगी। कृषि क्षेत्र की विकास दर को बढ़ाने के लिये सरकार को सिंचाई, बागवानी, खाद्य सामग्री के प्रसंस्करण, ग्रामीण विद्युतीकरण, ग्रामीण सड़क निर्माण, परिवहन, गोदाम और शीत भंडारों के निर्माण पर निजी क्षेत्र के सहयोग से समयबद्ध योजना के अंतर्गत भारी मात्रा में निवेश करना होगा।

भारत विश्व का दूसरा सबेस बड़ा कृषि उत्पादक देश है। अनेक कारणों से देश में कृषि को वह महत्व नहीं दिया जा सका है जिसका वह अधिकारी है। लेकिन अब ऐसा नहीं किया जा सकता। कृषि क्षेत्र में निवेश बढ़ाने से अर्थव्यवस्था के विकास में जबरदस्त मदद मिलेगी। अगर विकास दर की वर्तमान गति को बनाए रखा जा सका तो अगले पांच-दस वर्षों में भारत विश्व की चौथी बड़ी अर्थव्यवस्था हो जाएगा। ❑

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं)

ग्रामीण बुनियादी ढांचा : ग्रामीण विकास के रुझान वाले क्षेत्र

○ पवन कुमार

सरकार द्वारा विभिन्न ग्रामीण क्षेत्रों में ग्रामीण भवन निर्माण केंद्रों और लघु उद्योग सेवा संस्थाओं की स्थापना पर दिए जा रहे ज़ोर से इंजीनियरी परामर्श, ग्रामीण भारत की उपादेयता और महत्व को बढ़ाने में मदद कर सकता है

ग्रामीण विकास को ग्रामीण क्षेत्रों में रह रहे निम्न आय की जनसंख्या के जीवन स्तर को सुधारने के लिये, सामाजिक-आर्थिक स्थिति में संरचनात्मक परिवर्तन तथा उनके विकास की प्रक्रिया को स्वत: संपोषणीय बनाने के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। इसमें विभिन्न वर्गों एवं क्षेत्रों के बीच गहन एकीकरण के साथ आर्थिक खासकर विकास, ग्रामीण गरीबों का आर्थिक विकास शामिल है। वास्तव में, इसके लिये क्षेत्र आधारित विकास के साथ-साथ लाभार्थी उन्मुखी कार्यक्रमों की आवश्यकता होती है। यही कारण है कि ग्रामीण विकास भारत में विकास नियोजन का प्रमुख और महत्वपूर्ण लक्ष्य है।

शहरी क्षेत्रों की तुलना में ग्रामीण क्षेत्रों का विकास, बुनियादी ढांचे की अनुचित और अपर्याप्त व्यवस्था के कारण काफी धीमी गति से हो रहा है। इसी कारण सकल घरेलू उत्पाद का ग्रामीण अंशदान हमेशा ही कम होता है। जीडीपी का शहरी और ग्रामीण अंशदान इस प्रकार है:

वर्ष 1990-91 के दौरान प्रति व्यक्ति जीडीपी के प्रति शहरी क्षेत्र का योगदान ग्रामीण क्षेत्र के अंशदान से 3.62 गुना अधिक था। मानव बस्तियों का नियोजन, विकास और आवश्यक बुनियादी सुविधाओं की व्यवस्था शहरी क्षेत्रों में ज्यादा अच्छी होती है। बेहतर रोज़गार अवसरों और सुविधाओं के कारण ग्रामीण जनसंख्या पड़ोस के बड़े शहर की ओर चल देती है। इसी प्रकार, बढ़ती हुई आबादी को अपने में समेटने में असमर्थ ग्रामीण अर्थव्यवस्था की सीमित क्षमता सभी श्रमिकों को काम नहीं दे पाती और लोग बड़े शहरों में रोज़ी-रोटी की तलाश में चले जाते हैं। इस प्रकार, ग्रामीण क्षेत्र के बुनियादी ढांचे और सुविधाओं के समुचित विकास के जरिये इस प्रवृत्ति को उलट कर शहरी क्षेत्रों से गांवों की ओर लोगों को जाने के लिये प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है। ऐसा गांवों में आमदनी के साधन और तरीके विकसित कर तथा वहां की जीवन शैली में सुधार लाकर अवश्य किया जा सकता है।

ग्रामीण बुनियादी सुविधाएं - रुझान के नये क्षेत्र: ग्रामीण बुनियादी सुविधाएं ग्रामीण विकास की न केवल प्रमुख अवयव हैं परंतु ग़रीबी कम करने संबंधी किसी भी धारणीय कार्यक्रम की सफलता सुनिश्चित करने के महत्वपूर्ण भाग भी हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में बुनियादी सुविधाओं के समुचित विकास से ग्रामीण अर्थव्यवस्था और जीवन स्तर में सुधार आता है। इससे बेहतर उत्पादकता को बढ़ावा मिलता है, कृषि में वृद्धि होती है और पर्याप्त रोज़गार के अवसर सुलभ होते हैं।

भारत निर्माण: संप्रग सरकार ने अगले चार वर्षों में ग्रामीण क्षेत्र में बुनियादी ढांचे के विकास के लिये समयबद्ध कार्य योजना शुरू की है जिसे 'भारत निर्माण' का नाम दिया गया है। भारत निर्माण के तहत निम्नलिखित क्षेत्रों में कार्य होने प्रस्तावित हैं:

- सिंचाई
- ग्रामीण सड़क
- ग्रामीण आवास
- ग्रामीण जलापूर्ति
- ग्रामीण विद्युतीकरण
- ग्रामीण दूरसंचार सुविधाएं आदि

भारत निर्माण - भावी लक्ष्य: वर्ष 2009 तक मोटे तौर पर निम्न लक्ष्यों को प्राप्त करने की योजना है:

- एक हजार (पहाड़ी, आदिवासी और मरुस्थली क्षेत्रों में 500 से अधिक) से अधिक की जनसंख्या वाली 66,800 बस्तियों को पक्की सड़कों से जोड़ना।
- 1 लाख 46 हजार किमी नयी ग्रामीण सड़कों का निर्माण।
- वर्तमान की 1 लाख 94 हजार किमी ग्रामीण सड़कों का उन्नयन और आधुनिकीकरण।
- भारत निर्माण के तहत निर्धारित 17 खरब

40 अरब रुपये के कुल निवेश में से ग्रामीण सड़कों पर 4 खरब 80 करोड़ रुपये के खर्च का अनुमान।

सरकार ने ग्रामीण बुनियादी ढांचा विकास कोष (आरआईडीएफ) के लिये 80 अरब की राशि देने का निर्णय भी लिया है।

प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना के माध्यम से

ग्रामीण क्षेत्रों में संपर्क सुविधाओं का विस्तार, विशेष कर सड़कों से जोड़ना भारत निर्माण का प्रमुख लक्ष्य है। भारत में 6 लाख से अधिक ग्रामीण बस्तियां हैं जो मैदानी, पहाड़ी, रेगिस्तानी, दलदली, तटीय क्षेत्रों, पर्वतीय क्षेत्रों और एकांत आदिवासी क्षेत्रों जैसे विभिन्न इलाकों में स्थित हैं। जलवायु भी एक स्थान से दूसरे स्थान पर काफी हद तक भिन्न होती है। अनुचित नियोजन के फलस्वरूप कुछ गांव तो ऐसे हैं जहां से आने-जाने के लिये कई सड़कें हैं, जबकि अनेक ऐसे गांव भी हैं जहां जाने के लिये एक भी सड़क नहीं है।

प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना में प्रत्येक गांव को जोड़ने के लिये केवल एक सड़क का प्रावधान है। यह पूरी तरह से केंद्र प्रायोजित योजना है और शत-प्रतिशत वित्तीय सहायता केंद्र देगा। इस योजना के तहत जो सड़कें बनाई जा रही हैं उसको कम से कम पांच वर्षों तक दोषमुक्त रखने की गारंटी ठेकेदारों की रहेगी। यदि कोई शिकायत मिली तो अनुबंध के तहत ठेकेदार ही उसे ठीक करेंगे। सड़क की देखरेख और संधारण के ठेकों के लिये धन राशि की व्यवस्था राज्यों से की जाएगी। पांच वर्षों के बाद संधारण के लिये इन सड़कों को पंचायतों को हस्तांतरित कर दिया जाएगा।

योजना की उपलब्धियों को सारांश में निम्नलिखित तौर पर दर्शाया जा सकता है:

- 53 हजार किमी नयी ग्रामीण सड़कें निर्मित।
- 27 हजार किमी ग्रामीण सड़कों का उन्नयन और आधुनिकीकरण।
- 37 हजार बस्तियों को सदाबहार सड़कों से जोड़कर कृषि उत्पादों की पहुंच के अवसरों में वृद्धि।
- जनवरी 2006 तक 1 खरब 51 अरब 17 करोड़ का निवेश।
- सड़कों के निर्माण कार्य की निगरानी राष्ट्रीय और राज्य स्तर पर स्वतंत्र तकनीकी विशेषज्ञों द्वारा।

ग्रामीण विद्युतीकरण

अनुमान है कि 80 हजार गांवों का विद्युतीकरण अभी भी होना है। दसवीं पंचवर्षीय योजना (2002-07) में इनमें से 62 हजार गांवों में बिजली पहुंचाने का प्रस्ताव है। शेष 18 हजार गांवों में 2011-12 तक विकेंद्रीकृत गैर पारंपरिक ऊर्जा स्रोतों से बिजली पहुंचाने की योजना है। ग्रामीण विद्युतीकरण को प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना में शामिल कर लिया गया है। राज्यों को न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम और ग्रामीण बुनियादी ढांचा विकास कोष के अंतर्गत अन्य योजनाओं से संसाधन जुटाने के लिये प्रोत्साहित किया जा रहा है ताकि शत-प्रतिशत विद्युतीकरण का लक्ष्य प्राप्त किया जा सके।

त्वरित ग्रामीण विद्युतीकरण कार्यक्रम नाम से एक नयी योजना शुरू की गई है। इसमें भाग लेने के लिये विकेंद्रीकृत ऊर्जा उत्पादकों, पंचायतों, ग्रामीण सहकारिताओं, गैर सरकारी संगठनों आदि को प्रोत्साहित किया जाएगा।

ऊर्जा मंत्रालय ग्रामीण घरों के लिये सौर ऊर्जा पर आधारित प्रकाश प्रणाली की लीज़ निजी क्षेत्र को देकर उनकी भागीदारी में ग्रामीण विद्युत आपूर्ति कंपनियों के एक नये विचार को आगे बढ़ा रहा है।

राजीव गांधी ग्रामीण विद्युतीकरण योजना एक केंद्रीय योजना है जिसमें भारत सरकार 90 प्रतिशत की सब्सिडी देती है। इसका उद्देश्य सभी गांवों और बस्तियों में बिजली की सुविधा पहुंचाना, सभी घरों में बिजली के कनेक्शन तथा ग़रीबी रेखा से नीचे के सभी परिवारों को मुफ़्त बिजली कनेक्शन देना है। 22 मई, 2006 को राजीव गांधी ग्रामीण विद्युतीकरण योजना ने विक्रेय अधिकारियों (फ्रेंचाइचीज़) का राष्ट्रीय कार्यक्रम शुरू किया है। ग्रामीण विद्युतीकरण के बुनियादी ढांचे के प्रबंधन में स्थानीय इकाइयों, व्यक्तियों और गैर सरकारी संगठनों को राज्य विद्युत मंडलों के भागीदार के रूप में जोड़ने की दिशा में यह एक महत्वपूर्ण कदम है। स्थानीय स्तर पर विक्रय अधिकारियों के सामने आने से आशा है कि:

- विश्वसनीयता और कार्यकुशलता में सुधार होगा।
- रोज़गार के व्यापक अवसर पैदा होंगे।
- चोरी और ऊर्जा ह्रास में नाटकीय रूप से कमी आएगी।
- वित्तीय उत्तरदायित्व और संभाव्यता में वृद्धि होगी, और
- स्थानीय समुदाय की भागीदारी बढ़ेगी।

दरअसल इस कार्यक्रम से ग्रामीण विद्युतीकरण के क्षेत्र में ग्रामीण भारत के विकास में तेज़ी आएगी।

ग्रामीण बुनियादी ढांचे की विभिन्न परियोजनाओं के विकास और क्रियान्वयन से ग्रामीण समाज के मूल्यों के सृजन में सहायता मिलती है। इसी प्रकार, सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों तथा सरकारी संगठनों आदि की भागीदारी से ग्रामीण क्षेत्रों में इंजीनियरी परामर्श तकनीकी और प्रबंधन विशेषज्ञों की आवश्यकता होती है।

इंदिरा आवास योजना के जरिये भारत निर्माण इंदिरा आवास योजना के निशाने पर ग़रीबी रेखा से नीचे जीवनयापन करने वाले वे ग्रामीण परिवार हैं जो पूरी तरह से बेघर हैं या फिर टूटे-फूटे कच्चे मकानों में रहते हैं। यह ग्रामीण ग़रीब लोगों को एक पहचान और सुरक्षा का अहसास देने का प्रयास है। योजना के तहत मैदानी इलाकों में प्रति मकान 25 हजार रुपये की अधिकतम सहयता दी जाती है जबकि पहाड़ी और दुर्गम क्षेत्रों में बीपीएल परिवारों को मकान बनाने के लिये अधिकतम 27 हजार 5 सौ रुपये की सहायता दी जाती है। कच्चे मकानों को सुधारने के लिये प्रति इकाई साढ़े बारह हजार रुपये की सहायता दी जाती है। साठ प्रतिशत मकान अनुसूचित जातियों और जनजातीय लाभार्थियों के होंगे। ग्रामीण आवास भारत निर्माण के प्रमुख लक्ष्यों में एक है। भारत निर्माण में इंदिरा आवास

योजना के लक्ष्य इस प्रकार हैं:

- अगले चार वर्षों में (2006-2010) 60 लाख मकानों का निर्माण करना।
- ग्रामीण आवास के क्षेत्र में 1 खरब 20 अरब रुपये का निवेश करने का इरादा।

इंदिरा आवास योजना (आईएवाई) की उपलब्धियां

- इंदिरा आवास योजना के लिये आवंटन राशि 27 अरब 50 करोड़ रुपये (2005-06) से बढ़ाकर 29 अरब 20 करोड़ रुपये (2006-07) की गई।
- वित्त वर्ष 2005-06 में लगभग 9 लाख 60 हजार मकान निर्मित।
- योजना की शुरुआत से लेकर जनवरी 2006 तक देशभर में आईएवाई के तहत लगभग 1 करोड़ 39 लाख मकान बनाए गए हैं।
- आईएवाई में अब तक 2 खरब 55 अरब रुपये का निवेश हो चुका है।

आईएवाई के तहत बने मकानों को राजीव गांधी ग्राम विद्युतीकरण योजना में मुफ़्त बिजली कनेक्शन देने की व्यवस्था है।

ग्रामीण परिवेश के साथ नियोजित शहरीकरण शहरों के आसपास स्थित ग्रामीण बस्तियों के समूहों से सबंधित शहर की विकास योजना में एक संभावित इकाई के रूप में देखा जाता है। निकटस्थ शहर से जुड़ने से उनके विकास को आवश्यक संवेग प्राप्त होता है तथा उन्हें शहरी अर्थव्यवस्था से स्वत: ही जोड़ देता है। यह ग्रामीण क्षेत्रों में शहरी बुनियादी ढांचे के महत्व को रेखांकित करता है। इसी पर आधारित राष्ट्रपति डा. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने अपनी 2020 की संकल्पना में ग्रामीण क्षेत्रों में शहरी सुविधाओं का प्रावधान (पुरा) का विचार दिया है, जो ग्राम समूहों को निम्नांकित संपर्क सुविधाएं प्रदान करने की हामी है:

- भौतिक संपर्क (सड़कें, परिवहन सुविधाएं आदि)।
- आर्थिक सुविधाएं (बैंक, वाणिज्यिक संगठन आदि)।
- ज्ञान संपर्क (विद्यालय, महाविद्यालय, व्यावसायिक शिक्षा आदि)।
- सामाजिक सुविधाएं (अस्पताल, मनोरंजन सुविधाएं, उपासना स्थल आदि)।
- इलेक्ट्रॉनिक संपर्क (फोन, इंटरनेट, केबल आदि)

स्थान-पुरा किसी बढ़ते शहर के पड़ोस में स्थित होगा और स्थानीय संसाधनों, कौशल, पर्याप्त जल और बिजली परिवहन नेटवर्क से अच्छे से जुड़ा होगा। रोज़गार सृजन की संभावना, बाज़ार आदि के विकास की उच्च संभावनाओं से युक्त होगा।

भूमि अधिग्रहण: विकास प्राधिकरण के स्तर पर पुरा विकास एजेंसी का गठन किया जाएगा, जिसका काम नगरपालिका के कर्तव्यों का निर्वहन करना होगा। पीडीए भूमि की पूलिंग, आंशिक पूलिंग और आंशिक अधिग्रहण, भूमि अधिग्रहण आदि कर परियोजनाओं के लिये भूमि की व्यवस्था करेगा।

योजना की तैयारी: पीडीए परियोजनाओं के लिये आर्थिक योजना, संरचना योजना और क्रियान्वयन योजना तैयार करेगी।

आर्थिक योजना: स्थानीय संसाधनों और कौशल, प्रमुख निवेशकों आदि की पहचान करना, उद्योग की सहायक इकाइयों/आउटसोर्सिंग आदि का पता लगाना।

संरचना योजना: उपयोगिता मूलभूत संरचना जलापूर्ति, मलजल, जलनिकासी, कम लागत वाली स्वच्छता, बिजली, परिवहन, ठोस कचरा प्रबंधन आदि।

सामाजिक मूलभूत संरचना: स्वास्थ्य, शिक्षा सामुदायिक भवन, पार्क, खेल के मैदान आदि।

व्यावसायिक मूलभूत संरचना: शॉपिंग सेंटर, थियेटर, व्यापार केंद्र आदि।

क्रियान्वयन योजना: विभिन्न प्रस्तावों को लागू करने के बारे में पीडीए क्रियान्वयन योजना तैयार करेगा। पीडीए का मुख्य कार्यकारी अधिकारी 5 वर्ष के अनुबंध पर एक पेशेवर व्यक्ति होगा।

पुरा ग्रामीण क्षेत्रों में व्यावहारिक रूप से संभव होने वाला ढांचा होगा क्योंकि बड़े शहरों की अपेक्षा ग्रामीण क्षेत्रों और छोटे शहरों में बुनियादी ढांचा खड़ा करना कम ख़र्चीला होता है।

पंचायतों द्वारा ग्रामीण विकास योजनाओं का निर्माण: 73वें संविधान संशोधन विधेयक, 1992 में ग्राम स्तर पर पंचायतों के गठन का प्रावधान है। संविधान की ग्यारहवीं अनुसूची (धारा 243 जी) में विकास योजनाओं पर विचार हेतु 29 वस्तुओं/कार्यों की सूची दी गई है। पंचायतों को आर्थिक और सामाजिक विकास योजनाओं पर अमल करने का अधिकार भी दिया गया है।

ग्रामीण विकास योजना के आर्थिक पहलू

ग्यारहवीं अनुसूची के अनुसार विभिन्न विषयवस्तु को शामिल किया गया है:

विषय क्र. 1- कृषि उत्पादकता
विषय क्र. 2- भूमि सुधार
विषय क्र. 3- लघु सिंचाई
विषय क्र. 4- पशुपालन
विषय क्र. 5- मत्स्यपालन
विषय क्र. 6- लघु वनोपज आदि

उपर्युक्त विषय ग्रामीण क्षेत्रों के विकास से अभिन्न रूप से जुड़े हैं। अत: इनको विकास योजना में समाहित किया जाना चाहिए।

ग्रामीण विकास योजना के समाजिक पहलू

इनका उद्देश्य लोगों के कल्याण हेतु बेहतर शिक्षा सुविधाएं, स्वास्थ्य सेवाएं और मनोरंजन सुविधाएं प्रदान करना है। इनसे लोगों के सामाजिक व्यवहार में बदलाव के लिये मदद मिलती है।

विषय क्र. 10- ग्रामीण आवास
विषय क्र. 11- पेयजल
विषय क्र. 14- ग्रामीण विद्युतीकरण
विषय क्र. 17- शिक्षा
विषय क्र. 18- तकनीकी और व्यावसायिक शिक्षा।
विषय क्र. 19- प्रौढ़ और अनौपचारिक शिक्षा।
विषय क्र. 24- परिवार कल्याण।
विषय क्र. 25- महिला एवं बाल विकास आदि।

ये सभी विषय ग्रामीण क्षेत्रों के सामाजिक विकास से जुड़े हैं।

ग्रामीण विकास योजना में स्थान संबंधी पहल

ग्रामीण क्षेत्रों का विकास मुख्यत: विभिन्न आर्थिक और सामाजिक गतिविधियों के स्थानों तथा क्षेत्र के भीतर और बाहर उनके एकीकरण तथा उचित संपर्कों पर निर्भर करता है। इसी प्रकार, प्रत्याशित विकास गतिविधियां, विभिन्न स्तरों पर संगठनात्मक ढांचों का गठन आदि भी विद्यमान बस्तियों, नयी बस्तियों के विकास और क्षेत्र के समूचे विकास के आकार को प्रभावित करता है। विषय क्र. 13 (परिवहन एवं संचार), विषय क्र. 8 (लघु उद्योग), विषय क्र. 9 (ग्रामीण एवं परिवहन, कुटीर उद्योग) आदि विभिन्न काम-धंधों की इकाइयों के स्थापना स्थलों के बारे में निर्णय लेते हैं। अतएव किसी भी ग्रामीण क्षेत्र की विकास योजना में संतुलित और समुचित विकास के लिये इन सब पहलुओं पर गौर करना ज़रूरी है।

पंचायतों और नगरपालिकाओं द्वारा तैयार योजनाओं के सम्मेलन के लिये राज्य सरकारों द्वारा जिला योजना समितियों का गठन अनिवार्य है। विकास योजनाओं को भलीभांति तैयार करने में निश्चित रूप से इंजीनियरी परामर्श से ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के एकीकृत नियोजन और विकास को हासिल करने के लिये जिलों की संभावनाओं, विभिन्न योजनाओं की प्राथमिकताओं, वित्तीय विवरणों, पर्यावरण के प्रति अनुकूलता परियोजनाओं की व्यावहारिक संभावनाओं आदि के बारे में पता लगाने में मदद मिलती है।

ग्रामीण भवन निर्माण केंद्र और औद्योगिक विस्तार सेवाएं

1988 में तत्कालीन केंद्रीय विकास और ग़रीबी उन्मूलन मंत्रालय ने भवन निर्माण केंद्र आंदोलन की शुरुआत की थी। देशभर में 650 भवन निर्माण केंद्रों की स्थापना से यह आंदोलन अब काफी फैल गया है। इस योजना पर हुडको के माध्यम से अमल किया गया है और इसके निम्न उद्देश्य हैं:

- ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में कम लागत वाले और पर्यावरण के अनुकूल (सीईईएफ) निर्माण के बारे में सूचना प्रदान कर प्रयोगशाला से मैदान तक प्रौद्योगिकी हस्तांतरण।
- कामगारों के कौशल को ऊंचा उठाना।
- निर्माण उद्योगों और भवन निर्माण गतिविधियों के लिये ग्रामीण/ शहरी प्रशिक्षित कामगारों, राजगीरों का पूल तैयार करना।

ग्रामीण भवन निर्माण केंद्रों की स्थापना इन्हीं लक्ष्यों और उद्देश्यों को लेकर ग्रामीण क्षेत्रों में की जा सकती है। इन क्षेत्रों में मूल्यों के निर्धारण हेतु इंजीनियरी परामर्श सेवाएं महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकती हैं।

ग्रामीण भवन निर्माण केंद्रों (आरबीसी) के माध्यम से सरकारी और गैर सरकारी संगठनों की सक्रिय भागीदारी से बुनियादी ढांचे की परियोजनाओं को तैयार कर उन पर अमल किया जा सकता है। जिला स्तर पर विभिन्न सरकारी विभागों और एजेंसियों के साथ ग्रामीण परामर्श और समन्वय से विभिन्न विकास परियोजनाओं का एकीकरण किया जा सकता है।

औद्योगीकरण विस्तार सेवाओं का उद्देश्य लघु और कुटीर उद्योगों में संपूर्ण तकनीकी आर्थिक और प्रबंधन परामर्श सेवाएं प्रदान करना है। औद्योगिक विस्तार सेवाएं राज्य स्तरीय लघु उद्योग सेवा संस्थाओं के माध्यम से प्रदान की जाती है। उन्हें लघु और बड़ी बुनियादी ढांचा परियोजनाओं की सहायता और पर्यवेक्षण के लिये तथा सार्वजनिक सेवा-सुविधा केंद्रों के तौर पर काम करने हेतु ग्रामीण क्षेत्रों के विभिन्न भागों में स्थापित किया जा सकता है।

उपसंहार

ग्रामीण क्षेत्रों में बुनियादी ढांचे का विकास इंजीनियरी परामर्श के जरिये उपादेयता सृजित करने वाला महत्वपूर्ण क्षेत्र है। इंजीनियरी परामर्श सेवा परियोजनाओं की परिकल्पना से लेकर उन पर पूर्ण क्रियान्वयन तक तकनीकी, प्रबंधकीय और मौके पर ही परामर्श दे सकती है। भारत निर्माण के तहत विभिन्न ढांचागत परियोजनाएं नये बाज़ारों, नये व्यापार, नयी आय और इन पर सबसे अधिक नये अवसरों की जीवन रेखा बन चुकी हैं। यहां तक कि एक संकरी सड़क भी समृद्धि का प्रतीक है। इसी प्रकार, प्रत्येक ढांचागत परियोजना के अपने ही लाभ हैं, खासकर ग्रामीण संपर्क योजना यह सुनिश्चित करती है कि भारत के गांव की पहुंच बाज़ारों, सेवा अवसरों और समृद्धि की ओर बनी रहें।

ग्रामीण क्षेत्रों में उच्च गुणवत्ता वाली जलापूर्ति और सभी तरह की संपर्क सुविधाओं, भावी विकास की संभावना, स्वच्छता वाले आधुनिक बसाहटों के विकास में पुरा को ढांचागत विकास के लिये आदर्श कहा जा सकता है। पीडीए जड़ी-बूटी, डेयरी, मुर्गीपालन, मांस प्रसंस्करण और पशुपालन, खाद्य प्रसंस्करण आदि जैसे रोज़गार देने वाले उद्योगों की स्थापना को प्रोत्साहित करेगा।

जिला विकास योजना का प्रारूप तैयार करते समय डीपीसी को स्थलीय नियोजन, भौतिक और प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग, बुनियादी ढांचे का विकास, पर्यावरण संरक्षण आदि विषयों पर पंचायतों और नगरपालिकाओं की साझा रुचि वाले मामलों को ध्यान में रखना होगा। इसी प्रकार, बेहतर ग्रामीण विकास के लिये, डीपीसी जिला स्तर पर न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम, एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम, राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार कार्यक्रम, ग्रामीण भूमिहीन रोज़गार सृजन कार्यक्रम, जवाहर रोज़गार योजना, सूखा संभावित क्षेत्र विकास कार्यक्रम आदि कार्यक्रमों में समन्वयन का काम भी कर सकती है। सरकार द्वारा विभिन्न ग्रामीण क्षेत्रों में ग्रामीण भवन निर्माण केंद्रों और लघु उद्योग सेवा संस्थाओं की स्थापना पर दिए जा रहे ज़ोर से इंजीनियरी परामर्श ग्रामीण भारत की उपादेयता और महत्व को बढ़ाने में मदद कर सकता है। ❑

(लेखक भारत सरकार के शहरी विकास मंत्रालय के नगर एवं ग्राम नियोजन संगठन में सहायक नगर एवं ग्राम नियोजक के पद पर कार्यरत हैं)

शुष्क खेती : मुद्दे एवं रणनीतियां

○ वाई.एस.रामकृष्णन
बी. वेंकटेश्वरलू

कुल काश्त भूमि के नौ करोड़ हेक्टेयर को समावेशित करते हुए वर्षा सिंचित क्षेत्र राष्ट्रीय खाद्य संग्रह में 41 प्रतिशत अंशदान करते हैं और मानव जनसंख्या के 40 प्रतिशत एवं पशुधन के 60 प्रतिशत हिस्से को सहारा प्रदान करते हैं। यद्यपि योजना निर्माण के उद्देश्य से शुष्क खेती शब्द का प्रयोग ऐतिहासिक रूप से इस देश में अकालग्रस्त (750 मिलीमीटर से कम वर्षा वाले) असिंचित क्षेत्रों के प्रतीक के तौर पर किया जाता रहा है। हाल के कुछ समय से देश के तमाम असिंचित क्षेत्रों, जो यदा-कदा सिंचित भूभागों के भीतर बिखरे पड़े हैं, के लिये उपयुक्त शब्दावली के रूप में रेनफेड फार्मिंग का प्रयोग किया जाता है। वर्षा सिंचित क्षेत्रों में से 10.5 करोड़ हेक्टेयर भूमि शुष्क क्षेत्र में पड़ती है जहां 500 मिलीमीटर से भी कम वर्षा होती है, 1.5 करोड़ हेक्टेयर भूमि अर्द्ध शुष्क क्षेत्र में पड़ती है, जहां 500-750 मिलीमीटर के बीच बारिश होती है, 4.2 करोड़ हेक्टेयर भूमि नम अर्द्ध शुष्क में पड़ती है, जहां 750-1150 मिलीमीटर वर्षा होती है तथा बची 2.5 करोड़ हेक्टेयर भूमि उच्च वर्षा क्षेत्र (1150 मिलीमीटर से अधिक) में पड़ती है। यद्यपि वर्षा सिंचित क्षेत्रों में फसल उत्पादन जीविका का मुख्य साधन है। पशुधन खास तौर पर शुष्क और अर्द्ध शुष्क क्षेत्रों में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। अक्सर अकाल के दिनों में फसल बर्बाद होने की स्थिति में यह किसानों को मुसीबत से बचाता है।

उत्पादन एवं उत्पादकता रुझान

देश में बढ़ती जनसंख्या के लिये खाद्य सुरक्षा को बरकरार रखना एक सबसे बड़ी चुनौती है। चूंकि सिंचित क्षेत्र में प्रति इकाई क्षेत्र उत्पादकता में ठहराव आता जा रहा है, यह तर्क आम है कि भविष्य में खाद्यान उत्पादन में वृद्धि रेनफेड एरिया के सौजन्य से होगी। दरअसल, वर्तमान में उपलब्ध तकनीक उत्पादकता में 0.8 टन प्रति हेक्टेयर से लेकर 1.5-2 टन प्रति हेक्टेयर तक की वृद्धि कर सकते हैं। उत्पादकता में इस दुगुनी उछाल से रेनफेड एरिया और 40 मिलियन टन खाद्यान का अशंदान कर सकता है। हालांकि, इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिये एक ऐसी बहुआयामी रणनीति की आवश्यकता है जिसमें प्रौद्योगिकी हस्तांतरण, संसाधन व जोखिम प्रबंधन तथा बाज़ार सहायता जैसे तत्वों का समावेश हो।

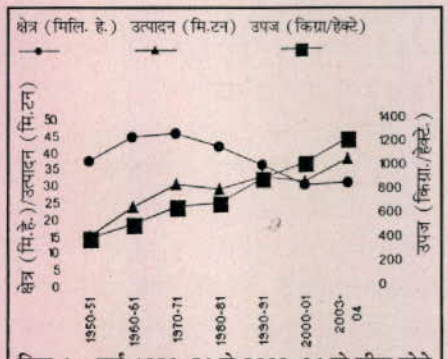

चित्र 1 - वर्ष 1950-51 से 2003-04 के बीच मोटे अनाजों का अखिल भारतीय क्षेत्र, उत्पादन और उपज

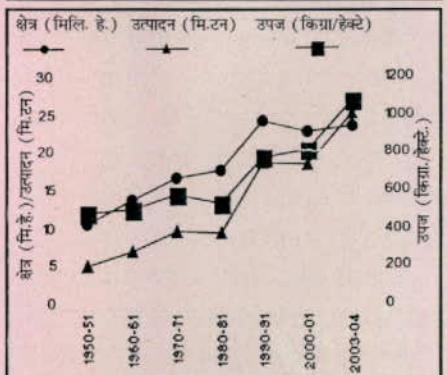

चित्र 2 - वर्ष 1950-51 से 2003-04 के बीच तिलहनों का अखिल भारतीय क्षेत्र, उत्पादन और उपज

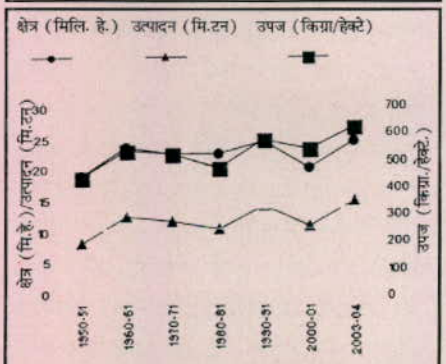

चित्र 3 - वर्ष 1950-51 से 2003-04 के बीच दालों का अखिल भारतीय क्षेत्र, उत्पादन और उपज

आज़ादी के बाद से लेकर अब तक रेनफेड एरिया के प्रमुख फसलों के उत्पादन रुझान में निरंतर फेरबदल होता रहा है (चित्र 1-3)। तिलहन के मामले में प्रति हेक्टेयर उत्पादकता पिछले 50 वर्षों में दुगुनी हो गई जिसका कुछ भाग सिंचित क्षेत्र में (15 प्रतिशत) वृद्धि के कारण बढ़ा। जबकि दलहन के मामले में, वर्ष 1950-51 के दौरान उत्पादकता 441 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर थी, जो वर्ष 2003-04 में बढ़कर 623 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर हो गई। यानी, 52 वर्षों में महज 182 किलोग्राम (42 प्रतिशत) की बढ़ोतरी हुई। यह चिंता का एक मुख्य विषय है। मक्का, ज्वार व बाजरा सरीखे मोटे अनाजों की उत्पादकता में समान अवधि में नियमित गति से वृद्धि हुई और यह 408 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर से बढ़कर 1,228 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर हो गई। यानी, समान अवधि में 300 प्रतिशत का उछाल। खेती योग्य भूमि की मात्रा में निरंतर गिरावट के बावजूद यह एक प्रशंसनीय उपलब्धि मानी जा सकती है। बहुत हद तक मक्का, ज्वार व बाजरा के संकर बीजों की उपलब्धता व इसके व्यापक प्रसार के कारण ही यह उपलब्धि संभव

हुई। कुल मिलाकर, रेनफेड एरिया में खाद्यान का उत्पादन इस समय एक टन प्रति हेक्टेयर है, जो सिंचित क्षेत्र की उत्पादकता (तीन टन प्रति हेक्टेयर) के मुकाबले ही कम है। इन आंकड़ों से यह स्पष्ट होता है कि राष्ट्रीय खाद्य संग्रह में अंशदान के मामले में रेनफेड एरिया पिछड़ गया है। जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है, खाद्यान्न की बढ़ती जरूरतों को पूरा करने के लिये इस उत्पादकता को 2 टन प्रति हेक्टेयर तक बढ़ाने की तत्काल आवश्यकता है, खासकर वैसी परिस्थिति में जब सिंचित क्षेत्र की उत्पादकता में ठहराव आता जा रहा है और पूरे देश में गैर कृषिगत कार्यों के लिये रेनफेड एरिया समेत कृषिगत भूमि के उपयोग का चलन बढ़ता जा रहा है।

हालांकि, उक्त अवधि में किसानों की आय में पशुधन का योगदान उल्लेखनीय रूप से बढ़ा है। अधिकांश शुष्क व पहाड़ी क्षेत्रों में पशुधन का संवर्द्धन परिवारों की आय का एक प्रमुख अवयव है। पशुधन के अलावा, ग्रामीण अर्थव्यवस्था में भेड़ व बकरी सरीखे छोटे जानवरों का वार्षिक योगदान अनुमानित रूप से लगभग 240 मिलियन रुपये हैं। भारत में तकरीबन 50 लाख परिवार छोटे जानवरों के पालन से जुड़े हैं जिससे प्रत्येक वर्ष 184 से लेकर 437 मानव दिवसों के बराबर रोज़गार का सृजन होता है। दूसरे शब्दों में, रेनफेड एरिया में किसानों की आय में पशुधन का उल्लेखनीय योगदान है।

मुख्य बाधाएं

रेनफेड फार्मिंग में उत्पादकता को नियंत्रित करने में मुख्य बाधाएं हैं:

- मौसम की अनिश्चितता की वजह से फसल की बोआई में बड़ा जोखिम।
- मिट्टी की उर्वरता में ह्रास करने वाले जल एवं वायु अपरदन की वजह से भूमि का अपक्षय।
- अंतर्निहित जोखिम की वजह से नवीन प्रौद्योगिकी को आत्मसात करने की धीमी गति।
- खेती से संबंधित आधारभूत संरचना में कम सार्वजनिक निवेश।
- किसानों का कमज़ोर सामाजिक-आर्थिक आधार।

उपर्युक्त बाधाओं की वजह से अनुसंधान केंद्रों और किसानों के खेतों के बीच पैदावार संबंधी अंतर ऊंचा रहता है। रेनफेड फार्मिंग से संबंधित विकसित प्रौद्योगिकी वर्तमान से संसाधन प्रबंधन (मिट्टी तथा वर्षा-जल के प्रभावी उपयोग) के इर्द-गिर्द केंद्रित है और इस किस्म की प्रौद्योगिकी का सर्वोत्तम परिणाम सामुदायिक अंगीकरण से संभव हो सकता है। इसलिये, रेनफेड एरिया के विकास के लिये प्रौद्योगिकी पर अमल वाटरशेड अवधारणा के तहत किया जाता है। वाटरशेड विकास से संबंधित प्रारंभिक सफल मॉडलों को व्यापक पैमाने पर तरज़ीह इसलिये नहीं दी जा सकी कि उनके अंगीकरण संबंधी रणनीति में कई खामियां हैं। यह सही है कि विशेषज्ञों द्वारा की गई कई समीक्षाओं के जरिये उपर्युक्त खामियों को दूर किया जा रहा है और दसवीं योजना से जनता की व्यापक भागीदारी पर आधारित एक नयी रणनीति अस्तित्व में आई है, जिसे ग्यारहवीं योजना में प्रस्तावित नेशनल रेनफेड एरियाज़ अथॉरिटी के माध्यम से व्यापक प्रोत्साहन मिलने की संभावना है। हालांकि, जलवायु संबंधी जोखिम, ऋण उपलब्धता की दयनीय दशा तथा मूल्य संबंधी उतार-चढ़ाव फार्मिंग के विकास में व्यवधान पैदा करते हैं।

लक्ष्य एवं रणनीतियां

सिंचित और रेनफेड एरिया के किसानों की आय में व्याप्त विषमता को कम करने के लिये शुष्क क्षेत्र के किसानों के घरेलू आय में वृद्धि करने की तत्काल आवश्यकता है। इसके लिये या तो उत्पादकता में विकास किया जा सकता है या निचले स्तर पर मूल्यवर्द्धन के जरिये उच्च लाभ सुनिश्चित की जा सकती है या खेती-बारी से अलग रोज़गार के अवसर प्रदान किए जा सकते हैं या फिर फसल व पशुधन के बीमा के जरिये जोखिमों में कमी की जा सकती है। आज जरूरत इस बात की है कि नवीन प्रौद्योगिकी को अंगीकृत करने संबंधी एक बहुआयामी रणनीति बने। एक ऐसी प्रक्रिया विकसित हो जिससे किसान विकसित प्रौद्योगिकी को आत्मसात कर सकें और उसे बरकरार रख सकें और आधारभूत संरचना के निर्माण के लिये पर्याप्त निवेश सुनिश्चित करने की दिशा में उपयुक्त नीतिगत पहल हो। ध्यान देने योग्य कुछ महत्वपूर्ण मुद्दे हैं:

पनढाल (वाटरशेड) का विकास

रेनफेड फार्मिंग के क्षेत्र में वाटरशेड का विकास सबसे अहम रणनीति है। वर्षा जल का संरक्षण, फसल उत्पादन की उन्नत प्रौद्योगिकी तथा भूमिहीनों के लिये आय अर्जित करने के विकल्प आदि समन्वित रूप से वाटरशेड कार्यक्रम के अंग हैं। विभिन्न मंत्रालयों के अथक प्रयासों के बावजूद इस प्रवृति का आत्म दुहराव अभी भी एक चुनौती है। जल-संरक्षण प्रौद्योगिकी के सुपरिणाम वर्षाजल की मात्रा व वितरण तथा संरक्षित जल के उपयोग पर निर्भर करते हैं। उदाहरणस्वरूप, उच्च वर्षा वाले पूर्वी भारत में राष्ट्रीय कृषि प्रौद्योगिकी परियोजना (नेशनल एग्रीकल्चरल टेक्नोलॉजी प्रोजेक्ट) के तहत एक व्यवहार्य स्तर पर जल संरक्षण व पुनर्चक्रण का सफलतापूर्वक प्रदर्शन किया गया। मात्र तीन वर्ष के भीतर परियोजना का लागत मूल्य वापस लिया गया और रेनफेड क्षेत्र में उत्पादित चावल को वर्ष 2002 के भयंकर अकाल के दौरान संरक्षित किया जा सका। यद्यपि वाटरशेड की परिकल्पना एक स्वीकार्य रणनीति है, इसे क्षेत्र विशेष के अनुकूल होना होगा। मसलन, दक्कन के पठारी भागों, तटीय रेनफेड इलाकों के नाजुक हिस्सों, खारे स्वाद वाले भूंखडों तथा गंगा के मैदानी इलाकों में घाटी संबंधी दृष्टिकोण में व्यापक परिवर्तन करने की आवश्यकता है (सामरा, 2005)। संपूर्ण भारत के 311 पायलट वाटरशेड का विश्लेषण यह दर्शाता है कि फसल आधारित कृषि व्यवस्था 700 मिलीमीटर से 1100 मिलीमीटर वर्षा वाले क्षेत्रों में अधिक प्रासंगिक है। पशुधन आधारित गतिविधियां 700 मिलीमीटर से कम वर्षा वाले क्षेत्र में तथा मछली आधारित उत्पादन व्यवस्था 1100 मिलीमीटर से अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में प्रासंगिक है। कुल मिलाकर, वाटरशेड परियोजनाओं ने 2.41 का बीसी अनुपात, आईआरआर का 21 प्रतिशत तथा 181 व्यक्ति प्रति हेक्टेयर प्रतिवर्ष का रोज़गार सृजन किया। अपेक्षाकृत अधिक लाभ निम्न आय वर्ग के

किसानों द्वारा प्राप्त किया गया।

कम वर्षा वाले अर्द्ध तथा शुष्क क्षेत्रों में आर्द्रता संरक्षण का बेहद महत्व है। मेड़ तथा खांचा सरीखे सामान्य दस्तूर पैदावार में 25-40 प्रतिशत तक वृद्धि कर देते हैं। इन क्षेत्रों में उत्पादकता तथा आमदनी में उल्लेखनीय उपलब्धि पैदावार में उछाल प्रदान करने वाले किसी नवीन क्रांतिकारी प्रौद्योगिकी को अपनाने से नहीं हासिल हुई है। बल्कि, कम लागत वाली किंतु उन प्रमाणित प्रौद्योगिकी को अपनाने की वजह से हुई है, जो एकल स्तर पर छोटी प्रगति के वाहक बनते हैं, लेकिन राष्ट्रीय स्तर पर अपेक्षाकृत बड़ी उपलब्धि के कारक बनते हैं। हालांकि, वैयक्तिक स्तर पर किसानों को इन दस्तुरों को अपनाने के लिये प्रोत्साहित करने की दृष्टि से इन संरक्षण संबंधी गतिविधियों को राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गांरटी योजना में शामिल किया जा सकता है ताकि अकेला मजदूरी के रूप में मिलने वाला प्रोत्साहन प्रौद्योगिकी के व्यापक अंगीकरण के लिये उत्प्रेरक का कार्य कर सके।

उन्नत बीज

रेनफेड एरिया के मुख्य फसलों में उच्च पैदावार क्षमता वाली बीजों का चलन कम है। अच्छी गुणवत्ता वाली बीजों की अनुपलब्धता इसमें सबसे बड़ी बाधा है। रेनफेड एरिया के किसानों को बीज के लिये मुख्य रूप से सार्वजनिक क्षेत्र की बीज उत्पादक एजेंसियों (जो कि इस समय खस्ताहाल हैं) पर निर्भर रहना पड़ता है। वजह, निजी क्षेत्र की एजेंसियों की रुचि मुख्य रूप से नकदी फसलों के बीजों के उत्पादन में है जिससे उन्हें अपेक्षाकृत अधिक लाभ होता है। इसलिये किसानों की सीधी भागीदारी के जरिये स्थानीय स्तर पर बीजों के उत्पादन को प्रोत्साहित कर रेनफेड एरिया के फसलों की उत्पादकता में उल्लेखनीय सुधार लाया जा सकता है। यह मुख्य रूप से दलहन और तिलहन के लिये प्रासंगिक है। विशेषकर दलहन का उत्पादन (जो पिछले दो दशक से 12-14 मिलियन टन पर स्थिर है) बढ़ाने के लिये एक समन्वित प्रयास की आवश्यकता है। यद्यपि दलहन के क्षेत्र में कोई प्रजातिगत उपलब्धि नहीं प्राप्त हुई है आईपीएम, आईएनएम तथा जल संरक्षण सरीखी प्रौद्योगिकी पैदावार में 30-40 प्रतिशत वृद्धि करने में सक्षम है। दरअसल, दलहन के लिये इन प्रौद्योगिकी को अपनाने पर व्यापक ज़ोर डालने की आवश्यकता है।

मृदा की गुणवत्ता

संपूर्ण देश में उत्पादन में स्थिरता के लिये मृदा की गुणवत्ता में आई गिरावट एक अहम जिम्मेदार कारक है। बड़े पैमाने पर सूक्ष्म पोषक तत्वों के अभाव की वजह से प्रबंधन संबंधी अन्य व्यवहारों के प्रति फसलों की संकुचित प्रतिक्रिया होती है। मृदा की सेहत सुधारने के लिये मिशनरी तर्ज़ पर एक ज़मीनी सर्वेक्षण तथा सुधारात्मक उपायों की आवश्यकता है जिसमें पोषक तत्वों के संतुलित उपयोग, आईएनएम की गतिविधियों के अंगीकरण, जैव उर्वरकों के प्रयोग पर बल तथा फसलों की बुआई संबंधी व्यवस्था की पुनर्निर्धारण (जिसमें बारी-बारी से फलियां लगने वाले पौधों को प्राथमिकता मिले) सरीखे कदमों का समावेश हो। मृदा की गुणवत्ता सुधारने के लिये बायोमास के उत्पादन को प्रोत्साहित करने हेतु रचनात्मक तरीकों के बारे में सोच-विचार किया जा सकता है। अपनी मिट्टी की उर्वरता को विकसित करने हेतु बायोमास का उत्पादन करने वाले छोटे किसानों को ठीक उसी प्रकार प्रोत्साहित किया जाना चाहिए जैसे रासायनिक खादों का प्रयोग करने वाले किसानों को किया जाता है। ऐसा बायोमास के उत्पादन के लिये खेतों में (मौसम के या बाद के दिनों में) या खेतों से बाहर बारहमासी या चिरस्थायी रहने वाले पौधों की प्रजातियों की प्रमाणित सूची के माध्यम से किया जा सकता है। कृषि विभाग द्वारा प्रोत्साहन कूपन के रूप में दिया जा सकता है, जिसे किसान निर्दिष्ट निजी या सहकारी दुकानों से कृषिगत वस्तुओं की खरीद के समय हस्तांतरित कर सकते हैं। इन प्रतिष्ठानों द्वारा ऐसे कूपनों के शोधन पर व्यय किए गए रकम की अदायगी विभिन्न राज्य सरकारों द्वारा की जा सकती है। जिला या राज्य स्तर पर एक असर कारक प्रभाव छोड़ने के लिये एक संपूर्ण गांव को अंगीकृत करने की आवश्यकता है। एग्री क्लिनिक स्कीम के तहत ग्रामीण युवाओं के माध्यम से जैव उर्वरकों तथा जैव एजेंटों के उत्पादन के लिये ग्राम्य स्तर पर समन्वित जैव केंद्रों को स्थापित करने की आवश्यकता है जिससे जीविका का एक नया विकल्प मिल सकता है।

जैव ऊर्जा फसल

पेट्रोलियम उत्पादों के उपभोग का वर्तमान स्तर तथा ऊर्जा की कमी जल के समान कृषि को भी गंभीरता से प्रभावित करेगा। ऊर्जा, उत्पादन की उपर्युक्त रणनीति से ऊर्जा क्षेत्रों में एक असहाय उपभोक्ता की बजाय एक उपयोगी अंशदाता बन सकती है। जटरोफा, पोंगामिया तथा महुआ सरीखी पौधों से उत्पन्न तिलहन में जैव डीजल पैदा करने की क्षमता अधिक है। ऊर्जा की खेती अकेली ग्रामीण क्षेत्रों में प्राथमिक तथा माध्यमिक स्तर के प्रसंस्करण इकाइयों के माध्यम से लाखों रोज़गार सृजित कर सकती है। हालांकि, खेती की वास्तविक स्थिति के तहत इन फसलों की असली क्षमता से संबंधित हमारी जानकारी में नाजुक अंतर है और इसके मापन के समय समस्याएं खड़ी हो सकती हैं। भारत सरकार ने पहले ही जैव ईंधन फसलों पर एक मिशन की शुरुआत कर दी है। सीआरआईडीए जैव ईंधन से संबंधित नेटवर्क परियोजनाओं में राष्ट्रीय व क्षेत्रीय, दोनों स्तरों पर सक्रिय रूप से भागीदारी कर रहा है और शीघ्र ही जैव ईंधन फसलों की क्षमता से जुड़े कुछ सवालों का जवाब मिल सकता है।

खेती का यांत्रिकीकरण

खेती का यांत्रिकीकरण एक अन्य क्षेत्र है जो रेनफेड कृषि के उत्पादन और खेती की लागत कम करने में उल्लेखनीय प्रभाव डाल सकता है। पशु ऊर्जा में गिरावट के साथ रोपाई और कटाई से जुड़ी मशीनरी के लिये काफी संभावनाएं हैं। शुष्क क्षेत्रों में सीमित मात्रा में उपलब्ध नमी का सदुपयोग करने के लिहाज से यहां समयबद्ध रोपाई व निराई की खासी अहमियत है जो कि बोआई संबंधी अच्छे उपकरणों के जरिये सुनिश्चित हो सकता है। पुन: राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय स्तर पर असरकारी प्रभाव छोड़ने के लिये प्रथाओं के अनुपालन सरीखे रचनात्मक संस्थागत प्रक्रियाओं को व्यापक पैमाने पर अपनाना होगा ताकि फसल

प्रबंधन, कटाई तथा कीट नियंत्रण के लिये कृषि से जुड़े बड़े उपकरणों तक छोटे किसानों की पहुंच सुनिश्चित हो सके।

पशुधन तथा चरागाह उत्पादन

शुष्क तथा अर्द्धशुष्क क्षेत्रों (जो दीर्घकालिक रूप से अकालग्रस्त हैं और जो जहां तमाम प्रयासों के बावजूद खेती एक जुआ है) के बड़े भू-भागों के अतिरिक्त देश में बड़ी मात्रा में ज़मीन बेकार पड़ी है जिसे सिल्वी-चरागाह तथा ऊर्जा की खेती के काम में लाया जा सकता है। अकाल के वर्षों में, यह पशुधन ही है जो किसानों को शुष्क क्षेत्रों में राहत प्रदान करता है और चारा उत्पादन में वृद्धि के लिये किया गया कोई भी प्रयास निश्चित रूप से पशुधन के बेहतर उत्पादन और ग्राम्य स्तर पर अतिरिक्त आमदनी को सुनिश्चित करेगा। सिल्वी-चरागाह एवं हॉर्टी-चरागाह के पक्ष में उपर्युक्त प्रोत्साहन तथा सब्सिडी के माध्यम से राष्ट्रीय स्तर पर प्राथमिकताओं में सुविचारित बदलाव की आवश्यकता है जिससे अनुपयोगी फसलीकरण जारी रहने के बजाय मिट्टी की सेहत में सुधार सुनिश्चित हो।

जैविक खेती

रेनफेड कृषि जैविक खेती के लिये भी अवसर उपलब्ध कराता है। निर्यात के उद्देश्य से उपर्युक्त स्थानों पर मोटे (पोषक) अनाज, बिन्स, औषधीय तेल तथा जड़ी-बूटी उगाई जा सकती है। यहां अपेक्षाकृत कम पैदावार से अधिक मूल्य हासिल करने तथा शुष्क क्षेत्र में किसानों द्वारा प्रयुक्त निम्न लागत की सहज लाभप्रद स्थिति को भुनाने की रणनीति होनी चाहिए, न कि जैविक उत्पादन की मंहगी और जटिल तरीकों को अपनाने की।

फसल कटाई के बाद की तकलीफ और मूल्यवर्द्धन

खान-पान संबंधी आदतों में बदलाव की वजह से मोटे अनाजों के उपयोग में गिरावट आई है और किसानों का मुनाफा प्रभावित हुआ है। मोटे अनाज न केवल गरीबों के पोषण संबंधी सुरक्षा के लिये अहम हैं बल्कि शुष्क क्षेत्रों में पशुधन के लिये भी सहायक हैं। इनको चारे के मुख्य फसल के तौर पर प्रोत्साहित करने के अलावा, मूल्यवर्द्धन के जरिये इन्हें पोषक आहार तथा जैव ईंधन में तब्दील कर किसानों के मुनाफे में वृद्धि की जा सकती है। एनएटीपी के तहत एक हालिया परियोजना ने यह दर्शाया है कि शीरा के तुलनात्मक पैमाने पर मीठे शोरधम के डंठल और भूसी से अल्कोहल का उत्पादन किया जा सकता है। सबसे महत्वपूर्ण बात तो यह है कि शोरधम उगाने वाले रेनफेड एरिया को किसानों के अपेक्षाकृत अधिक आमदनी करा सकता है। पशुधन के भोजन के रूप में मोटे अनाज के प्रयोग को खाद्य उपयोग से जोड़कर प्रोत्साहित किया जा सकता है। इसी प्रकार, रेनफेड एरिया के ढेर सारे बागानी उत्पादों (जिसे गरीब किसानों द्वारा सुखाने के सहज तरीकों के माध्यम से उपजाया जाता है) का खेत के स्तर पर मूल्यवर्द्धन किया जा सकता है और प्राथमिक स्तर का प्रसंस्करण (उद्योग की आपूर्ति के वास्ते) महिलाओं द्वारा किया जा सकता है।

आईसीटी का उपयोग तथा खेती संबंधी सलाहकारी सेवाएं

बेहतर फसल प्रबंधन, अकाल संबंधी लोच प्रदान करने तथा संपोषित व विकसित उत्पादकता के लिये छोटे, मध्यम तथा दीर्घ अवधि वाले मौसम पूर्वानुमानों का क्षेत्र तथा खेती व्यवस्था आधारित कार्य योजना के साथ समन्वयन के माध्यम से जलवायु संबंधी बेहतर प्रबंधन किया जा सकता है।

छोटे जोतदार तथा जीविका के मुद्दे

नयी प्रौद्योगिकी तथा समर्थ बनाने वाली प्रक्रियाओं के बावजूद छोटे जोतदारों के लिये खेती को व्यवहार्य बनाना अभी तक एक चुनौती है। छोटे खेतों पर निर्भर परिवारों की जीविका वैश्वीकरण (जिसमें अर्थव्यवस्था का मुख्य पैमाना मुनाफा है) समर्थक ताकतों की वजह से खतरें में है। इस संदर्भ में, खेती संबंधी विविध व्यवस्थाओं का बाज़ार से जुड़ाव संबंधी अनुसंधान अहम है। आज ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि से परे जीविका के उन अवसरों की पहचान की आवश्यकता है जिससे भू-संसाधन, कृषि तथा पशुधन क्षेत्र को मजबूती मिल सके या जो अर्द्ध शहरी क्षेत्रों में तेजी से बढ़ते सेवा क्षेत्र को सहारा प्रदान कर सके।

नवीन नीतिगत पहल

उपर्युक्त रणनीतियों को असरदार ढंग से हक़ीक़त में बदलने के लिये पंचायत, जिला राज्य तथा राष्ट्रीय स्तर पर कई नवीन नीतिगत पहल की आवश्यकता है। वाटरशेड संबंधी रणनीति में और अधिक सुधार कर उसे संपूर्ण ग्राम्य समुदाय की जीविका के विकास पर केंद्रित करना होगा। नवीन संस्थागत पहल तथा समर्थ बनाने वाली प्रक्रियाओं का मार्ग प्रशस्त करना होगा ताकि लोग नवीन प्रौद्योगिकी से प्राप्त लाभों को बरकरार रख सकें तथा उसका दीर्घकालिक फायदा उठा सकें। वाटरशेड को एक ऐसे केंद्र के रूप में उभरना होगा जिसके इर्द-गिर्द सार्वजनिक और निजी अनुदान प्राप्त विकास की तमाम गतिविधियां घूमें। राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गांरटी स्कीम के तहत चिह्नित किए गए 200 पिछड़े जिलों में इस नये दृष्टिकोण को आजमाया जा सकता है। आशा है कि प्रस्तावित नेशनल रेनफेड एरियाज़ अथारिटी (एनआरएए) इस मुद्दे पर अविलंब गौर करेगा।

उपसंहार

खाद्यान्न उत्पादन में अगला मात्रात्मक उछाल में रेनफेड एरिया की महत्वपूर्ण भूमिका के मद्देनज़र रेनफेड कृषि से संबंधित एक टेक्नोलॉजी मिशन की स्थापना आवश्यक है जो दलहन और तिलहन से जुड़े अनुसंधान और विकासात्मक प्रयासों (जो फिलहाल अलग-अलग मिशनों के तहत चल रहे हैं) को एक साथ ला सकें और चारा उत्पादन व पशुधन खेती से जुड़े मुद्दों को भी समाहित कर सकें। सिर्फ मिशन आधारित दृष्टिकोण ही रेनफेड एरिया के मुख्य फसलों के उत्पादन को 1 टन प्रति हेक्टेयर के वर्तमान स्तर से बढ़ाकर 2 टन प्रति हेक्टेयर के निर्धारित लक्ष्य तक प्रबंधन की उपयुक्त रणनीति के साथ ले जाने में सहायक सिद्ध हो सकता है। ❑

(लेखकद्वय केंद्रीय शुष्कभूमि कृषि अनुसंधान, हैदराबाद से संबद्ध हैं)

दूसरी हरित क्रांति की पहल

○ विजय ढौंडियाल

राष्ट्रीय किसान आयोग, भारत सरकार ने भारतीय कृषि में बहुमुखी विकास हेतु व कृषि के मूलभूत क्षेत्रों में संरचनात्मक सुधार लाने के लिये वर्ष 2006-07 को कृषि नवीकरण वर्ष के रूप में मानने का फैसला लिया है। वस्तुत: यह नवीकरण वर्ष पिछली हरित क्रांति के अनुभवों और निष्कर्षों का लेखा-जोखा लेने का भी प्रयास है। प्रधानमंत्री द्वारा वर्ष 2015 तक कृषि उत्पादन को दुगुना किए जाने का लक्ष्य तभी प्राप्त किया जा सकता है जब कृषि में वार्षिक दर 8 से 10 प्रतिशत तक हासिल की जाए और इसे प्राप्त करने के लिये समन्वित, समयबद्ध एवं प्रभावी नियोजन के साथ नयी पहल की जाए। इस नयी पहल में एक ओर जहां किसानों की सक्रिय भूमिका शामिल है वहीं कृषि से संबंधित समस्त हितधारकों के साथ-साथ निजी सार्वजनिक सहभागिता मॉडल और मल्टी एजेंसी विस्तार की गतिविधियों को भी एकीकृत करना है।

प्रोफेसर एम.एस. स्वामीनाथन की अध्यक्षता में गठित राष्ट्रीय कृषक आयोग ने वर्ष 1994 से अब तक जो प्रतिवेदन प्रस्तुत किए हैं उनमें ज्ञान की तकनीकी कमियों को पूरा करना, लाभ देने वाले तंत्रों को मजबूत करना, संसाधन उपयोग का अधिकाधिक इस्तेमाल और सामाजिक लाभों को हर तबके तक बराबर पहुंचाना, मुख्य संस्तुतियां रही हैं। इसी क्रम में अपने तीसरे प्रतिवेदन में किसान आयोग ने वर्ष 2006-07 को कृषि नवीकरण वर्ष के रूप में मनाने का फैसला लिया है जिसमें अनाजों और औद्योगिकी उत्पादों को 2015 तक दुगुना करने का लक्ष्य है। 13 अप्रैल, 2006 से उपर्युक्त उद्देश्यों और दृष्टियों के साथ इस कार्यक्रम को शुरू किया गया है।

पिछला अनुभव बताता है कि वर्ष 1968 में प्रारंभ की गई हरित क्रांति में यद्यपि गेहूं और चावल में उत्पादकता के हिसाब से आशातीत प्रगति हुई किंतु वर्ष 1995-96 के आते-आते हरित क्रांति के थकान के चिह्न कृषि जगत में स्पष्ट दृष्टिगोचर होने लगे थे। इनमें गिरता उत्पादन और उर्वरकों के अत्यधिक इस्तेमाल से होने वाले प्रतिकूल प्रभाव मुख्य थे।

हरित क्रांति के प्रति प्रभावों और किसानों में बढ़ती आत्महत्या की प्रवृत्ति के कारण यह महसूस किया जाने लगा कि दूसरी हरित क्रांति की देश को शीघ्र आवश्यकता है। कृषि वैज्ञानिकों और नीति-निर्धारकों के मध्य जैसे-जैसे बहस आगे बढ़ती गई, राष्ट्रीय किसान आयोग ने इसे अमली जामा पहनाना शुरू किया। उल्लेखनीय है कि इस नवीकरण कार्यक्रम में रचनात्मक सुधार के तहत छह बिंदु मुख्य हैं:

- मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार।
- सिंचाई जल के विकास एवं कुशल उपयोग पर रणनीति।
- लघु एवं सीमांत किसानों के जीवन निर्वहन हेतु कार्यक्रम।
- ऋण एवं बीमा संबंधी कार्यक्रम।
- शस्योत्तर पोस्ट हारवेस्ट तकनीक और मूल्य संवर्द्धन आधारित तकनीकी का विकास।
- उत्पादन आधारित किसान सुलभ विपणन व्यवस्था का विकास।

कृषि क्षेत्र के व्यवसायीकरण तथा विश्व वैश्वीकरण एवं अंतरराष्ट्रीय व्यापार की चुनौतियों का सफलतापूर्वक सामना करने हेतु आज कृषि क्षेत्र से संबंधित सभी विभागों, शोध एवं शिक्षण संस्थाओं, स्वसहायता समूहों व कृषि उद्यमियों को एकजुट होकर एक मंच पर समग्र कार्यवाही करने की आवश्यकता है।

इस योजना का मिशन है गुणवत्ता, उत्पादकता, सतत विकास और कृषि क्षेत्र में रोज़गार के अवसरों में भरपूर वृद्धि। भारत में खाद्यान उत्पादन के 21 करोड़ (2004-05) के लक्ष्य को 2015 तक 42 करोड़ तक बढ़ाना है। इसके लिये चार करोड़ हेक्टेयर कृषि भूमि से 16 करोड़ टन चावल का उत्पादन करना होगा। इसी प्रकार गेहूं, के 2.5 करोड हेक्टेयर क्षेत्र से 10 करोड़ टन गेहूं 16 करोड़ टन दाल, तिलहन, मक्का व ज्वार तथा 30 करोड़ टन सब्जी व फलों के उत्पादन में बढ़ोतरी करना होगा ताकि इसके महत्वाकांक्षी लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके। इस लक्ष्यों को पूरा करने के लिये कृषि नवीकरण कार्यक्रम में सिंचाईयुक्त खेती की क्षमताओं को बढ़ाना व अधिक उत्पादकता के लिये निरंतर प्रयास करने की जरूरत है। साथ ही खेत में और खेत से अलग सेवा अवसरों में वृद्धि तथा कठिनाई के क्षेत्रों में निदान को सर्वोच्च प्राथमिकता देनी होगी।

कृषि नवीकरण के अंतर्गत विभिन्न कृषि-पारिस्थितकीय इकाइयों को चिह्नित किया गया है जिसमें शुष्क, पर्वतीय, समुद्री

(शेषांश पृष्ठ 65 पर)

ट्यूबवेलों के लिये मुफ्त बिजली; एक चेतावनी

किसानों को मिल रही सब्सिडी से भूजल की हो रही है अत्यधिक निकासी

राज्य सरकारों द्वारा लोकप्रियता हासिल करने के वास्ते किसानों को मुफ्त या सस्ती दरों पर बिजली उपलब्ध कराना खतरनाक होता जा रहा है। भूजल के उपयोग के संबंध में पिछले दशक से संबंधित जारी किए गए आंकड़ों से पता चलता है कि पंजाब, हरियाणा, तमिलनाडु और आंध्र प्रदेश जैसे राज्यों में जहां ट्यूबवेल चलाने के या तो मुफ्त अथवा अत्यधिक सस्ती दरों पर बिजली उपलब्ध हैं, बहुत ज्यादा मात्रा में भूजल का दोहन किया गया।

अर्थशास्त्रियों और पारिस्थितिकीविदों का तर्क है कि मुफ्त बिजली या अत्यधिक सस्ती बिजली उपलब्ध होने पर किसानों को अपने ट्यूबवेल अनावश्यक रूप से चलाने तथा भूजल की अत्यधिक निकासी करने को प्रोत्साहन मिलता है। केंद्रीय भूजल बोर्ड द्वारा तैयार रिपोर्ट से भी, जिसे अभी प्रकाशित किया जाना है, इसकी पुष्टि हुई है। जिन राज्यों में बिजली की कम दरें हैं वहां भूजल की ज्यादा निकासी हो रही है। भूजल सर्वेक्षण दर्शाता है कि वर्ष 1995 और 2004 के मध्य पंजाब (75 प्रतिशत), हरियाणा (49 प्रतिशत), तमिलनाडु (37 प्रतिशत), कर्नाटक (37 प्रतिशत) और आंध्र प्रदेश (18 प्रतिशत) आदि राज्यों में विभिन्न प्रखंडों में बड़ी मात्रा में भूजल की निकासी की गई जिसका अर्थ है कि भराई की जरूरतों से कहीं अधिक भूजल का दोहन हुआ है। सूखा वाले क्षेत्र जैसे कि राजस्थान (59 प्रतिशत) और गुजरात (14 प्रतिशत) आदि में भी इसी तरह की स्थिति रही जबकि दिल्ली के शहरी इलाकों में रहने वाले लोग, जो कुल आबादी का 78 प्रतिशत हैं, जल के लिये भूगर्भ के गहरे भीतर तक खुदाई करने लगे हैं। भंडार के रूप में देखा जा रहा है। क्योंकि यहां पर भूजल का स्तर बहुत नीचे है।

पंजाब में जहां दो तिहाई प्रखंडों में भूजल का अत्यधिक दोहन होता है, किसानों को मुफ्त बिजली उपलब्ध कराई जाती है। पड़ोसी राज्य हरियाणा में भी जहां किसानों को सस्ती दरों पर बिजली दी जाती है, आधे प्रखंडों में अत्यधिक दोहन हो रहा है। इनमें 10 प्रतिशत की स्थिति

तालिका

देश के अत्यधिक जल निकासी वाले प्रखंड

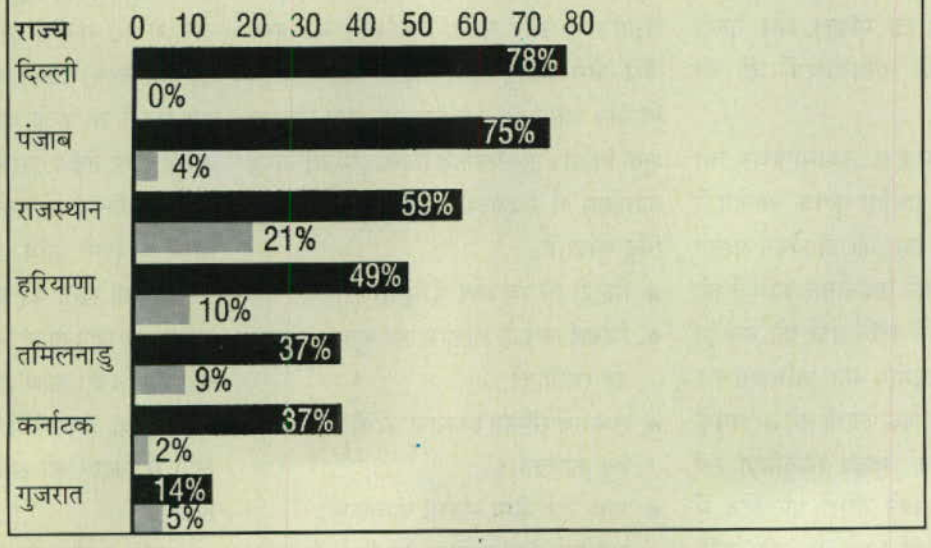

■ अत्यधिक जल निकासी करने वाले प्रखंड : जमा होने वाले पानी से अधिक की निकासी

संकटपूर्ण स्थिति : जमा होने वाले पानी की 90 से 100 प्रतिशत तक निकासी

(स्रोत : केंद्रीय भूजल बोर्ड)

बेहद ख़राब है (इसका अर्थ है कि करीब 90 प्रतिशत आवश्यकता की पूर्ति भूजल से होती है)। 1995 में इन राज्यों में अत्यधिक भूजल निकासी वाले प्रखंडों की संख्या 10 प्रतिशत से कम थी।

पंजाब में विश्व बैंक द्वारा वर्ष 2002 में किए गए सर्वेक्षण में कहा गया है कि चूंकि राज्य के मध्य जिलों में खरीफ की मुख्य फसल चावल है और इसकी रोपाई के लिये पानी की बहुत अधिक आवश्यकता पड़ती है इसलिये यहां भूजल की अत्यधिक निकासी होती है। चूंकि पानी की सतह प्रतिवर्ष 30 सेमी की दर से नीचे चली जा रही है, 138 प्रखंडों में से 84 में अब अत्यधिक दोहन हो रहा है। हालांकि इसके पक्के सबूत नहीं है फिर भी रिपोर्ट में यह दावा किया गया है कि 1997 और अक्तूबर 2002 के मध्य ट्यूबवेलों को मुफ़्त बिजली दिए जाने की नीति ने इस समस्या को और गंभीर बना दिया है।

हाल में मंजूर की गई राष्ट्रीय पर्यावरण नीति में भी भूजल की अत्यधिक निकासी को रोकने के वास्ते बिजली और डीजल सब्सिडी को तर्कसंगत बनाए जाने की आवश्यकता परिलक्षित होती है। इस नीति में कहा गया है कि भूजल के घटते स्तर का मूल कारण बिजली और डीजल की मूल्य नीति से आरंभ होती है। बिजली के मामले में जहां पर व्यक्तिगत मीटर व्यवहार में नहीं है, बिजली कनेक्शन का शुल्क एक समान दर पर होती है जो कि कुल मिलाकर लगभग शून्य के बराबर ही रहती है। डीजल पर दी जा रही सब्सिडी भी सामान्य स्तर से कहीं ज्यादा कुएं से पानी निकालने को प्रोत्साहित करती है। पानी के अधिक इस्तेमाल से पैदा होने वाली फसलों के समर्थन मूल्यों के कारण भी लोग कम पानी से उगाई जा सकने वाली फसलों की अपेक्षा इन फसलों की बुआई ज्यादा करते हैं।

देश के दक्षिणी भागों में भी जहां पर कुछ हद तक अच्छी बारिश होती है तथा बारहमासी नदियां भी हैं, भूजल संरक्षण की स्थिति बड़ी ख़राब है। तमिलनाडु में जहां दो प्रमुख द्रविड़ पार्टियों के बीच 'लोकप्रियता' ही सत्तासीन होने का प्रमुख कारण है, करीब 10 प्रतिशत प्रखंडें में स्थिति अत्यंत ख़राब है तथा 15 प्रतिशत प्रखंडें में अर्द्ध-संकट जैसी स्थिति है (मानसून पूर्व और मानसून बाद के मौसम में भूजल का स्तर घटने के कारण)।

आंध्र प्रदेश भी इसी के पदचिह्नों पर चल रहा है जहां शत-प्रतिशत मंडल (प्रखंड) संकटपूर्ण स्थिति में है और 14 प्रतिशत अर्द्ध-संकट की स्थिति में पहुंच चुके हैं। तमिलनाडु में किसानों को मुफ्त बिजली प्रदान की जाती है जबकि आंध्र प्रदेश ने मुफ्त बिजली का फैसला वापस ले लिया है। अब जबकि किसानों से बिजली का शुल्क लिया जाता है, लेकिन बकाया राशि वसूलने और मुफ्त बिजली की धारणा को बदलने के लिये कोई ठोस प्रयास नहीं किए जा रहे हैं। सूखे वाले क्षेत्र राजस्थान में भी भूजल का अत्यधिक (59 प्रतिशत प्रखंडों में) दोहन हो रहा है।

यहां 21 प्रखंडें की स्थिति संकटग्रस्त है। पड़ोसी राज्य गुजरात में भी भूजल की अत्यधिक निकासी (14 प्रतिशत प्रखंडों में) का रुख है। शहरी क्षेत्रों में दिल्ली में सुरक्षित भूजल की अत्यधिक गहराई से निकासी की जाती है। कुल मिलाकर देश में 15 प्रतिशत प्रखंडों में भूजल की अत्यधिक निकासी हो रही है जबकि 15 प्रतिशत की स्थिति संकटग्रस्त या अर्द्ध-संकट वाली है। ये आंकड़े केंद्रीय भूजल बोर्ड की रिपोर्ट में दिए गए हैं।

मुख्यमंत्रीगण भी सस्ती बिजली के मुद्दे को हल करने से सामान्यत: दूर भागते हैं। 1996 में उन्होंने यह फैसला किया था कि बिजली आपूर्ति की कम से कम आधी कीमत वसूली जाएगी और कृषि क्षेत्र को कम से कम 50 पैसे प्रति यूनिट का भुगतान करना होगा तथा बाद में इसे और बढ़ाया जाएगा। लेकिन योजना आयोग द्वारा बार-बार स्मरण कराए जाने के बावजूद कोई भी राजनीतिज्ञ इस मुद्दे को छूने का इच्छुक प्रतीत नहीं होता। ऐसे में न केवल राज्य की वित्तीय स्थिति चरमराती है बल्कि पारिस्थितिकीय संतुलन भी बिगड़ता है। ❑

(एजेंसियों से)

(पृष्ठ 63 का शेषांश)

और सिंचित क्षेत्रों के विकास को आधार बनाते हुए परिणामी योजनाएं बनाई जाएंगी। भारत सरकार के अतिरिक्त इस महत्वाकांक्षी लक्ष्य को पूरा करने में राज्य सरकारें, पंचायती राज संस्थाएं, कृषि, पशुपालन, ग्रामीण व महिला विश्वविद्यालय, भारतीय तकनीकी संस्थान, निजी व सार्वजनिक क्षेत्र व नागर समाज संगठन तथा मीडिया एजेंसियां सक्रिय रूप से प्रतिभाग करेंगी अर्थात कृषक एवं लाईन विभागों से भिन्न एक बड़े नोडल समुदाय को जोड़ते हुए कृषि नवीकरण के लक्ष्यों को प्राप्त किया जाएगा। प्रत्येक राज्य में इसके लिये नोडल एजेंसियां चिह्नित की गई हैं जो एक स्पष्ट और समयबद्ध कार्ययोजना के माध्यम से मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार और जल संरक्षण की प्रणालियों को स्थानीय आवश्यकताओं और प्राथमिकताओं पर चिह्नित करते हुए पूरा करेंगी। पोस्टहारवेस्ट टेक्नोलॉजी और मूल्य संवर्धन आधारित तकनीकी के विकास से अच्छी आय उपलब्ध कराना इसकी एक महत्वपूर्ण पहल है। लघु एवं सीमांत किसानों को न्यूनतम दरों पर ऋण एवं बीमा आच्छादन से उनकी उपज का लाभप्रद मूल्य दिलाना भी इस कार्यक्रम का महत्वपूर्ण उद्देश्य है। जाहिर तौर पर कृषि नवीकरण का कार्यक्रम भारत सरकार के न केवल कृषि संबंधी सोच में आए व्यापक बदलाव का परिचायक है बल्कि यह दूसरी हरित क्रांति की शुरुआत है। ❑

(लेखक उत्तरांचल सरकार में अपर सचिव, कृषि हैं)

हम नाम नहीं "परिणाम" में विश्वास करते हैं.

IAS इतिहास PCS

१. मुगल साम्राज्य और कुछ नहीं 'तुर्क-राजपूत' भागीदारी था।
२. जागीरदारी तथा जमींदारी क्राइसिस ने मुगल सिस्टम को ध्वस्त कर दिया।
३. अकबर की राजपूत नीति वास्तव में बदलते शासन वर्ग के स्वरूप का प्रतिनिधित्व करता था।
४. अकबर की धार्मिक नीति; मुगल शासक वर्ग के बदलते हुए स्वरूप का प्रतिफलन था।
५. दीने इलाही ! अकबर की मूर्खता का स्मारक था।
६. औरंगजेब की 'दक्षिण नीति' मुगल साम्राज्यवाद की स्वाभाविक अभिव्यक्ति थी।
७. दिल्ली सल्तनत जो 'एक युद्ध राज्य' को अवधारणा के निकट था इक्ता व्यवस्था ने इसकी स्थापना को सम्भव बनाया वहीं इस व्यवस्था के अन्तर्विरोध ने सल्तनत के पतन के मार्ग को प्रशस्त कर दिया ?
८. क्या इक्ता व्यवस्था का अन्तर्द्वंद सल्तनत के पतन के लिए उत्तरदायी था ?
९. बलबन का 'राजत्व' ऊपर से सल्तनत के केन्द्रीकरण का प्रयास था।
१०. एक ही 'अर्थशास्त्र' जहाँ अल्लाउद्दीन खिलझी को सफल बनाता है। वहीं मुहम्मद तुगलक को असफल !
११. फिरोजशाह तुगलक की नीतियों के अल्पकालिक प्रभाव ने जहाँ सल्तनत को स्थायित्व प्रदान किया वहीं दीर्घकालिक प्रभाव ने सल्तनत के पराभव का मार्ग प्रशस्त किया !

द्वारा **शशांक शेखर**

चन्द्रशेखर प्वाइंट

47, चिन्तामणि रोड, जार्जटाउन, इलाहाबाद, मोबाइलः **9450771588**

YH-8/6/05

सूचना प्रौद्योगिकी : एक उदीयमान उद्योग

जम्मू–कश्मीर सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में क्रांति के कगार पर है और भारत के अपने सिलिकॉन वैली में ज़ोरदार तरीके से प्रवेश करने वाला है

सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में भारत की विश्वव्यापी सफलता से अनेक राज्य अपना साइबर सिटी बनाने की ओर प्रेरित हुए हैं। जम्मू-कश्मीर में हालांकि इस बात के पर्याप्त आधार हैं कि इसका अपना एक साइबराबाद अथवा बंगलौर हो, यहां इस क्षेत्र में अब तक कुछ खास नहीं हो पाया है। यहां मानव शक्ति और जलवायुगत स्थितियों जैसे सभी ज़रूरी तत्व मौजूद हैं। इसके अलावा यहां प्राकृतिक सौंदर्य है और इस उद्योग को पल्लवित करने में प्रशासनिक तंत्र मददगार है। सूचना प्रौद्योगिकी के विस्तार की सभी स्थितियां यहां विद्यमान हैं। वस्तुत: यह राज्य अपने को सूचना प्रौद्योगिकी केंद्र के रूप में प्रस्तुत करने की दिशा में आगे बढ़ रहा है।

काफी समय पहले यह महसूस किया गया था कि जम्मू-कश्मीर 'उच्च मूल्यवत्ता तथा अल्प मात्रात्मकता' वाले उत्पादों के लिये मुफ़ीद जगह है। यह राज्य अब और पीछे छूटना नहीं चाहता, इसलिये इस क्षेत्र में निवेश को बढ़ावा देने के लिये राज्य सरकार सभी संभव प्रोत्साहन देने के लिये तैयार है।

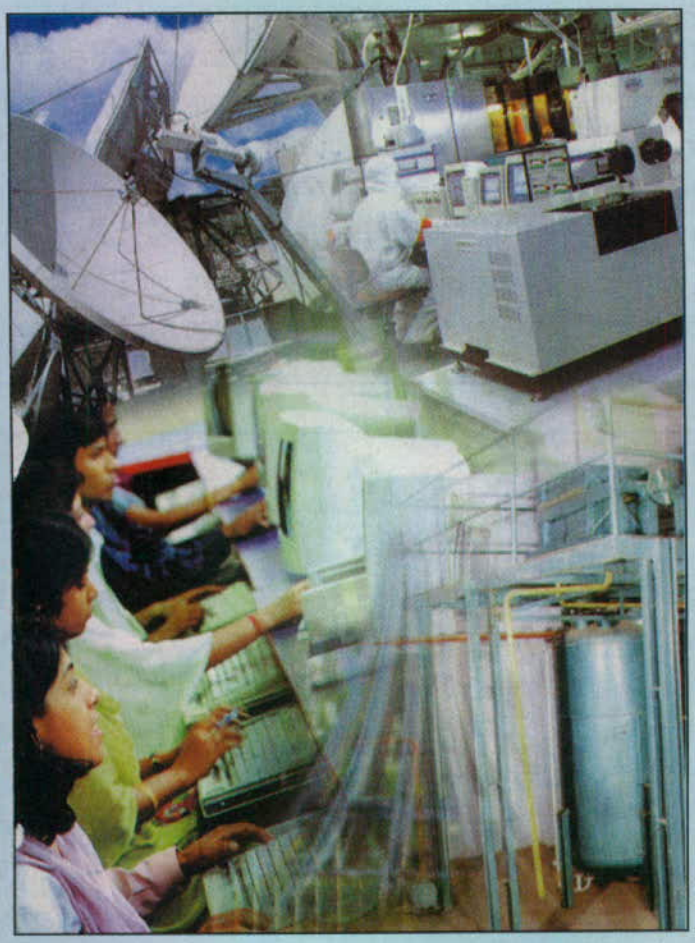

सूचना प्रौद्योगिकी ने हमारी कार्यशैली में क्रांति ला दी है। इसने उद्योगों के संचालन में ऐसे बदलाव किए हैं कि उन्हें पहचानना कठिन हो गया है। बीती सदी के आखिरी बीस-पच्चीस वर्षों में एक 'नये अर्थतंत्र' के युग की शुरुआत हुई है। जम्मू-कश्मीर में सूचना प्रौद्योगिकी क्षेत्र का महत्वपूर्ण हिस्सा बनने की संभावनाएं मौजूद हैं। इस संभावना के अधिकतम दोहन के लिये सरकार ने एक समुचित नीतिगत संरचना तैयार की है। जम्मू-कश्मीर सरकार ने अपनी सूचना प्रौद्योगिकी नीति की घोषणा जनवरी 2004 में की। इंटरनेट के द्वारा नागरिकों को त्वरित रूप से और सरलतापूर्वक सूचनाएं उपलब्ध कराने के लिये तथा वेब संबंधी मामलों के मानकीकरण के लिये सरकार ने एक वेबसाइट नीति भी बनाई है जिससे विभिन्न विभागों के मौजूदा वेबसाइटों में एकरूपता सुनिश्चित की जा सकेगी और उनका त्वरित विकास किया जा सकेगा।

सूचना प्रौद्योगिकी नीति अनेक मामलों में अभिनव है। इसमें सूचना प्रौद्योगिकी संबंधी सभी हार्डवेयर, सॉफ्टवेयर और सेवा उद्योगों तथा मान्यताप्राप्त प्रशिक्षण संस्थानों को 'उद्योग' का दर्ज़ा दिया गया है। इससे उन्हें औद्योगिक दरों पर ऋण और वित्त हासिल करने में सहूलियत होगी। राज्य के सभी वित्तीय संस्थानों एवं बैंकों को सभी सूचना प्रौद्योगिकी संबंधी उद्योगों को प्राथमिकता देने की सलाह दी गई है। इस

संदर्भ में सरकार भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक तथा जम्मू-कश्मीर बैंक जैसी वित्तीय संस्थाओं के साथ मिलकर 25 करोड़ रुपये की एक उद्यम पूंजीकोष बनाने की योजना बना रही है। इस कोष से लघु तथा मध्यम सूचना प्रौद्योगिकी उद्योग लगाने के लिये पूंजीगत सहायता प्रदान की जाएगी। सूचना प्रौद्योगिकी सॉफ्टवेयर तथा सेवा उद्योगों को उपलब्ध सभी किस्म की प्रोत्साहन सुविधाएं सूचना प्रौद्योगिकी आधारित सेवाओं को भी उपलब्ध कराई जाएंगी। नवीन सूचना प्रौद्योगिकी नीति इस हद तक उद्योगोन्मुखी तथा उत्पादन-उन्मुखी है कि इसमें आवासीय क्षेत्र में सॉफ्टवेयर इकाइयां लगाने की अनुमति दी गई है। हां, ऐसे उद्यमों पर कुछ बिजली संबंधी प्रतिबंध लागू होंगे। 10 करोड़ रुपये से अधिक कुल निवेश वाली परियोजनाओं को प्रोत्साहन देने के लिये उन्हें एक विशेष पैकेज़ दिया जाएगा। चूंकि इस क्षेत्र को उद्योग का दर्ज़ा दिया गया है, इसलिये सिंगल विंडो क्लीयरेंस व्यवस्था इस क्षेत्र पर भी लागू होती है।

जम्मू-कश्मीर में सूचना प्रौद्योगिकी अभी एक उदीयमान उद्योग है, लेकिन अपेक्षित हस्तक्षेप और प्रोत्साहन से इसमें तेजी से विकास करने, अर्थव्यवस्था में योगदान करने, प्रशासन पद्धति को दुरुस्त करने तथा विशेषत: राज्य के शिक्षित युवाओं के लिये रोज़गार पैदा करने की संभावनाएं निहित हैं। अन्य राज्यों के मुकाबले यहां की भौगोलिक-जलवायुगत स्थितियां काफी बेहतर हैं। पर्यावरण पूर्णतया धूल तथा प्रदूषण मुक्त है। सॉफ्टवेयर इकाई लगाने की लागत यहां तुलनात्मक रूप से कम है। यहां का होटल व्यवसाय बेहद उन्नत है और सरकार के सक्रिय सहयोग से यहां तकनीकी एवं शैक्षिक संस्थान आरंभ किए जा सकते हैं और उनसे पर्याप्त संख्या में प्रशिक्षित कर्मी प्राप्त किए जा सकते हैं।

सूचना प्रौद्योगिकी एक ज्ञान आधारित उद्योग है। दूसरी ओर, इस राज्य में बड़ी तादाद में शिक्षित मानवशक्ति है जिन्हें प्रशिक्षित कर इस उद्योग में सक्रिय किया जा सकता है। खासतौर पर महिलाओं को इस उद्योग का एक अंग बनने के लिये प्रेरित किया जा सकता है। राज्य सरकार राज्य से बाहर बस गए सॉफ्टवेयर कर्मियों को वापस बुलाकर उन्हें अपना निजी उद्यम शुरू करने की दिशा में प्रेरित करना चाहती है। साथ ही राज्य सरकार प्रवासी लोगों के राज्य में निवेश को प्रोत्साहित करने के लिये अनुकूल माहौल बनाना चाहती हैं। राज्य सरकार 41 करोड़ रुपये की लागत से राज्य के सभी प्रखंडों में सामुदायिक सूचना केंद्र स्थापित करना चाहती है ताकि आम लोगों को इंटरनेट की सुविधा हासिल हो सके और उन्हें सरकार की गतिविधियों की जानकारी भी मिल सके। सार्वजनिक टेलीफोन बूथ की तर्ज़ पर सरकार इंटरनेट कियोस्क शुरू करने को भी प्रोत्साहन दे रही है। इससे न केवल लोगों को सूचनाएं मिल पाएंगी बल्कि बड़ी संख्या में शिक्षित युवाओं को रोज़गार भी मिल पाएगा।

सरकार सूचना प्रौद्योगिकी से जुड़ी कंपनियों को समस्यामुक्त माहौल प्रदान करने के लिये सन्नद्ध है। ये कंपनियां भारत सरकार की स्वीकृत नीति के अनुरूप विभिन्न विभागों द्वारा किए जाने वाले रोज़गार की जांच से मुक्त होंगी। विभिन्न श्रम कानूनों के मामले में राज्य सरकार सॉफ्टवेयर उद्योग द्वारा स्वप्रमाणन के लिये भी सैद्धांतिक रूप से सहमत हो गई है। ❑

जम्मू-कश्मीर समाचार

- जम्मू-कश्मीर सरकार ने पिछले दिनों निम्नलिखित फैसले किए हैं :
  - i) राज्य सरकार के कर्मचारियों को 3 प्रतिशत महंगाई भत्ते की किश्त देना
  - ii) लेथपोरा में छावनी बोर्ड को 55 कनाल भूमि का हस्तांतरण
  - iii) पहलगाम मास्टर प्लान, डरहाल में उप-खजाना
  - iv) स्नातक पूर्व स्तर पर जैव-प्रौद्योगिकी विषयों की शुरुआत
- राज्य सरकार ने 120727 मेगावाट की कुल क्षमता की 201 लघु पनबिजली परियोजना स्थलों को चिह्नित किया है।
- जम्मू-कश्मीर राज्य हथकरघा विकास निगम अपनी विस्तार योजना के तहत उत्तर भारत में छह दुकानें खोलेगा।
- राज्य मंत्रिमंडल ने पुलवामा के लिये 76.85 करोड़ रुपये की वार्षिक योजना का अनुमोदन कर दिया है।
- जम्मू-कश्मीर सरकार ने एक महत्वपूर्ण फैसला लेते हुए राज्य में आठ नये जिले, तीन सबडिविजनों तथा 14 तहसीलों का गठन किया है। इसने विधान सभा के नये क्षेत्र बनाने के लिये एक आयोग तथा एक वित्त आयोग के सृजन का भी निर्णय किया है। उपर्युक्त आठ नये जिलों के बनने के बाद राज्य के जिलों की संख्या बढ़कर 22 हो गई है। ❑

नियंत्रण रेखा के आरपार शुरू हुई दूसरी कश्मीर बस सेवा

भारत और पाकिस्तान ने जम्मू-कश्मीर में पुंछ और पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर में रावलकोट के मध्य एक नयी बस सेवा शुरू की है। अप्रैल 2005 में श्रीनगर-मुज़फ्फराबाद के बीच शुरू बस सेवा के उपरांत यह दूसरा बस मार्ग है और इससे दोनों तरफ के विभाजित लोगों के बीच परस्पर संपर्क बहाली में बहुत मदद मिलेगी। यह बस 47 किमी की दूरी तय करेगी जिसमें से 10 किमी का रास्ता भारत में है। संप्रग अध्यक्ष और कांग्रेस अध्यक्ष श्रीमती सोनिया गांधी ने इस बस को चकां-दा-बाग से झंडी दिखाकर रवाना करने के बाद कहा कि इसने हमारे दोनों देशों के बीच अविश्वास की एक और दीवार को ढहा दिया है। 58 वर्ष के अंतराल के बाद 'कारवां-ए-अमन' बस को रवाना करते समय उन्होंने परंपरागत हरे रंग की बजाय शांति का प्रतीक सफेद झंडा फहराया। शुरुआत में यह बस हर पखवाड़े में चला करेगी।

पाकिस्तान के कब्जे वाले कश्मीर (पीओके) की तरफ से पहली रावलकोट-पुंछ बस में 29 यात्री सवार हुए और उन्हें पीओके के प्रधानमंत्री सरदार सिकंदर हयात खान ने तातरीनोट क्रासिंग प्वाइंट से रवाना किया। इसी स्थान से तीस भारतीय यात्रियों ने जबरदस्त स्वागत के बीच भारत की ओर से नियंत्रण रेखा को पार किया। भारतीय बस 66 यात्रियों को लेकर गई जिनमें 36 यात्री पाकिस्तान के कब्जे वाले कश्मीर के थे जो जम्मू-कश्मीर का दौरा करने के पश्चात लौटे हैं। ये लोग क्रासिंग प्वाइंट के जरिये पहले पैदल भारत आए थे। 716 किमी लंबी सीमा पर इस तरह के आधा दर्जन क्रासिंग प्वाइंट बने हुए हैं। प्रारंभ में इन्हें उन कश्मीरी परिवारों के फायदे के लिये खोला गया है जो कि 1947-48 के प्रथम कश्मीर युद्ध के दौरान या बाद में विभाजित हो गए थे। दोनों देश श्रीनगर-मुज़फ्फराबाद मार्ग को इस वर्ष जुलाई से ट्रक सेवाओं हेतु प्रयोग करने पर सहमत हो गए हैं। दोनों ही तरफ के यात्रियों को चकां-दा-बाग में नियंत्रण रेखा पर क्रासिंग प्वाइंट पर उतरना पड़ता है और आव्रजन सीमा शुल्क तथा सुरक्षा जांच से गुजरना पड़ता है। इसके बाद वे संबंधित बस में पुंछ और रावलकोट के लिये रवाना होते हैं।

श्रीनगर-मुज़फ्फराबाद बस सेवा के मुकाबले पुंछ-रावलकोट बस सेवा ज्यादा उपयोगी सिद्ध होगी क्योंकि इस क्षेत्र में दोनों तरफ के 80 प्रतिशत लोग विभाजित परिवारों से संबंधित हैं। वर्षों से अलग-थलग पड़े रहने के बाद उनके लिये अपने रिश्तेदारों से मिलने का यह एक अच्छा अवसर हो सकता है। पुंछ के स्थानीय लोग, विशेषकर विभाजित परिवारों के लोग फूले नहीं समा रहे हैं। उद्घाटन कार्यक्रम की तैयारी कई हफ्तों से जारी थी। पुंछ कस्बे और चकां-दा-बाग क्रासिंग प्वाइंट के बीच 10 किमी की सड़क की व्यापक सुरक्षा जांच की गई।

लग्ज़री बस में सवार लोग बेहद खुश नज़र आ रहे थे। बड़ी संख्या में लोग हाथों में गुलदस्ते और फूल-मालाएं लेकर पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर से आने वाले यात्रियों के स्वागत के लिये क्रासिंग प्वाइंट के निकट एकत्र हो गए। उनमें से एक ताज़ बेगम ने कहा, "अभी तक हमारा संपर्क केवल पत्रों के जरिये ही होता था। लेकिन आज हमारा यह सपना भी पूरा हो गया है जिसकी हम लंबे समय से आस लगाए बैठे थे क्योंकि अब हम एक-दूसरे को देखने और मिलने के लिये इस खूनी लकीर को लांघ सकते हैं।" एक अन्य व्यक्ति मोहम्मद असलम अपने चाचा द्वारा सीमा पार करने का इंतजार कर रहा था। उसने कहा, "यह पुंछ और राजौरी (दोनों सीमावर्ती जिलों) के लिये ऐतिहासिक क्षण है जहां पर लोग 1947 के विभाजन तथा 1965 और 1971 के युद्ध के दौरान या इसके तुरंत बाद विभाजित हो गए थे।" बस में सवार एक यात्री फरीदा बी ने कहा, कि उसके पाकिस्तान के कब्जे वाले कश्मीर में बड़ी संख्या में रिश्तेदार हैं और उनसे मिलने का उसका सपना अब हक़ीक़त में बदल जाएगा। ❑

(एजेंसियों से)

जम्मू-कश्मीर में केसर की खेती

○ नूरशाह

निस्संदेह, आजादी के बाद देश ने सामाजिक व आर्थिक विकास के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति की है। हमने कृषि व बागवानी के क्षेत्र में नयी ऊंचाइयां हासिल की हैं। फिर भी, निचले स्तर पर ठोस कदम उठाने की अविलंब जरूरत है ताकि कृषि व बागवानी से जुड़े लोगों को अपने पेशे से और अधिक लाभ मिल सके।

इस बात से कोई इंकार नहीं कर सकता कि जम्मू-कश्मीर की अर्थव्यवस्था में कृषि की एक महत्वपूर्ण भूमिका है। इस राज्य की 80 प्रतिशत आबादी गांवों में रहती है और अपने भरण-पोषण के लिये किसी न किसी तरह से कृषि पर निर्भर करती है।

यह राज्य तब तक आगे नहीं बढ़ सकता जब तक यहां के अधिकांश लोगों की आर्थिक स्थिति व जीवन-स्तर में सुधार नहीं होता। स्वयं कृषि अपने-आप में एक विस्तृत क्षेत्र है। यह उस वृक्ष की भांति है जिसमें जीवन के विभिन्न क्षेत्रों को निरूपित करने वाली अनगिनत शाखाएं हैं। इन्हीं में से एक केसर से संबंधित है।

केसर के कई नाम हैं :- जाफ़रान, केसर, कंग तथा कंग पोश आदि। कंग पोश ताज़गी एवं शुद्धता का प्रतीक है। केसर के विशाल खेत, केसरिया शाल में लिपटी हुई ऊंघती नयी-नवेली दुल्हन का अहसास कराते हैं। कश्मीर को 'फूलों की घाटी' कहा जाता है। यहां उगाए जाने वाले विभिन्न किस्म के फूलों में केसर का एक अलग महत्व व उपयोगिता है। ऐतिहासिक दृष्टिकोण से केसर की खेती की शुरुआत तीन-चार शताब्दी पूर्व अरालिया तथा स्पेन में हुई। उसके बाद इसका प्रसार ईरान, स्वीडन तथा भारत जैसे सुदूर क्षेत्रों में हुआ। आज भारतीय कृषि में केसर की खेती एक महत्वपूर्ण व्यावसायिक गतिविधि है। यह गतिविधि 'स्वर्णिम जायका' के नाम से भी जानी जाती है।

केसर की खेती एक पारंपरिक कला है। भारत में 5,707 हेक्टेयर भूमि पर यह खेती होती है। इसका सालाना उत्पादन लगभग 16,000 किलोग्राम है। भारत में केसर उत्पादन के मामले में जम्मू-कश्मीर सबसे अव्वल है। इसकी पुष्टि इस तथ्य से होती है कि केसर उत्पादन में प्रयुक्त कुल 5,707 हेक्टेयर भूमि में से 4,496 हेक्टेयर भूमि अकेले जम्मू-कश्मीर में है।

कश्मीर में श्रीनगर से 15 किलोमीटर की दूरी पर अवस्थित पंपोर सारी दुनिया में उत्तम क्वालिटी वाले केसर के उत्पादन के लिये मशहूर है। हालांकि, जम्मू के किश्वाड़ में भी केसर का उत्पादन सीमित पैमाने पर होता है। पंपोर और उसके निकटवर्ती क्षेत्र प्रत्येक वर्ष औसतन 2,128

किलोग्राम केसर का उत्पादन करते हैं। द *वैली ऑफ कश्मीर* नामक अपने पुस्तक में सर वाल्टर लॉरेंस ने केसर के बारे में लिखा है। उन्होंने केसर की खेती तथा इसकी उपयोगिता के बारे में गहन अध्ययन किया। वे लिखते हैं, "केसर की खेती के लिये कश्मीर के विभिन्न भागों से लोग पंपोर आते थे।" अब यह खेती स्थानीय लोगों की विशिष्टता बन गई है। दिलचस्प तथ्य यह है कि उन दिनों एक रुपया प्रति तोला की दर से केसर की बिक्री होती थी। सर लॉरेंस का यह भी कहना है कि सन 1923 तक केसर का सर्वाधिक उत्पादन पंपोर के नागोम क्षेत्र में होता था।

अब इस खेती से औसतन 30 से 40 करोड़ रुपये की कमाई होती है। इस प्रकार, फल उत्पादन के बाद केसर की खेती राज्य में दूसरी सबसे बड़ी व्यावसायिक गतिविधि है। लिहाज़ा, केसर की खेती को प्रोत्साहित करने के लिये नवीन तकनीकों का समावेश आवश्यक है। इस खेती में आधुनिक व वैज्ञानिक तकनीक अवश्य उपयोग होना चाहिए।

यह राज्य सरकार एवं कृषि वैज्ञानिकों की जिम्मेदारी है कि वे केसर-उत्पादकों का आत्मविश्वास बढ़ाएं। उन्हें किसानों के शिक्षण, प्रशिक्षण और प्रोत्साहन में पर्याप्त रुचि दिखानी चाहिए। उन्हें किसानों को फसल के संरक्षण में नवीन तकनीकों के उपयोग से जुड़ी सहायता प्रदान करनी चाहिए।

निवेश के मुकाबले कम उत्पादन होना राज्य के केसर उत्पादकों की आम समस्या है। यही नहीं, फसलों में बीमारी लग जाना भी उनके लिये परेशानी का सबब है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण से केसर के पौधों में पाई जाने वाली विभिन्न बीमारियों का सही निदान होना अत्यंत आवश्यक है। केसर में होने वाली बीमारियों में कार्म रॉट, ड्राई रॉट, रूट रॉट, बैक्ट्रिया रॉट, रिंग रॉट तथा चारकोल रॉट आदि आम हैं।

इन बीमारियों में कार्म रॉट सर्वाधिक घातक है। कुछ वर्ष पहले इस संबंध में कश्मीर के पुलवामा जिले में एक सर्वेक्षण कराया गया था। इसमें यह पाया गया कि कुछ खास गांवों में इस बीमारी का प्रभाव अपेक्षाकृत अधिक है। इस बीमारी तथा अन्य बीमारियों से बचने के लिये कृषि विशेषज्ञों से अवश्य संपर्क किया जाना चाहिए और उनके निर्देशों पर सही ढंग से अमल किया जाना चाहिए। शेर-ए-कश्मीर कृषि विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय के विशेषज्ञ इस दिशा में केसर उत्पादकों का सही मार्गदर्शन कर सकते हैं। इन विशेषज्ञों की राय से केसर के पौधों को विभिन्न बीमारियों के क़हर से बचाया जा सकता है। साथ ही, उत्पादन में भी वृद्धि की जा सकती है।

जम्मू-कश्मीर में केसर की बोआई आम तौर पर अगस्त में और 15 सितंबर तक होती है। इसके फूलों को अक्तूबर और नवंबर में तोड़ लिया जाता है। फसल की कटाई या फूलों को तोड़ने के समय वातावरण में गर्मी कतई नहीं होनी चाहिए। लिहाजा, यह प्रक्रिया पहले सुबह ही पूरी कर ली जाती है। सूर्योदय से लेकर सुबह दस बजे तक का समय फूलों को तोड़ने के लिये आदर्श है। कटाई के बाद फूलों को 5 दिनों तक सूखने के लिये छोड़ दिया जाता है। तत्पश्चात् इन्हें एक हवादार कंटेनर में रख दिया जाता है ताकि फसल की गुणवत्ता में गिरावट न आए। इन दिनों सुखाने वाले सौर उपकरण का भी प्रयोग किया जाता है। यह उपकरण महज सात-आठ घंटों में फसल को सुखा देता है।

स्थानीय स्तर पर केसर की तीन किस्में हैं। होंग या शाली सुप्रीम, लाचा या लाच तथा गोची।

एक किलोग्राम केसर में लगभग 1,60,000 से लेकर 1,70,000 छोटे-छोटे फूल होते हैं। लिहाजा, यह एक थकाऊ और समय खाने वाला कार्य है।

केसर के उत्पादन में बढ़ोतरी के लिये इन कदमों पर अवश्य विचार करना चाहिए :

(1) उच्च गुणवत्ता व पैदावार वाली बीजों की व्यवस्था।

(2) खेती में प्रयुक्त भूमि का विस्तार।

(3) सुखाने वाले सौर व वायु उपकरणों का व्यापक इस्तेमाल और इन उपकरणों की खरीद में आर्थिक सहायता।

(4) फसलों की पैकिंग के लिये उपयुक्त प्रशिक्षण।

(5) केसर उत्पादकों के साथ विशेषज्ञों का पूर्ण सहयोग व समन्वय।

विपणन भी एक महत्वपूर्ण समस्या है। एक आम केसर उत्पादक थोड़ी मात्रा में अपना उत्पाद बेचने में दिक्कत महसूस करता है। वैयक्तिक स्तर पर पैकिंग और ग्रेडिंग अधिक लाभदायक नहीं है। किसान के पास सीमित संसाधन होते हैं। लिहाजा, उचित मूल्य पर केसर की बिक्री के लिये सहकारी समितियों की स्थापना ज़रूरी है।

आज एक ऐसी रणनीति की आवश्यकता है जिससे एक आम केसर उत्पादक को उसकी मेहनत का पूरा लाभ मिल सके। ❑

(लेखक जम्मू-कश्मीर सरकार के अवकाश प्राप्त निदेशक, ग्रामीण विकास हैं)

क्या है मुद्रास्फीति

मुद्रास्फीति को मूल्य संकेतकों में होने वाले परिवर्तनों के जरिये मापा जाता है। मूल्य सूचकांक का उद्देश्य किसी वस्तु विशेष की बजाय वस्तुओं के मूल्यों में कुल मिलाकर हुई वृद्धि या कमी का परिमाण निर्धारित करना है। मूल्य सूचकांक निर्धारित करने के लिये किसी वस्तु विशेष के मूल्य में होने वाले परिवर्तनों का औसन परिवर्तित मूल्य निकाला जाता है। वस्तु विशेष के भार का निर्धारण उनके तुलनात्मक महत्व पर निर्भर करता है। उदाहरण के तौर पर गेहूं के मूल्य में परिवर्तन होना, जितना आप लगभग रोज़ाना उपभोग करते हैं, जूते-चप्पलों के मूल्य में होने वाले बदलावों की अपेक्षा निश्चित तौर पर महत्वपूर्ण है। सूचकांक मुख्यत: दो प्रकार के होते हैं- थोक मूल्य सूचकांक और उपभोक्ता मूल्य सूचकांक। पहले के तहत थोक मूल्यों में होने वाले परिवर्तनों को मापा जाता है जो कि उत्पादकों के दृष्टिकोण से ज्यादा अर्थपूर्ण हो सकता है जबकि दूसरे के तहत खुदरा मूल्यों में होने वाले बदलावों को मापा जाता है जो निश्चित तौर पर उपभोक्ताओं के लिये ज्यादा महत्वपूर्ण है। जिस मुद्रास्फीति की दर के बारे में भारत में अक्सर समाचारपत्रों में चर्चा होती रहती है उसकी गणना थोक मूल्य सूचकांक के आधार पर की जाती है। जब अख़बार में यह छपता है कि अमुक सप्ताह में मुद्रास्फीति की वार्षिक दर 5.2 प्रतिशत पहुंच गई तो इसका अर्थ है कि थोक मूल्य सूचकांक के आधार पर वस्तुओं के मूल्यों का औसत स्तर इससे पहले के वर्ष में उसी सप्ताह के आंकड़ों के मुकाबले (या 52 सप्ताह का सारांश) 5.2 प्रतिशत अधिक था। यह जानना ज़रूरी है कि मुद्रास्फीति घटने का अर्थ यह नहीं है कि मूल्य भी घट रहे हैं। इसमें तो सिर्फ मूल्यों के घटने या बढ़ने की दर दर्शाई जाती हैं।

भारत में कितने प्रकार की मूल्य सूचकांक हैं?

हमारे यहां एक थोक मूल्य सूचकांक और तीन तरह के उपभोक्ता मूल्य सूचकांक हैं। ये तीन उपभोक्ता मूल्य सूचकांक हैं : खेतिहर मजदूरों के लिये, औद्योगिक कामगारों के लिये और शहरी गैर-शारीरिक श्रम करने वाले कर्मचारियों के लिये उपभोक्ता मूल्य सूचकांक। इतने ज्यादा उपभोक्ता मूल्य सूचकांक होने के पीछे कारण यह है कि ऊपर वर्णित प्रत्येक श्रेणी के उपभोक्ताओं के द्वारा उपभोग की जाने वाली वस्तुओं में कई प्रकार से भिन्नता होने की संभावना होती है। उदाहरण के तौर पर मुंबई में उपनगरीय ट्रेन टिकटों के मूल्यों को कृषि कामगारों संबंधी उपभोक्ता मूल्य सूचकांक में शामिल करना उतना ज्यादा महत्वपूर्ण नहीं है जितना कि शहरी गैर-शारीरिक श्रम कर्मचारियों से संबंधित उपभोक्ता मूल्य सूचकांक में शामिल करना ज़रूरी है। इसी प्रकार खाद्य पदार्थ वर्ग में विशेषकर अनाज कृषि श्रमिक संबंधी उपभोक्ता मूल्य सूचकांक ज्यादा महत्व रखता है क्योंकि यह माना जाता है कि कृषि कामगार अपनी दिहाड़ी का ज्यादा हिस्सा भोजन पर खर्च करते हैं। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि उपभोक्ता मूल्य सूचकांक अखिल भारतीय सूचकांक के अलावा विभिन्न शहरों या केंद्रों के लिये भिन्न-भिन्न क्यों होता है।

मूल्य सूचकांक किस प्रकार निर्धारित होता है?

पहले कदम के तौर पर यह तय करना होता है कि किन वस्तुओं या श्रेणियों को शामिल किया जाना है। थोक मूल्य सूचकांक के मामले में इसका अर्थ है अर्थव्यवस्था के अंतर्गत सभी उत्पादित या प्रयुक्त वस्तुएं। लेकिन उपभोक्ता मूल्य सूचकांक के मामले में वस्तुओं का निर्धारण घरेलू सर्वेक्षणों के आधार पर किया जाता है जिससे उपभोक्ता पैटर्न का पता चलता है। इसके बाद उपभोक्ता मूल्य सूचकांक के मामले में वस्तु को कुल व्यय में उसके हिस्से के औसत के अनुसार समग्र सूचकांक में एक स्थान प्रदान किया जाता है तथा थोक मूल्य सूचकांक के मामले में सभी वस्तुओं के कुल उत्पादन में उस वस्तु के उत्पादन मूल्य के औसत के रूप में वजन निर्धारित होता है। सूचकांक प्रत्येक वस्तु के औसत वजन का सूचक है। किसी एक आधार वर्ष को चुना जाता है जिसमें प्रत्येक वस्तु के मूल्य को देखा जाता है और इस प्रकार समग्र सूचकांक को 100 अंकों के साथ समीकृत किया जाता है।

इसे भविष्य की कीमतों के लिये आधार माना जाता है। इस प्रकार यदि कहा जाए कि गेहूं का मूल्य आधार वर्ष में 10 रुपये प्रति किग्रा है तथा इससे अगले वर्ष की उसी अवधि में यह 15 रुपये प्रति किग्रा हो, तो बाद के वर्ष के लिये गेहूं सूचकांक में परिवर्तन समग्र सूचकांक को कितना प्रभावित करता है यह इस बात पर निर्भर करता है कि इसका भार कितना है। जितना ज्यादा भार होगा उतना ही अधिक उसका असर होगा। ❑

शांति के लिये प्रौद्योगिकी

○ अनिल पी. जोशी

स्थानीय अर्थव्यवस्था तथा सामाजिक पर्यावरण का विकास तभी संभव है जब स्थानीय संसाधनों और ज्ञान को महत्व दिया जाए। इससे न केवल स्थानीय अर्थव्यवस्था को मदद मिलेगी, बल्कि आर्थिक विकास की प्रक्रिया के विकेंद्रीकरण की दृष्टि से भी यह महत्वपूर्ण होगा।

हिमालयीय पर्यावरण अध्ययन एवं संरक्षण संगठन ने उत्तरी कमान के साथ मिलकर जम्मू-कश्मीर के विभिन्न सैन्य सेक्टरों में प्रौद्योगिकी-केंद्रित अनेक पहल की है। उनमें से प्रमुख पहल जल मिलों के कारण सीमावर्ती गांवों में बिजली पहुंचाने का है। अन्य पहल स्थानीय रूप से उपलब्ध फलों, सुगंधित तथा अन्य पौधों जैसे संसाधनों का उपयोग कर कमाई करने से जुड़ी हैं।

दीर्घकालिक रणनीति से सीमा पर रहने वाले प्रौद्योगिकी वंचित समुदायों का असंतोष नियंत्रित करने में मदद मिली। चूंकि इन प्रयासों में अब तक अप्रयुक्त अथवा अल्प प्रयुक्त संसाधनों का इस्तेमाल किया जाता है इसलिये इनकी बदौलत गांवों में ही विकेंद्रित रूप से रोज़गार उपलब्ध हो जाते हैं। जम्मू-कश्मीर के समूचे सीमांत इलाके में विभिन्न परीक्षित प्रौद्योगिकियों का प्रयोग किया गया। यह कार्य यहां कार्यान्वित की जा रही सद्भावना परियोजना के कारण संभव हो सका जो बुनियादी ढांचे और अन्य सुविधाओं के सृजन के द्वारा बेहतर जीवन शैली को बढ़ावा देने के लिये चलाई जा रही है।

जल मिल

जम्मू-कश्मीर में अस्सी हजार से भी ऊपर जल मिल हैं। लेकिन ये बेकार हैं अथवा अत्यल्प उत्पादन करती हैं जबकि इन्हें बहुउद्देश्यीय बनाया जा सकता है। घाटी में स्थित ऐसी जल मिलों को प्रोन्नत कर उनसे सीमा पर अवस्थित अनेक गांवों में बिजली उपलब्ध कराई गई। इसमें प्रयुक्त प्रौद्योगिकी सरल और कम लागत वाली थी, जिसे स्थानीय स्तर पर मरम्मत किया जा सकता है।

जल मिल में बिजली उत्पादन सहित विभिन्न कार्यों के लिये मशीन चलाने हेतु पानी का प्रयोग किया जाता है। मिल द्वारा चालित जलचक्र की ऊर्जा से बिजली बनाई जा सकती है अथवा अनाज पीसने जैसे कार्य किए जा सकते हैं। जल मिलें पानी के रूप में एक ऐसे ईंधन का इस्तेमाल करती हैं जो इस्तेमाल की प्रक्रिया में न तो जलती है, न ही समाप्त होती हैं। जलचक्र एक अनंत और सतत रूप से संभारित होने वाली प्रक्रिया है। इसलिये पनबिजली को नवीकरणीय तथा ऊर्जा का वैकल्पिक स्रोत माना जाता है।

इस बिजली का उपयोग हरेक गांव में 60 अथवा अधिक घरों में बल्व जलाने तथा कृषि कार्य में प्रयुक्त होने वाले विभिन्न मशीनों को चलाने के लिये किया गया। इस तरह, इस क्रांतिकारी संकल्पना से हरेक गांवों को सशक्त बनाया गया। इससे गांव न केवल बिजली के क्षेत्र में आत्मनिर्भर बने, बल्कि ख़राब मशीन, वेल्डिंग आदि के लिये बिजली उपलब्ध होने से रोज़गार सृजन भी हुआ। पुंछ में हुए आरंभिक प्रदर्शन के बाद जम्मू-कश्मीर में क्रांति-सी आ गई। उसके बाद से अब तक सेना यहां के 360 गांवों में रौशनी फैला चुकी है।

जम्मू-कश्मीर के राज्यपाल तथा सेना की उत्तरी कमान जल मिलों के द्वारा नियंत्रण रेखा से लगे 1,500 अन्य गांवों में भी रोशनी फैलाने का संकल्प लिया है। वर्तमान में बारामूला, कुपवाड़ा, राजौरी, करगिल, लेह तथा जम्मू-कश्मीर के समूचे सीमांत इलाके में गांवों के विद्युतीकरण ने आंदोलन का रूप ले लिया है। यह विकेंद्रीकृत विकास पहल बन चुका है, क्योंकि जल मिलों से बिजली उत्पादन के अलावा ऐसे अक्षत स्थानीय संसाधनों के उपयोग को बढ़ावा मिला है जिन्हें अब तक बेमोल बेच दिया जाता था अथवा यों ही छोड़ दिया जाता था। इससे लाभान्वित होने वाले प्रमुख इलाके हैं: जम्मू, डोडा, लेह, करगिल, राजौरी वडगाम घाटी आदि। इन मिलों को उन्नत करके इनसे बिजली उत्पादन के साथ-साथ आटा पीसने, तेल पेरने, भूसी उतारने आदि जैसे काम भी किए जाते हैं। ये मिलें सामुदायिक सेवा प्रणाली के रूप में प्रौद्योगिकी के विकेंद्रीकरण का अनूठा उदाहरण है।

जैव संसाधन

पर्वतीय समुदाय कृषि के अलावा बागवानी तथा प्राकृतिक रूप से उगने वाले वृक्षों एवं जड़ी-बूटियों के मामले में भी समृद्ध होते हैं। शांति के लिये प्रौद्योगिकीय पहल से उक्त संसाधनों को एक नवीन आर्थिक दिशा मिली। विभिन्न संसाधनों के इस्तेमाल के बारे में लेह, करगिल से लेकर उरी-बारामूला, राजौरी, पालमा, थाना मंडी तक जम्मू-कश्मीर के अधिकांश भागों में प्रौद्योगिकी संबंधी प्रशिक्षण श्रृंखला चलाई गई। ये प्रशिक्षण स्थानीय लोगों को उनके संसाधनों के उपयोग की जानकारी देने के लिये चलाए गए। विभिन्न संसाधनों के कच्चे माल के रूप में विधिवत इस्तेमाल के लिये करगिल, राजौरी और पालमा में सेना जैव संसाधन केंद्र खोले गए हैं।

इन संसाधनों में सर्वप्रथम कृषि है जिसके बारे में कहा जाता है पर्वतीय क्षेत्र में यह लाभकारी नहीं होता। विभिन्न पहाड़ी फसलों में गुणवत्तावर्धन का एक कार्यक्रम चलाया गया। इससे बाज़ार मूल्य में भारी वृद्धि हुई। स्थानीय बाज़ार को आकर्षित करने के लिये बिस्कुट, कुकीज, केक आदि विकसित किए गए।

पर्वतीय क्षेत्रों में बेहद उत्पादक होने के बावजूद ख़राब परिवहन व्यवस्था तथा संरक्षण एवं संसाधन सुविधाओं की कमी के कारण बागवानी अलाभकर होने को अभिशप्त हैं। अत: विभिन्न इलाकों में लाभकारी उत्पाद अपनाने के लिये प्रशिक्षण दिए गए। ये प्रशिक्षण कार्यक्रम प्रमुख रूप से लेह, करगिल, बारामूला, उरी, राजौरी, पालमा और जम्मू में चलाए गए जिनमें विभिन्न अंचलों के लाभदायी उत्पादों को बाज़ार में लाने के बारे में प्रशिक्षित किया गया। करगिल इलाके के 'करगिल' नामक ब्रांड और लौरेन घाटी के सेबों के 'लौरेन' नामक ब्रांड में लोगों ने काफी रुचि दिखाई है।

इसी प्रकार, इस इलाके में उपलब्ध सुगंधित पौधों से लोबान और अगरबत्तियां तैयार की गईं। खुश्बू तथा मच्छर भगाने में कामयाब मोमबत्तियां भी तैयार की गईं।

इस नवीन प्रयास से जम्मू-कश्मीर में एक लघु आर्थिक क्रांति-सी आ गई है जिससे आगे चलकर अंतत: शांति प्रक्रिया को मजबूती मिलेगी। इन प्रौद्योगिकियों को सीमांचल के गांवों में ले जाने का श्रेय निश्चित रूप से सेना के उन जवानों को जाता है जो वहां सेना के एकमात्र प्रतिनिधि होते हैं। स्थानीय समुदाय के साथ प्रौद्योगिकी, ज्ञान, संसाधनों के उपयोग के बारे में जानकारियों के आदान-प्रदान के क्रम में वह न केवल उस समुदाय के साथ आत्मीय संबंध कायम कर पाता है, बल्कि इस प्रक्रिया में हासिल सीखों से सेवानिवृत्ति के उपरांत अपने गांव का विशेषज्ञ भी बन जाता है। ❑

(लेखक हिमालयीय पर्यावरण अध्ययन एवं संरक्षण संगठन से संबद्ध हैं)

I.A.S.-P.C.S. प्रीलिम तथा मेन्स में
सामान्य अध्ययन के लिए एक अपरिहार्य पुस्तक

भारतीय अर्थव्यवस्था
- सर्वेक्षण तथा विश्लेषण

2006 प्रो0 एस0 एन0 लाल इ0 वि0

पुस्तक को जिसने भी पढ़ा उसी ने मुक्त कंठ से प्रशंसा की

" ... In Delhi the book of this standard that too in Hindi medium are really scarce. ***Dr. Adesh Sharma,*** Senior Teacher of Economics University of Delhi/Director, KALP Academy, Delhi

आई.ए.एस. के अर्थव्यवस्था के समग्र पाठ्यक्रम के लिए यह बेहद उपयोगी है। अर्थव्यवस्था का विश्लेषणात्मक मूल्यांकन इस पुस्तक की सबसे बड़ी विशेषता है।'

मनोज कुमार शर्मा, चयनित आई.ए.एस. 2004
रैंक 121, अनुक्रमांक 082944
सामान्य अध्ययन में 360 से अधिक अंक

प्रतियोगी परीक्षाओं के लिए लिखी गयी यह पुस्तक अत्यन्त ही उपयोगी है विशेषरुप से खण्ड 8 जो मेन्स के लिए है।' ***डॉ. सी.बी.पी. श्रीवास्तव,*** डिसकवरी इन्स्टीट्यूट, नयी दिल्ली

पुस्तक प्राप्ति के कुछ प्रमुख स्थान - **संस्करण 2006, मूल्य- रु.135/-**
अजय पुस्तक केन्द्र, यूनिवर्सिटी रोड, इलाहाबाद, अग्रवाल मैगजीन डिस्ट्रीब्यूटर, नई दिल्ली, नवशक्ति पुस्तक केन्द्र, मुखर्जी नगर, दिल्ली शिव पब्लिशिंग हाउस, अलोपीबाग रोड, इलाहाबाद (प्रकाशक)
फोन : 0532-2508236, 2502755, 9335647084

ECONOMICS
IAS कोचिंग के लिये **PCS**
उत्तर भारत का एकमात्र विश्वसनीय नाम

प्रो0 एस0 एन0 लाल

नया बैच इलाहाबाद विश्वविद्यालय 10 जुलाई 2006 से प्रारम्भ **नामांकन जारी**

अवसर का लाभ उठाइये - 2003 यू.पी.पी.सी.एस. में अर्थशास्त्र लेकर जो चार छात्र चयनित हुए वे सभी इसी कोचिंग के थे उनमें प्रमोद कुमार यादव को 9वीं रैंक तथा अच्युत पार्थ को 16वीं रैंक प्राप्त हुयी।

सामान्य अध्ययन के लिए भारतीय अर्थव्यवस्था
द्वारा **डा० अनूप सिंह** इ0 वि0

सामान्य अध्ययन विषय विशेषज्ञों के द्वारा
सम्पर्क करें - 09335154584, 0532-2508236
ला MERIDIAN
लेबर चौराहा, अल्लापुर, इलाहाबाद (होस्टल सुविधा भी उपलब्ध)

YH-8/6/04

फिर खुला नाथू-ला

○ सुरेश अवस्थी

पिछली छह जुलाई 2006 का दिन भारत और चीन के बीच परस्पर सुधरते संबंधों में सुनहरा दिन कहलाएगा। दोनों देशों के बीच पिछले 44 वर्षों से बंद नाथू-ला दर्रा इस दिन सीमा व्यापार के लिये दोबारा खोल दिया गया। करीब 15 हजार फीट की ऊंचाई पर स्थित नाथू-ला में भारतीय सीमा में आयोजित एक भव्य और गरिमामय समारोह में सिक्किम के मुख्यमंत्री पवन चामलिंग और तिब्बत स्वायत्तशासी क्षेत्र के अध्यक्ष सी. फुंट सोक ने औपचारिक रूप से फीता काटकर इस द्विपक्षीय व्यापार मार्ग का उद्घाटन किया। इस अवसर पर वहां उत्सव जैसा माहौल था। कार्यक्रम में भारत में चीन के राजदूत सुन युच्छि, तिब्बत स्वायत्तशासी क्षेत्र के उपाध्यक्ष हाओ पेंग, भारतीय सेना के वरिष्ठ अधिकारी, सिक्किम सरकार के मंत्रीगण और अधिकारी, केंद्र सरकार के वरिष्ठ अधिकारी तथा दोनों देशों के व्यापारी समुदायों के अलावा मीडिया के लोग भी बड़ी संख्या में मौजूद थे। ख़राब मौसम के बावजूद दोनों ओर के लोगों में उत्साह की कोई कमी नहीं थी। दशकों बाद दोनों देशों के रिश्तों पर जमी बर्फ़ पिघली।

नाथू-ला दर्रा 1962 में भारत चीन युद्ध के बाद बंद कर दिया गया था। यही दर्रा चीन के कब्जे वाले तिब्बत क्षेत्र को सिक्किम से जोड़ता है। इस दर्रे के खुल जाने से भारत और चीन के बीच व्यापार का तीसरा मार्ग उपलब्ध हो गया है। इसके अलावा, हिमाचल प्रदेश के शिपकी ला और उत्तरांचल के लिपुलेख से दोनों देशों के बीच सीमा व्यापार होता है।

सिक्किम सरकार एक लंबे अरसे से नाथू-ला को खोलने के प्रयास में लगी थी। केंद्र सरकार पर दबाव बनाया जा रहा था कि चीन से सीमा वार्ता के दौरान इस पर सहमति बनाने के प्रयास किए जाएं। भारत और चीन के बीच 1991 में हुए एक समझौते में सीमा पार व्यापार शुरू करने के बारे में सहमति बन गई। इसकी पृष्ठभूमि उसी समय बननी शुरू हो गई थी जब 1988 में तात्कालीन प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने चीन का दौरा किया और चीन के पितृपुरुष और शीर्षस्थ नेता देंग ज़ियाओ फेंग ने जब राजीव गांधी से हाथ मिलाना शुरू किया तो लंबे समय तक उनका हाथ छोड़ा ही नहीं। तमाम संदेहों और आशंकाओं को परे रखते हुए इस ऐतिहासिक 'हैंडशेक' ने 1962 के बाद ख़राब हुए रिश्तों के तार फिर से जोड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। पिछले 18 वर्षों के दौरान दोनों देशों के शीर्ष नेताओं की एक-दूसरे देशों की यात्रा के दौरान शनैः शनैः ग्रंथियां ढीली पड़ती गईं और परस्पर विश्वास का माहौल बनने लगा। पूर्व प्रधानमंत्री नरसिंह राव (1993) और तत्कालीन प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी की बीजिंग यात्रा (2003) के बाद सिक्किम को भारतीय क्षेत्र मानने के संकेत चीन ने दिए। पिछले वर्ष अप्रैल में प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह और चीनी प्रधानमंत्री बेन जियाबाओ की ऐतिहासिक शिखर बैठक के बाद जहां चीन ने सिक्किम को भारतीय सरज़मीन का अंग स्वीकार कर लिया, वहीं भारत ने भी तिब्बत को चीन के एक हिस्से के रूप में मान्यता दे दी। दोनों देशों के इस कदम के बाद नाथू-ला मार्ग को खोला गया है। उल्लेखनीय है कि सिक्किम और तिब्बत का दर्ज़ा दोनों देशों के रिश्तों के बीच कड़ुवाहट घोलता रहा है। नाथू-ला दर्रे का खुलना दोनों देशों के बीच बेहतर होते संबंधों का प्रमाण है। इससे आपसी संबंधों में और भी मज़बूती आएगी। परस्पर विश्वास

सामान जिनका आयात-निर्यात होगा

भारत नाथू-ला से इन 29 वस्तुओं का निर्यात चीन को कर सकेगा:

कृषि उपकरण, कंबल, कपड़े, साइकिल, तांबे का सामान, कॉफी, चाय, बार्ली, चावल, आटा, मेवे, सब्जी, वनस्पति तेल, शीरा, कैंडी, तंबाकू, मसाले, जूते, केरोसिन, स्टेशनरी, बर्तन, गेहूं, शराब, दूध से बने प्रसंस्करित पदार्थ, डिब्बाबंद भोज्य पदार्थ, सिगरेट, स्थानीय हर्बल उत्पाद, जैतून का तेल और हार्डवेयर।

चीन से इन 15 वस्तुओं का आयात हो सकेगा:

बकरी और भेड़ की खाल, ऊन, कच्चा रेशम, याक के बाल और उसकी पूंछ, चीनी मिट्टी, बोरेक्स, मक्खन, कश्मीरी बकरी, सादा नमक, घोड़े, बकरियों और भेड़ों का निर्यात।

बढ़ने से सुरक्षा संबंधी आशंकाएं भी धीरे-धीरे समाप्त हो जाएंगी। दोनों ही देश इस दिशा में ठोस प्रयास कर रहे हैं। रक्षा मंत्री प्रणव मुखर्जी की हाल की चीन यात्रा के दौरान हुआ रक्षा सहयोग संबंधी समझौता इसी हक़ीक़त को बयान करता है।

नाथू-ला का हिमालयी दर्रा एशिया की दो आर्थिक शक्तियों के बीच रिश्तों की प्रगाढ़ता का एक और प्रतीक बनने की ओर अग्रसर है। नाथू-ला के जरिये होने वाला व्यापार, हालांकि शुरू तो छोटे पैमाने पर होगा परंतु दोनों देशों की सीमावर्ती पहाड़ी क्षेत्रों में आर्थिक विकास को नयी ऊर्जा प्रदान करेगा। दोनों देशों के बीच का व्यापार 2005 में 18 अरब 60 करोड़ डालर का था और उसमें करीब 35 प्रतिशत की दर से वृद्धि हो रही है। सिक्किम के नाथू-ला व्यापार दल के एक अध्ययन के अनुसार इस दर्रे से होकर होने वाला व्यापार 2010 तक 3 अरब 53 करोड़ तक पहुंचने की आशा है। उम्मीद की जा रही है 2015 तक यह व्यापार 4 अरब 50 करोड़ रुपये और 2020 तक 5 अरब 75 करोड़ रुपये तक पहुंच जाएगा।

दोनों देशों के बीच व्यापार शुरू में पर्वतीय क्षेत्रों में सीमित रहेगा और अभी केवल सिक्किम स्थित व्यापारियों को ही व्यापार करने की अनुमति दी गई है। सिक्किम आधारित ये व्यापारी भी केवल विनिर्दिष्ट 29 चीजों का निर्यात कर सकेंगे और सूचीबद्ध 15 वस्तुओं का आयात कर सकेंगे। इन वस्तुओं के बारे में 1991, 1993 और 2003 में सहमति हुई थी। इनमें कृषि उत्पाद, कंबल, सूखा मेवा, कॉफी और डिब्बाबंद खाद्य पदार्थ शामिल हैं। इस रास्ते में साल के आठ महीने तक बर्फ़ जमी रहने के कारण केवल गर्मियों में ही व्यापार हो सकेगा। बीसवीं सदी के प्रारंभिक वर्षों में भारत और चीन के बीच होने वाले व्यापार का 80 प्रतिशत इसी दर्रे से होता था। यही दर्रा ऐतिहासिक रेशम मार्ग (सिल्क रूट) का भी हिस्सा रहा है। चीनी रेशम के आयात का यही सुविधाजनक मार्ग था।

इस दर्रे से व्यापार के जो नियम-कायदे निश्चित किए गए हैं, उनके अनुसार, सप्ताह में केवल चार दिन ही यानी सोमवार से वृहस्पतिवार तक व्यापार हो सकेगा। कारोबार का समय भी सुबह साढ़े सात बजे से शाम साढ़े तीन बजे तक निर्धारित है। यहां लेन-देन अमरीकी डॉलर में होगा। एक बार में केवल 60 वाहनों को ही किसी भी ओर से सीमा पार करने की अनुमति दी गई है। चीनी व्यापारियों को सीमा पार करने पर 50 रुपये का शुल्क देना होगा, जबकि भारतीय व्यापारियों को पांच युआन का भुगतान करना होगा। दोनों दे- बीच व्यापार के लिये स्थान भी निश्चित कर

भारत-चीन व्यापार का दायरा

44 साल के बाद नाथू-ला फिर खुल रहा है। इस सिल्करूट के खुलने से भारत-चीन फिर से कारोबार कर सकेंगे

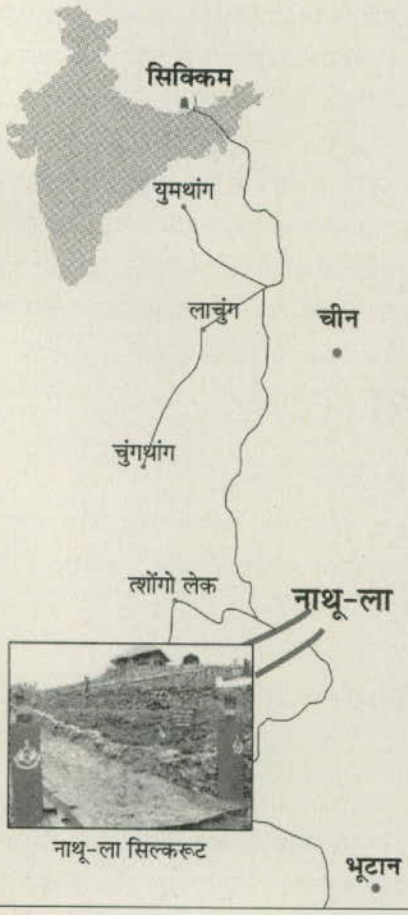

नाथू-ला सिल्करूट

कहां है दर्रा

- चीन की सीमा पर सिक्किम की चुंबी घाटी पर.
- 4545 मीटर ऊंचाई .
- 550 किमी कोलकाता से.
- 460 किमी तिब्बती राजधानी ल्हासा से.

शुरुआत

- पहले 5 साल के लिये खुलेगा.
- 1 जून से 30 सितंबर तक खुलेगा हर साल
- सोमवार से गुरुवार ही खुलेगा
- सुबह 7.30 से दोपहर 3.30 तक

तब

- 19 वीं सदी से दोनों देशों के बीच कारोबार.
- 1000 घोड़े और टट्टू के साथ 700 लोगों की आवाजाही.
- भारतः कपड़े, तंबाकू, पेट्रोल, घड़ियां और टूटी-फूटी कारें
- चीनः कॉटन, पशु उत्पाद और याक की पूंछें.

अब

- 44 चीजों के व्यापार पर राज़ी
- 29 चीजों का निर्यात भारत करेगा
- 15 चीजों का निर्यात करेगा चीन

भारत का निर्यात

कृषि उत्पाद, कंबल, तांबे का सामान, कपड़ा, साइकिल, कॉफी, चाय, चावल, आटा, मेवे, सूखी और ताज़ी सब्जियां, वनस्पति तेल, गुड़ और मिश्री, तंबाकू, सिगरेट, सौंफ, मसाले, जूते, केरोसिन, स्टेशनरी, बर्तन, गेहूं, शराब, दूध के उत्पाद, डिब्बाबंद खाना, जड़ी-बूटियां, ताड़ का तेल, बाजरा और हार्डवेयर.

चीन का निर्यात

भेड़ और बकरी की खाल, ऊन, कच्चा रेशम, याक की पूंछ, याक बाल, चीनी मिट्टी, बोरेक्स, मक्खन, नमक, कश्मीरी बकरी, घोड़े, भेड़ और बकरी.

उम्मीदों का कारोबार

- 2010 तक 353 करोड़ रुपये
- 2015 तक 450 करोड़
- 2020 तक 574 करोड़

दिए गए हैं। भारत की ओर शेराथांग को भारत चीनी सीमा व्यापार का केंद्र बनाया गया है। सीमा से करीब 30 किलोमीटर दूर तिब्बती क्षेत्र में रेनद्दिंग गांय को द्विपक्षीय व्यापार केंद्र बनाया गया है। विश्व के सबसे ऊंचे इन दो व्यापार केंद्रों में सभी प्रकार की आधुनिक सुविधाएं प्रदान की गई हैं। बैंकिंग सुविधा, इंटरनेट कैफे, टेलीफोन एक्सचेंज और विश्राम के लिये भी सुविधाएं उपलब्ध कराई गई हैं। इस दुर्गम और ऊंचे क्षेत्र में इन सुविधाओं की बहाली वाकई में एक कठिन काम था।

नाथू-ला के दोबारा खोले जाने से दो सर्वाधिक जनसंख्या वाले देशों के बीच द्विपक्षीय व्यापार में ज़बरदस्त तेजी आने की संभावना है। इससे चीन को कालांतर में, हिंद महासागर में सीधे पहुंचने का मार्ग मिल जाएगा। तिब्बत के ल्हासा से सिक्किम की राजधानी के बीच की दूरी कुल 590 किलोमीटर है। वहां से बांग्लादेश, भूटान और नेपाल के बाज़ारों तक आसानी से पहुंचने के अलावा पश्चिम बंगाल और शेष भारत भी चीनी वस्तुओं के लिये सरलता से उपलब्ध हो सकेंगे। समुद्र मार्ग से होने वाले व्यापार की तुलना में यह मार्ग न केवल छोटा और सरल होगा, बल्कि परिवहन लागत कम होने से लोगों को भी चीजें कम मूल्य पर मिल सकेंगी। ल्हासा से नेपाल के रास्ते कोलकाता की दूरी करीब 2,000 किमी है, जबकि नाथू-ला के रास्ते यह कुल 1,400 किमी है। इस तरह, तिब्बत को कोलकाता बंदरगाह से जुड़ने की जो संभावना दिख रही है, उससे इस समूचे क्षेत्र में व्यवसाय के अनंत साधन और स्रोत लोगों को उपलब्ध हो सकेंगे। दोनों देशों के बीच व्यापार में ज्यामितीय वृद्धि के साथ क्षेत्रीय लोगों की आर्थिक स्थिति और जीवनस्तर में सुधार की संभावनाएं उज्ज्वल प्रतीत हो रही हैं। पश्चिम बंगाल के मुख्यमंत्री बुद्धदेव भट्टाचार्य ने भी कहा है कि 1962 से बंद पड़े नाथू-ला व्यापारिक मार्ग के दोबारा खोले जाने से सिक्किम और प. बंगाल के अलावा समूचे पूर्वोत्तर क्षेत्र की आर्थिक व्यवस्था को लाभ पहुंचेगा। दूसरी ओर सिक्किम के मुख्यमंत्री चामलिंग को आशा है कि इस मार्ग के खुल जाने से पर्यटन के क्षेत्र में भी संभावनाएं उज्ज्वल दिखाई दे रही हैं। उन्होंने केंद्र सरकार से मांग भी की कि चीनी व्यापारियों को सिक्किम का भ्रमण करने की अनुमति दी जाए। उन्होंने भविष्य में ल्हासा और गंगटोक के बीच बस सेवा शुरू किए जाने की संभावना भी जताई। श्री चामलिंग ने कहा कि यह उनका स्वप्न है और वे शीघ्र ही इसे साकार होते देखना चाहेंगे। भारत चीन को हिमालय के दक्षिण में व्यावसायिक प्रभुत्व फैलाने से नहीं रोक सकता। अत: उसे भी हिमालय के उत्तर में अपना ऐतिहासिक व्यावसायिक प्रभुत्व पुनर्जीवित करना होगा।

नाथू-ला वास्तव में समूचे दक्षिण एशिया के लिये एक सबक की तरह है। सीमाओं को विचारों, लोगों और सामग्रियों के मिलन बिंदुओं के रूप में देखा जाना चाहिए न कि विभाजन रेखाओं के रूप में। दुआ है कि नाथू-ला दक्षिण एशिया में सीमाओं की इसी रचनात्मक व्याख्या की प्रक्रिया का शुभारंभ कर सके। ❑

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं)

नाथू-ला सिल्क रूट का इतिहास

1815-1865: तत्कालीन ब्रिटिश शासकों द्वारा सिक्किम, भूटान और नेपाल के इलाकों पर कब्ज़े के बाद नाथू-ला के जरिये हिमालय के आरपार व्यापार की शुरुआत।

दिसंबर 1893: सिक्किम और तिब्बत के बीच ल्हासा और कलिमपोंल के रास्ते व्यापार की सहमति।

सितंबर 1904: ब्रिटिश और तिब्बती प्रशासन के बीच ग्यान्स्ते और गरतोक (तिब्बत) में व्यापार मंडियों की स्थापना के बारे में समझौता।

नवंबर 1904: चीन और ग्रेट ब्रिटेन के बीच तिब्बत और सिक्किम के बीच सीमा व्यापार संबंधी समझौते पर हस्ताक्षर।

अक्तूबर 1962: भारत-चीन युद्ध के बाद सीमा व्यापार बंद। नाथू-ला सहित सभी दर्रों से व्यापार आवागमन बंद।

1988: राजीव गांधी की चीन यात्रा। तिब्बत पर चीन के अधिकार की पुष्टि।

1992: ज्योति बसु द्वारा ल्हासा कलिम-पोंग के मार्ग को खोले जाने के अभियान की शुरुआत।

1993: पी.वी. नरसिंह राव का चीन दौरा। सीमा-व्यापार वार्ता की शुरुआत।

2003: अटल बिहारी वाजपेयी की चीन यात्रा के दौरान व्यापार के लिये नाथू-ला को दोबारा खोले जाने पर समझौता।

जून 2006: रक्षा मंत्री प्रणव मुखर्जी की चीन यात्रा के दौरान 6 जुलाई, 2006 से सीमा व्यापार के लिये नाथू-ला को खोले जाने के समझौते पर हस्ताक्षर।

6 जुलाई, 2006: नाथू-ला खुला, व्यापार शुरू।

ख़बरों में

- केंद्र ने नाल्को (नेशनल एल्युमीनियम कंपनी) और नेवेली लिग्नाइट कॉरपोरेशन (एनएलसी) के 10 प्रतिशत शेयरों की बिक्री की अनुमति दे दी है। यह फैसला प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह की अध्यक्षता में हुई आर्थिक मामलों की मंत्रिमंडलीय समिति (सीसीईए) ने किया। विनिवेश के बाद नाल्को में सरकार की हिस्सेदारी गिरकर 77.15 प्रतिशत और एनएलसी में 83.56 प्रतिशत रह जाएगी। वर्तमान मूल्यों के आधार पर नाल्को के विनिवेश से 1,400 करोड़ रुपये तथा एनएलसी से 1,200-1,300 करोड़ रुपये प्राप्त होने की संभावना है।

- पोलियो को समाप्त करने के लिये व्यापक अभियान चलाने हेतु आर्थिक मामलों की मंत्रिमंडलीय समिति ने 2006-07 में पोलियो उन्मूलन कार्यक्रमों के कार्यान्वयन के लिये 1,039 करोड़ रुपये की धनराशि को मंजूरी प्रदान की है।

- वित्तीय क्षेत्र द्वारा प्रदत्त सुअवसरों और सेवाओं का अति संवेदनशील स्टराटा सोसाइटी के एक बड़े समूह के बहिष्कार से चिंतित सरकार ने 'वित्तीय समावेश' की रणनीति तैयार करने के लिये एक समिति का गठन किया है। प्रधानमंत्री की आर्थिक सलाहकार परिषद के अध्यक्ष सी. रंगराजन की अध्यक्षता में 10 सदस्यीय समिति अपनी रिपोर्ट 30 नवंबर तक प्रस्तुत कर देगी।

- केंद्र के एक महत्वपूर्ण नीतिगत फैसले के तहत सुरक्षा मामलों की मंत्रिमंडलीय समिति ने समूची भारत-चीन सीमा पर 608 किमी के सड़क नेटवर्क के निर्माण को मंजूरी दे दी है। उसने सीमा सड़क संगठन से इस निर्माण कार्य को 912 करोड़ की लागत से छह वर्ष में पूरा करने को कहा है।

- भारत-अमरीका परमाणु समझौता अमरीकी सीनेट के एक महत्वपूर्ण पैनल की स्वीकृति से अमरीकी संसद की मंजूरी के और करीब पहुंच गया है। ऐसा निचले सदन की एक समिति द्वारा जबरदस्त बहुमत से इसे मंजूरी देने के बाद संभव हुआ है।

- भारत और पाकिस्तान ने जम्मू-कश्मीर में पुंछ और पाकिस्तान के कब्जे वाले कश्मीर में रावलकोट के बीच एक नयी बस सेवा शुरू की है। अप्रैल 2005 में श्रीनगर-मुज़फ्फराबाद बस सेवा शुरू करने के बाद यह दूसरा बस मार्ग है। इससे विभाजित परिवारों को पुन: संपर्क स्थापित करने में मदद मिलेगी। यह बस 47 किमी की दूरी तय करेगी जिसमें 10 किमी का रास्ता भारत में है।

- लग्जमबर्ग स्थित विश्व की दूसरी सबसे बड़ी स्टील निर्माता कंपनी आर्सेलर ने हॉलैंड के राटर्डम में स्थित मित्तल स्टील का विलय का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया है।

- भारत में रिलायंस उद्योग की सबसे बड़ी निजी क्षेत्र की कंपनी रिलायंस उद्यम और हरियाणा सरकार ने हरियाणा में एक बहु-उत्पाद विशेष आर्थिक क्षेत्र की स्थापना के लिये एक समझौते पर हस्ताक्षर किए हैं। 40,000 करोड़ रुपये के निवेश के साथ 25,000 एकड़ क्षेत्र में फैला भारत का यह सबसे बड़ा विशेष आर्थिक क्षेत्र होगा।

- आईटीसी ने पश्चिम बंगाल में 1,000 करोड़ रुपये के निवेश की कई योजनाओं की घोषणा की है। इसमें होटल क्षेत्र के लिये 350 करोड़ रुपये का निवेश शामिल है।

- आंध्र प्रदेश ग्रामीण रोज़गार गारंटी योजना के कार्यान्वयन के बारे में जनता को सभी सूचनाएं एक विशिष्ट वेबसाइट के जरिये उपलब्ध कराने वाला देश का पहला राज्य बन गया है।

- पंजाब सरकार ने पेट्रोलियम उत्पादों, बिजली और शराब को छोड़कर 1 सितंबर, 2006 से सभी वस्तुओं पर से चुंगीकर हटाने का फैसला किया है। ❑

इंसानियत के अस्तित्व की अमर कथा

○ अंशु गुप्ता

पुस्तक का नाम : माटी मेरे देश की; **लेखक :** वी. एस. नायपॉल; **अनुवादक :** रमेश बैनर; **प्रकाशक:** प्रभात प्रकाशन, दिल्ली; **प्रथम संस्करण :** वर्ष 2005; **मूल्य :** 250 रुपये

समकालीन विश्व में अनेक कथाकारों तथा उपन्यासकारों ने अपनी लेखनी के माध्यम से औपन्यासिक जगत में एक नयी क्रांति का सूत्रपात किया। इन लेखकों ने अपने-अपने उपन्यासों में इंसानियत की मर्यादाओं उसके अस्तित्व का संकट, आदर्श और यथार्थ की तलाश आदि विषयों पर अपनी अभिव्यक्ति को लिपिबद्ध कर पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया। इस अर्थ में नोबल पुरस्कार से सम्मानित वी.एस. नायपॉल की *माटी मेरे देश की* नामक पुस्तक नये कलेवर, विचार एवं मानवीय संवेदना से ओत-प्रोत पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत है। यह उनके अंग्रेजी पुस्तक *मैजिक सीड्स* का हिंदी रूपांतर है।

इसे एक ऐसे दुर्लभ उपन्यास की श्रेणी में रखा जा सकता है जिसमें जीवन की राह में भटकने की कोई गुंजाइश नहीं छोड़ी गई है।

जीवन के महान लक्ष्यों एवं सिद्धांतों को लेकर बहस छेड़ने वाला यह उपन्यास लेखक के समुद्र पार की विशाल परिधि में फैले अनुभवों की गहराई का लेखा-जोखा प्रस्तुत करता है। लेखक के भीतर यह अंतरद्वंद्व स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है कि वह अपनी मातृभूमि को महान माने या उसे महान माने जहां उसने अपने जीवन के लगभग साठ वसंत बिताए हैं। अंतरतम की व्यथा को संजीदगी के साथ ऐतिहासिक पक्षों के साथ तारतम्य बिठाने तथा विश्व में सद्भावना की क्रांति का जनक माने जाने वाले इस उपन्यास को ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक उपन्यास की संज्ञा से नवाज़ा जा सकता है।

परंपरा, इतिहास, आधुनिकता और सकारात्मक सोच के बीच अद्भुत विमर्श को नये अंजाम तक पहुंचाने वाला यह उपन्यास विवेक की कसौटी की अंतिम परिणति है। उपन्यासकार को विश्व में ऐतिहासिक तथ्यों से उपजने वाले विवादों पर केवल दुख ही नहीं अपितु आत्मग्लानि भी होती है। लेखक का मानना है, कहीं तो गुलाब के फूल के द्वारा प्रेम दर्शाने का कार्य किया जा रहा है और कहीं पर गुलाबों की पंखुड़ियों के साये में आतंकवाद का जन्म भी हो रहा है। लेखक विश्व में हो रहे चमत्कारी परिवर्तनों के दौर को अब तक का सबसे बड़ा विस्मय मानता है और उसे इसका अफ़सोस भी है कि आतंक का आतर्नाद एवं चीख-पुकार का स्वर भी उसके कानों में गूंजता रहता है। लेखक को इस बात का भी भान है कि भारत में भी संपूर्ण विश्व की तर्ज़ पर जाति, नस्ल, रंग आदि का चारों तरफ बोलबाला हो रहा है। लेखक को विश्व के काले और गोरे के बीच होने वाले ज़ेहाद का भी आभास है।

उपन्यासकार इस पुस्तक में भाषा वैज्ञानिक की शैली में महत्वपूर्ण शब्दों के अर्थ को एक नूतन अंदाज में रेखांकित करते हुए कहते हैं कि यह आवश्यक नहीं कि जो महत्वपूर्ण हो वह शक्तिमान भी हो, क्योंकि उनके मत से 1915-16 के दौरान लेनिन एक शक्तिमान व्यक्ति नहीं थे लेकिन महत्वपूर्ण व्यक्ति थे। लेखक के अनुसार महत्वपूर्ण व्यक्ति वह होता है जो इतिहास की धारा को एक नया मोड़ दे। कहने का तात्पर्य है कि इतिहास कायम करने वाले बहुत लोग मिल जाएंगे लेकिन विश्व का भूगोल बदलने वाले लोगों की संख्या नगण्य होती है या बिल्कुल ही नहीं होती। लेखक की दृष्टि में समूची वसुधा एक कुटुंब के समान है और उसकी संस्कृति भी उसी का अंग है। उपन्यासकार का मन उस नाविक की तरह है जिसको यह पता है कि यदि हम ज़रा-सा भी इधर-उधर भटके तो हमारी पूरी की पूरी अंतरमन की वेधशाला डूब कर अकाल मौत की शिकार हो जाएगी। गांधी जी के सत्य और अहिंसा के सनातन सिद्धांत को उपन्यासकार ने दुनिया के बेहतर भविष्य के लिये संजीवनी बूटी के समान माना है। लेखक को इस बात का आभास है कि गांधी के द्वारा बताए गए सिद्धांतों के बगैर हम अखंड विश्व को एकता का पाठ पढ़ाने तथा सांप्रदायिक भेदभाव, भाईचारा, सर्वधर्म समभाव के साथ नहीं जोड़ सकते। लेखक इससे भी दुखी है कि आज विश्व में धन, ऐश्वर्य और वैभव के लिये माथापच्ची चल रही है। लेखक की चिंता का एक प्रमुख

कारण यह भी है कि इस सृष्टि में रहने वाले जीवों में रहन-सहन में भेद क्यों है। कहीं पर दिन की शुरुआत शराब से होती है तो कहीं आध्यात्मिक, आंतरिक योग की साधना से।

विभिन्न शीर्षकों में विभाजित इस उपन्यास में इंसानी जीवन शैली की ऐसी मर्मस्पर्शी दास्तान प्रस्तुत की है जो पाठक को अपनी संस्कृति के साथ-साथ अपनी माटी के प्रति स्वाभाविक रूप से होने वाले प्रेम के प्रति बरबस आकर्षित करता है।

अपनी मातृभूमि के प्रति लोगों की भावनाओं का जो ज्वार उमड़ता है उसकी गति समुद्र में आने वाले ज्वार-भाटे से भी अधिक होती है। एक कहावत भी है कि दूसरे देश में जाकर ही हमें अपने देश की पहचान होती है। उपन्यास के मध्य में पाठक को लेखक की शैली में और अधिक आक्रामकता दिखाई पड़ती है। किसी उपन्यास में प्रस्तुतीकरण एवं रोचकता का ऐसा प्रवाह बहुत कम देखने को मिलता है। उपन्यासकार विभिन्न पात्रों के माध्यम से जंगली जीवन शैली को अपनी यात्रा में साथी बनाता हुआ चलता है। पाठक को यह मालूम होता है कि उपन्यासकार की दृष्टि केवल व्यक्तिपरक न होकर संपूर्ण चर-अचर जीवों के लिये भी है।

यह उपन्यास समर्पण और समन्वय का ऐसा दस्तावेज़ है जिसमें मानवता के प्रति उसकी आकुलता एवं भावुकता के दर्शन होते हैं। भावनाओं के ज्वार में बहता हुआ लेखक अपने अकेलेपन की दुहाई देता हुआ कहता है कि अकेलापन मनुष्य को ऐसी टीस देता है जिससे वह स्वयं तो जूझता ही है, आसपास के लोग भी उससे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकते।

उपन्याय के मध्य का पड़ाव 'पाप से घृणा करो पापी से नहीं' कहावत पर आधारित है। उसकी दृष्टि में पाप कोई पापी से घृणा करने का मानदंड नहीं होता क्योंकि उसके जीवन में कभी भी परिवर्तन हो सकता है। इतिहास में कई ऐसे उदाहरण मौजूद हैं जब जीवन के अंतिम पड़ाव पर खूंखार डाकू अपने पेशे को छोड़कर दूसरे पेशे में आ गए और उनकी जीवनशैली से एक युग का सूत्रपात हुआ। जो व्यक्ति परिस्थितियों के अनुरूप स्वयं को नहीं ढालता, लेखक की दृष्टि में उस व्यक्ति का अपना कोई अस्तित्व नहीं रहता। संसार के खट्टे-मीठे अनुभवों को समेटता हुआ लेखक जिंदगी के ऐसे मोड़ पर पहुंचता है जहां पर वह पाप-पुण्य, शुभ-अशुभ, जय-पराजय, लाभ-हानि इन सब से ऊपर उठ जाता है और उसकी जीवन शैली में गांधीवाद के क्षमादान के सिद्धांत का आविर्भाव हो जाता है।

उपन्यास के आखिरी पड़ाव में लेखक दार्शनिक अंदाज में पात्रों के माध्यम से अपनी उपस्थिति दर्ज़ कराता है। लेखक की दृष्टि में अपने से हारा प्रत्येक व्यक्ति तथा जुए में हारा हुआ व्यक्ति अपने-आप से यही कहता है, मेरे साथ जो कुछ भी हुआ उससे मैं सतुंष्ट हूं। मैंने जो कुछ भी किया उसे नेक इरादों के साथ किया। लेकिन मेरे इस विचार से लोग कहां सहमत होंगे। अपने-आपसे कहते हुए ये दर्दनाक वाक्य इस उपन्यास की नायिका के हैं जिसने अपने स्वार्थ की अति लोलुपता में स्वयं के साथ देश की अस्मिता को डुबो दिया। उपन्यास की नायिका की हैसियत से मैंने जो कुछ सोचा-समझा और पाया उसी के अनुरूप किया। लेकिन यदि इससे किसी का दिल टूट जाता है तो मेरा कोई दोष नहीं। उसी के शब्दों में, "फिलहाल मेरे पास इससे अधिक कहने को कुछ नहीं है। मैंने जो कुछ लिखा है, उससे तुम यह विश्वास नहीं करोगे कि मेरा दिल टूट रहा है।"

यह उपन्यास बौद्धिक आनंद का ऐसा असीम उत्कर्ष प्रस्तुत करता है जो न कभी सोचा, न विचारा और न देखा गया। इसके संवाद पाठकों के हृदय की गहराई को छूते हुए आगे बढ़ते हैं। यह उपन्यास अनुभूतियों की कसमसाहट को सहज महसूस कराने वाला एक महत्वपूर्ण दस्तावेज़ है। यह उपन्यास जीवन के विविध अनुभवों तथा सामने घटने वाली घटनाओं का सिलसिलेवार ब्यौरा देने वाली प्रामाणिक कृति है। यह उपन्यास प्रकृति और पुरुष के विवेक से आच्छादित जीवन के शाश्वत मूल्यों एवं सत्यों को बुद्धि की कसौटी पर कसने वाला महानतम उपन्यास माना जा सकता है। प्रस्तुत उपन्यास को बारह अध्यायों में विभक्त किया गया है और प्रत्येक अध्याय का अपना अलग महत्व है। उपन्यास के पूरे कलेवर का जन्म भौतिकतावादी परिवेश से शुरू होता है और धीरे-धीरे बड़ी होती हुई उपन्यास की परिधि जंगल में मंगल की कामना के साथ अपनी पीठिका तैयार करती है। उपन्यास का तीसरा अध्याय जातिवादी प्रथा पर केंद्रित है। उपन्यास के शेष अध्याय अपनी जड़ों को संस्कारित करने की कसौटी को नये अंदाज में प्रस्तुत करने में सफ़ल होते हैं। उपन्यास के अंतिम तीन अध्याय सांसारिकता के ताने-बाने से जुड़ा हुआ, उपनिषद के तत्वबोध की पराकाष्ठा का वास्तुशिल्प है। कुल मिलाकर यह उपन्यास तर्कसम्मत, मस्तिष्क की सक्रियता का ऐसा नमूना है जहां से वास्तविक संसार को समझा और देखा जा सकता है। यह उपन्यास विश्व के विज़न को भाषावाद के सहारे देखने का एक जीता-जागता चिंतन है। लेखक ने अपनी मुक्त शैली में औपन्यासिक संसार के सारे पोशाकों को एक साथ एक मंच पर लाने का प्रयास किया है। पुस्तक पठनीय एवं इसकी छपाई आकर्षक है। इस उपन्यास का अनुवाद करने वाले विद्वान अनुवादक ने भी इसकी आत्मा को संजोए रखने की भरपूर कोशिश की है। उपन्यास पढ़ने से ऐसा नहीं लगता कि यह एक अनूदित कृति है। हमारी अपेक्षा है कि हिंदी के साथ अन्य भारतीय भाषाओं में भी ऐसी उच्च कोटि की कृतियों का अनुवाद किया जाना चाहिए जिससे विश्व में सामासिक संस्कृति को बढ़ावा देने में मदद मिले। ❑

(समीक्षक स्वतंत्र पत्रकार हैं)

RAU'S IAS

A name that Nation trusts

Amazing Success

Our 2005 Exam Results : Nine positions secured by our students in first 20 and 49 in first 100 with overall 203 total selections. As regards the past achievements, Study Circle has contributed nearly one-third of the total selections done for Civil Services by UPSC since 1953.

It is a well known fact that Rau's is the most trusted and recommended name all over the country for IAS & PCS coaching.

Unbeatable Strategy

Answers that matter : The most crucial fact about coaching is that it should improve the quality of your answers in the minimum possible time. It is precisely this training on which we focus on at Rau's to give an extra edge to the answers you give / write in the Civil Services Examination.

Be Sure

We have no branches or associates any where in India except Jaipur. Our name which has become a legend among students for the highest standards in teaching, and hence has been copied by a lot of people across India, but no one can match our quality.

Programme Highlights

Civil Services/PCS Exam - 2007

- Personal Guidance (English Medium) is available for -
  General Studies/ Essay, History, Sociology, Public Administration, Geography, Psychology, Law & Commerce.
- पर्सनल गाइडेंस (हिन्दी माध्यम) -
  सामान्य अध्ययन / निबंध, इतिहास, भूगोल, समाजशास्त्र एवं लोक प्रशासन में उपलब्ध।
- Postal Guidance in English Medium available for -
  General Studies, History, Sociology, Public Administration and Geography.
- पोस्टल गाइडेंस (हिन्दी माध्यम) -
  केवल सामान्य अध्ययन एवं भारतीय इतिहास में उपलब्ध।
- Hostel facility arranged.

कोई भी लक्ष्य बड़ा नहीं ।
जीता वही जो डरा नहीं ।।

If you are taught by the stars, sky is the limit.

Contact personally or write for prospectus with a DD/MO for Rs. 50/- favouring

RAU'S IAS STUDY CIRCLE

309, Kanchanjunga Bldg., 18, Barakhamba Road, Connaught Place, New Delhi-110001.
Phone : 39448880-81, 55391202, 23318135-36, 23738906-07, Fax: 23317153
Jaipur Centre : 701, Apex Mall, Lal Kothi, Tonk Road, Jaipur-302015. Ph.:0141-6450676, 3226167, 9351528027.

For full details on fast-track log-on our website: www.rauias.com

YH-8/6/01

The Original Rau's / Rao's - Since 1953

प्रकाशक व मुद्रक वीणा जैन, निदेशक द्वारा प्रकाशन विभाग के लिए अरावली प्रिंटर्स एंड पब्लिशर्स (प्रा.) लिमिटेड, डब्ल्यू-30, ओखला औद्योगिक क्षेत्र फेस-2, नयी दिल्ली-110 020 से मुद्रित एवं प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, सी.जी.ओ. कांप्लेक्स, लोदी रोड, नयी दिल्ली-110 003 से प्रकाशित। प्रधान संपादक : अनुराग मिश्रा

रजि.सं.डीएल (एस)-05/3231/2006-08 तथा डाक व्यय की पूर्व अदायगी के बिना डाक में डालने के लिए लाइसेंस–प्राप्त पंजी सं. 951/57
Reg. No. D.L.(S)-05/3231/2006-08 Licenced to post without pre-payment at RMS, Delhi. R.N. 951/57

बाजार में उपलब्ध

मूल्य : 130/-

प्रतियोगिता परीक्षाओं में सफलता

एक सम्पूर्ण वार्षिक संदर्भ ग्रंथ के साथ

➡ प्रतियोगिता दर्पण के अतिरिक्तांक योजनाबद्ध, संक्षिप्त, सटीक एवं अद्यतन तथ्यों से परिपूर्ण होते हैं.
–सुश्री मोना प्रूथी
सिविल सेवा परीक्षा, 2005 में प्रथम स्थान

➡ प्रतियोगिता दर्पण की अतिरिक्तांक सीरीज बहुत ही अच्छी एवं लाभदायक है. इसमें प्रारम्भिक परीक्षा से सम्बन्धित सभी जानकारी एक ही स्थान पर एकत्रित मिल जाती है. मैंने भारतीय अर्थव्यवस्था के अतिरिक्तांक का उपयोग किया है तथा इसे बेहद लाभप्रद पाया है. मुझे सम्पूर्ण विश्वसनीय जानकारी एक ही स्थान पर मिल गई.
–सुश्री गुरनीत तेज
सिविल सेवा परीक्षा, 2005 में द्वितीय स्थान

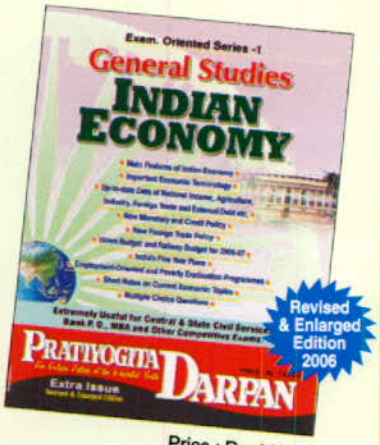

Price : Rs. 140.00

➡ प्रतियोगिता दर्पण के अतिरिक्तांकों की सीरीज का मैंने पर्याप्त उपयोग किया. इनमें एक स्थान पर ही पर्याप्त परीक्षापयोगी अच्छी सामग्री मिल जाने से श्रम की काफी बचत और सुविधा मिलती है.
–ब्रह्मदेव राम तिवारी
सिविल सेवा परीक्षा, 2005 में हिन्दी माध्यम से द्वितीय स्थान

➡ भारतीय अर्थव्यवस्था पर इसका अतिरिक्तांक अत्यन्त व्यापक एवं उच्च कोटि का है.
–प्रदीप कुमार झा
सिविल सेवा परीक्षा, 2005 में 6वाँ स्थान

मूल्य : 145.00 रुपए

मुख्य आकर्षण

- भारतीय अर्थव्यवस्था की प्रमुख विशेषताएं–एक दृष्टि में • महत्वपूर्ण आर्थिक शब्दावली • राष्ट्रीय आय, कृषि, उद्योग, विदेशी व्यापार एवं विदेशी ऋण आदि के अद्यतन आँकड़े • जनगणना-2001 • नई मौद्रिक एवं साख नीति • विदेशी व्यापार नीति : 2006-07 • 2006-07 का केन्द्रीय बजट एवं रेल बजट • दसवीं पंचवर्षीय योजना सहित भारत की समस्त पंचवर्षीय योजनाएं • भारत में संचालित रोजगारपरक एवं निर्धनता निवारण कार्यक्रम • भारत-2006, आर्थिक समीक्षा : 2005-06 तथा प्रमुख केन्द्रीय मंत्रालयों के नवीनतम प्रतिवेदनों पर आधारित महत्वपूर्ण अध्ययन सामग्री • सामयिक आर्थिक विषयों पर संक्षिप्त टिप्पणियाँ • महत्वपूर्ण बहुविकल्पीय प्रश्न.

शीघ्र ही अपने निकटतम पुस्तक विक्रेता से सम्पर्क करें अथवा हमें 100 रु. का मनीऑर्डर भेजकर वी.पी.पी. द्वारा प्राप्त करें.

प्रतियोगिता दर्पण 2/11 ए, स्वदेशी बीमा नगर, आगरा – 282 002 फोन : 2531101, 2530966, 3208693; फैक्स : (0562) 2531940
E-mail : info@pratiyogitadarpan.org **Website :** www.pratiyogitadarpan.org
ब्रांच ऑफिस : 4840/24, गोविन्द लेन, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली – 2 फोन : 23251844, 23251866

YH-8/6/09